लेखक की अन्य रचनाएँ

नाटक

१. सुजाता (पुरस्कृत)	१ ५०
२. वरमाला	१.२५
३. राजमुकुट	१.२५
४. अगूर की बेटी	२.५०
५ अत पुर का छिद्र	१.२५
६. ययाति	१ ७५
७. सुहाग-बिंदी	२.५०

एकांकी-संग्रह

१. विष-कन्या (सचित्र)	४.००

उपन्यास

१. जल-समाधि (पुरस्कृत)	४.००
२. पर्णा (पुरस्कृत)	४.००
३. मैत्रेय	६.५०
४. अनुरागिनी	४.५०
५. प्रतिमा	३.२५
६. मदारी	५ ००
७. जूनिया	४.००
८. तारिका	३.५०
९ एक सूत्र	४ ५०
१० अमिताभ	५ ५०
११ नूरजहाँ	४.५०
१२ चक्रकात	३.००
१३. मुक्ति के बधन	४.००
१४. यामिनी	४ ००
१५ नौजवान	५.००
१६. प्रगति की राह	४.५०
१७ फॉरगेट् मी नॉट	(प्रेस मे)

कहानी-संग्रह

१. एकादशी	
२. सध्या-प्रदीप	
३. फंटा-पत्र (पुरस्कृत)	३.००

आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली-६

तारों के सपने

गोविंदवल्लभ पंत









आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट, दिल्ली

TARON KE SAPNE

a novel

by

GovindVallabh Pant

Rs. 6.50

प्रकाशक

रामलाल पुरी, संचालक

आत्माराम एण्ड सस

काश्मीरी गेट, दिल्ली-६

दो शब्द

दस वर्ष पूर्व बम्बई के प्रवास मे कुछ कड़वे-मीठे अनुभव हुए थे। उनके एक अश पर कुछ सुने, कुछ पढ़े तथ्यो पर कल्पना की परिछाया से गढ़कर मैंने यह उपन्यास लिखा।

इस उपन्यास में आए हुए किसी चरित्र द्वारा किसी व्यक्ति की लाछना लेखक का उद्देश्य नहीं है। न इसके नायक की असफलता ही असफलता समझी जाए क्योकि सफलता असफलता की सीढ़ियो से चढने पर ही प्राप्य है और प्रत्येक असफलता में उतना ही घनिष्ठ सफलता का वेग निहित है।

—*गोविंदवल्लभ पंत*

पात्र-परिचय

भानुदेव शर्मा उर्फ भन्नन जी	हिंदी के उपन्यास-लेखक। दो दर्जन पुस्तकें लिखने पर भी जब उनकी आर्थिक दशा न सुधरी तो सिनेमा को सोने की खान समझ वहाँ हाथ मारने बम्बई को प्रस्थान किया। भारतीय रहन-सहन छोड कर तरह से साहबी ठाट बनाया। कहानी को रस-सिक्त करने के लिए प्रेम का पाठ भी पढना आरम्भ किया। पर ?
भग्गो	भन्नन जी की श्रीमती, सीधे-सादे स्वभाव की। जिसने जो कह दिया उसी का विश्वास कर लेने वाली। भन्नन जी ने जब सिनेमा की अतिरंजना कर वहाँ से सम्पत्ति की लूट का सपना उसे दिखाया तो राह-खर्च के लिए उसने उन्हें अपनी सोने की जंजीर दे दी।
हरीश	बेनू प्रोडक्शन के मालिक श्री बेनू का बैरा। कभी एक्टरी में भर्ती हो जाने की आशा में। बेनू साहब और उनके प्रेम-पात्रो के नखरो का भी बोझ ढोता—उस जीवन के एकमात्र सुनहरी सपने की साकारता की खातिर। आठ बजे के बाद सुबह उठनेवाला। रात की कुछ न पूछिए। पैसे की बचत के लिए चाय के साथ रोटी खाता और समय की बचत के लिए खिचडी उबालता। दोनो की बचत के लिए छटाँक-आधपाव मूंगफली छील दिन काट देता।

कौशल	हरीश के गाँव का साथी । एक सिंधी कपडे के व्यापारी के दफ्तर में चपरासी, घर पर मोटर का क्लीनर और बाजार का सौदा-पत्ता लानेवाला। सिंधी सेठ के लडके ने अग्रेजी पढ लेने पर दफ्तर की रेकार्ड-कीपरी उसे देने का वचन दिया था। इसी से दिन-रात, रेल-ट्राम, घर-बाहर वह अग्रेजी-अग्रेजी की ही रट लगाता । वह हरीश के साथ बेनू प्रोडक्शन के ऑफिस से संलग्न एक किचन में रहता था।
प्रेम	वह भी हरीश के गाँव का था, एक पारसी सेठ के लोहे के कारखाने में फिटर का काम करता था। सुबह से शाम तक लोहे की कठिनाई से खेलने वाला। ओवरटाइम भी करता और इतवार को भी नागा न करनेवाला। कौशल और हरीश से अधिक वेतन पाता, पर उनसे दबकर रहता क्योंकि वह हरिजन था। समाज और नौकरी की कठिनाइयाँ उसके स्वास्थ्य पर टूट पडी।
·किरसन जी	म्यूजिक डायरेक्टर, डास मास्टर, एक्स्ट्रा सप्लायर भी। करीम चाचा की दृष्टि मे—'पूरा चार सौ बीस! वह साला मिरासी, कभी किसी का सूट चुरा लाता, कभी कही से उधार लाता। जिसका उधार लेता, लौटाने का नाम नही। जिससे दोस्ती करेगा, उसी की जड काटेगा।' कोई ठीक-ठीक जानता न था वह कहाँ का था। भारत की अधिकाश भाषाएं बोलता, अंग्रेजी भी। कहता—'फ्रेंच और रूसी भी आती है।' उसका पहला दाँव हर जगह चल जाता, फिर पोल खुल जाती।

सरिता अपनी खूबसूरती,स्वास्थ्य और टेपर को कायम रखने के लिए लम्बे-चौडे आयने के सामने रोज रात को नाचती थी। रजतपट की एक प्रसिद्ध अभिनेत्री—सुधीर उसका प्रेमी था, उसी के साथ वह पार्ट किया करती थी। उसके पाकिस्तान चले जाने के कारण अब वह किसी दूसरे के साथ किसी लालच पर पार्ट करने को राजी नही होती। बेनू प्रोडक्शन के आॅफिस में जो सुधीर की फोटो लगी है, सरिता कभी-कभी नीद मे वहाँ जाकर उसकी पूजा-आरती भी करती है। भन्नन जी को छत पर सरिता की नृत्योल्लसित चापें सुनाई देती थी। उस ध्वनि के सहारे उनका उस पर प्यार हो गया। फिर ?

करीम चाचा सिर-दाढी के बाल आधे से अधिक सफेद, ढीली बाँह का सफेद कुरता, ढीला पाजामा, एक पुल-ओवर पहनते। पान बहुत खाते। सिनेमा की दुनिया के बड़े पुराने घिसे हुए, एक-एक एक्टर-एक्ट्रेस, डायरेक्टर-प्रोड्यूसर-टेकनीशियनो के इतिहास का परिचय रखनेवाले। कई फिल्म कंपनियो में विश्रांति-गृहो के ठेकेदार। बेनू साहब के किचन मे उनकी चाय और नाश्ते की देखभाल करनेवाले।

इनके अतिरिक्त गोपाल—रेस्तोरावाला,मुशी दिलतोड—गीत लेखक,गोवर्धन और मजनू—स्टोरी रायटर, दयालभाई—न्यू टॉकीज और न्यू स्टूडियो के प्रोप्राइटर, बद्री—बैक ग्राउड सीन पेंटर, मोती बाई उपनाम मोटी बाई, कलाबाला—नृत्यागना, टेलर मास्टर, उनकी मास्टरनी, कैमरामैन, ट्राली-मैन, लाइटवाले, आॅफिस बॉय, दरबान आदि।

एक

श्री भन्नन जी ने हिंदी में जब दो दर्जन उपन्यास लिख डाले और उनकी आर्थिक दशा साधारण ही रह गई तो उनके मित्र राम बाबू ने एक दिन उनसे कहा—"पंडित जी, अगर आप सिनेमा के क्षेत्र मे चले जायें तो साल-भर के भीतर ही आपकी सारी दशा बदल जाय। वहाँ बे-हिसाब पैसा है।"

भन्नन जी बोले—"बात तो बडी ठीक है, लेकिन जाऊँ कैसे ?"

"क्या कोई आर्थिक कठिनाई है ?"

बडी लापरवाही की हँसी हँसकर उन्होने कहा—"नही, ऐसा तो नही। पर अपने-आप कैसे जाऊँ ? मै साहित्यिक हूँ, बडा भारी आत्म-सम्मान रखता हूँ, और ये सिनेमावाले—इनका आदर्श ही क्या है ?"

"कैसा आदर्श ?"

"ये बडे ढीले-ढाले लोग है, तीव्र जीवन व्यतीत करते है। इसी कारण उनके द्वारा उपस्थित की गई कला देश की भलाई नही कर रही है।"

"तब उनके सुधार के लिए जाना क्या आपका कर्त्तव्य नही है ?"

"वे हरगिज मेरी बात नही सुनेगे।"

"अगर आपके भीतर प्रतिभा होगी तो सदैव और सर्वत्र ही उसका समादर होगा।"

"ये पैसा कमानेवाले, साहित्यिक को कब मुंह लगाते है ?"

"विदेशो के साहित्यिको की प्रतिभा क्या सेलुलॉइड से होकर ससार में प्रसारित नही हुई ?"

"लेकिन अभी हिंदी के दुर्दिन नही गए।"

"हिंदी आज एक सशक्त राष्ट्र की भाषा है।"

"बहुत लोग इस बात को नही मानते।"

"यह आप लेखको की कमजोरी है। आप उनको इस बात के मानने के लिए क्यो नही विवश करते ?"

भन्नन जी कुछ आशा मे भर सिर खुजाते हुए बोले—"वे लोग कैसे मान लेगे ? मैंने सुना है, जिन लोगो के हाथ मे सिनेमा का व्यवसाय है, तथा जो उसके कलाकार है, वे सर्वथा हिदी भाषा से शून्य है।"

"वे तुम्हारा लेख नही पढ सकते, बोली तो समझ लेगे। एक हद तक उनकी बात क्या गलत है ? पैसा कमाना उनका उद्देश्य होगा ही, खर्च भी बहुत करना पडता है उन्हे। अगर वे अधिक-से-अधिक लोगो को अपनी फिल्म से आकृष्ट करते हैं, क्या बुरा है ? साहित्यिक की कला भी तो घर-घर पहुँच जायगी, सिनेमा इस युग का सर्वोत्कृष्ट प्रचार और शिक्षा का माध्यम है। संसार की तमाम कला, साहित्य और विज्ञान उसमे आ-कर एक हुए हैं।"

भन्नन जी सिनेमा की तरफ आकृष्ट न हो, ऐसी बात न थी।

राम बाबू कह रहे थे—"मैं कभी उपन्यास नही पढता। इसलिए नहीं जानता आपके उपन्यासो के चरित्र कैसे हैं ? मनुष्य की रस-प्रिय प्रकृति की खुली लूट बहुत-से लेखक भी करते हैं। क्या आपने उस मार्ग को नही पकडा है ? क्या लेखक अपनी किताबो की बिक्री नही चाहता ?"

"मैं कोरे आदर्श का पाखड नही रचता। वास्तविकता का अकन करता हूँ। उसके लिए कोई मुझे दोष नही दे सकता। दोष द्रष्टा के कलुष का है। चित्रकार ने जैसा देखा, वैसा बना दिया। फिर वह क्यो दोषी हो?"

"तब तुम सिनेमा को क्यो गाली देते हो? वह तो सेंसर की कैंची के बीच से होकर आता है और तुम्हारी किताब बेखटके—"

"वह भी तो प्रेस में दबकर आती है।" हँसते हुए भन्नन जी बोले—"कुछ सहायता कर दीजिए तब मेरी।"

"सहायता कैसी?"

"मेरी उपन्यास कला के बारे में दो-चार लेख छपा दीजिए अखबारो में।"

"छी छी यह भी कोई उपाय हुआ? कोई सहायता हुई?"

"ऐसा सभी करते हैं। यह विज्ञापन का युग है। बिना विज्ञापन दिए कौन किसी का मूल्य समझता है?"

"साहित्य और कला एक मानसिक विकास है। इस बाहरी रग पोतने से उस भीतरी चमक का क्या सम्बन्ध है?"

"कुछ विज्ञापन तो देना ही पडेगा। सिनेमावाले खर्च का बहुत बडा प्रतिशत विज्ञापन मे लगा देते है।"

"लेकिन विज्ञापन का आधार झूठ नही है। ससार में सच्चा लेबुल ही प्रसिद्ध होता है। कच्ची हाँडी दूसरी बार नहीं चढ सकती। झूठे प्रचार से क्या यह उचित और वाछनीय नही है कि तुम कला की असली ज्योति को प्राप्त करो। सूर्य दीपक से प्रकट नही होता, सुवर्ण के लिए किसे ढोल पीटने पडते है?"

"जिस क्षेत्र मे मुझे कोई नही जानता, वहाँ कुछ तो कहना ही पडेगा। आप मेरे हिताकाक्षी और मित्र हैं। आपको ही मेरे बारे में क्या मालूम है?"

"हाँ, मुझे उपन्यासो से प्रेम नही है।"

"पिछले बीस सालो से लिख रहा हूँ मै। मेरी भावना में गहरी अनुभूति है, ऊँचाई है, उडान है। मेरी भाषा परिमार्जित हैं, उसमे प्रौढता है—प्रवाह है। मेरे कथानक बिलकुल मौलिक, मानवी और मनोवैज्ञानिक हैं। पाठको को वास्तविक जगत मे मेरे पात्रो से भेंट होती है। उनका सघर्ष और अतर्द्वन्द्व मेरी कला की जान है। मेरी किताबे कम नही बिकती हैं। यह प्रकाशको का घोर अत्याचार है, जो मैं इस तरह पीस दिया गया हूँ।"

"अपनी असफलता को दूसरो पर लाद देनेवाला तब तक सफल नही हो सकता, जब तक वह कारण को अपने ऊपर ही उद्भूत नही समझता।"

भन्नन जी ने अवसन्न होकर मित्र के इस कटाक्ष को सुना और वे गहरी विचार-धारा मे डूब गये।

मित्र बोले—"अपने दोस्तो से झूठी सिफारिश कराकर किसी की कला नही बढती। बढ भी जाय तो एक सीमित वृत्त और छोटी-सी अवधि तक। सब दिन और सब स्थानो के लिए सच्ची कला ही स्थिर और ऊँची रह सकती है। इसलिए बनावट छोडकर असली बात को पकडना चाहिए।"

"यह आपकी शिक्षा करीब-करीब ठीक ही है।"

"करीब-करीब क्यो अक्षरश ठीक है। साहित्य एक साधना और तपस्या है। इसमे यदि विचारो की उच्चता और भावना की शुद्धि का प्रयोग न होगा तो कदापि वह दैवो प्रेरणा न मिल सकेगी।"

"अच्छा आपकी बात का एक-एक अक्षर मुझे स्वीकार है। लेकिन कोई तरकीब तो बताओ जिससे सिनेमा के भीतर प्रवेश पा सकूँ।"—भन्नन जी ने साग्रह पूछा।

"बम्बई जाओ, वहाँ दो सौ से अधिक प्रोड्यूसर है। ऐसी बात नही है कि वे सब-के-सब दूषण ही हैं। भलाई-बुराई सभी जगह लगी हुई है। मै तो नही समझता कि साहित्य मे भी सब-के-सब भूषण ही हैं। दुर्बलता मनुष्य की छाया-संगिनी है। अपनी दुर्बलता को पहचानो और

उससे घृणा करो—वह स्वय ही चली जायगी । अपने सुगुणो का विकास करो, पर उनका गर्व नही ।"

भन्नन जी बोले—"मित्र, आप मतलब पर से हट गए, ऐसा ही करूँगा मै । लेकिन बम्बई जाकर क्या करूँ ?"

"वहाँ सच्ची लगन से हर प्रोड्यूसर के द्वार खटखटाओ, तुम जिसके योग्य होगे—अवश्य ही उस स्टूडियो के द्वार तुम्हारे लिए आप-से-आप खुल जायेगे ।"

मित्र की वाणी मे बडा प्रोत्साहन पाकर भन्नन जी की बाँछें खिल गईं । वे चिल्ला उठे—"सच ?"

"अधिक अनुभव तो मुझे नही है, लेकिन एक साधारण सत्य मैने तुमसे कह दिया । बात ऐसी है, जीवन का कोई भी वृत्त क्यो न हो, सत्य एक ही नियम से सर्वत्र व्याप्त है । अपने लालच को छोडकर पर-हित की सच्ची भावना से जो भी काम किया जाता है, उसमे निश्चय सफलता मिलती है ।"

"आपने मेरी कृतियाँ पढी है, नही तो आप उनमे यही बात पाते । मैंने प्रत्येक कहानी मे जनता के लिए कोई-न-कोई मतलब निकाला है ।"

"एक दम उपदेश भर देने से ही जनता का कोई मतलब नही निकलता । अगर लेखक का जीवन लेख से भिन्नता रखता होगा तो उसकी कृति कदापि पाठक के हृदय पर असर न करेगी । कमल के पत्ते पर जैसे पानी ढुलक जाता है—ऐसे ही उसका सारा मतलब प्रभावहीन ।"

भन्नन जी उठकर जाने लगे—"मैं अपना नया उपन्यास ले आता हूँ, आप उसे ले जाकर पढिए । आपको जरूर वह पसन्द आयेगा ।"

मित्र ने उनका हाथ पकड लिया—"बैठो भी, इस समय बात का सिलसिला न तोडो । मै गम्भीर साहित्य को पढता हूँ, मुझे उपन्यास पढने का जरा भी शौक नही है ।"

"लेकिन आप मेरे मित्र है, मेरे लिए जरूर कुछ त्याग दिखाना ही चाहिए । अपनी रुचि के विरुद्ध भी समय देकर मेरा उत्साह बढाइए ।"

"तुम्हे इतने वर्षो से पहचानता हूँ, तुम्हारे विचारो से परिचित हूँ, तुम्हारे लेख मे भी तो तुम्हारा ही व्यक्तित्व है।"—मित्र ने कुछ मुसकराते हुए कहा।

भन्नन जी के मन में उनकी दुर्बलना लक्षित हो उठी। बडी विनम्रता से बोले—"तो बता दो न क्या कमजोरी है मेरी ?"

"कमजोरी ? हाँ क्या कमजोरी बता दूँ ? मैं ही कौन सी परिपूर्णता रखता हूँ ? तुम्हारी जो कमजोरी बताऊँगा, वही मेरे भीतर भी जरूर होगी। दुर्बलता किस के भीतर नही है ?—उसका विस्मरण मनुष्य को आगे बढने नही देता—उसकी चेतना ही तो हमारे बल मे बदल जाती है।"

भन्नन जी फडक उठे—"ठीक है ! मैं भी बहुत दिनो से बम्बई जाने का विचार कर रहा था, पर वह बडा धुँधला था। मित्र, आपने आज उस विचार को बडा स्पष्ट रूप ही नही दिया, बम्बई तक का साफ मार्ग भी खोल दिया है मेरे मन में।"

"तुम वहाँ सफलता प्राप्त कर सकते हो, अटूट भय और अडिग निश्चय से ही। जितनी अधिक कठिनाइयो में पड जाओगे, उतनी ही शक्ति तुम्हारे भीतर पैदा हो जायगी। जिस दिन तुम्हारा यह विश्वास टूट जायगा तो फिर—!"

दो

रात को भन्नन जी ने भोजन के समय श्रीमती जी से कहा—"अजी, सुनती हो मैने अब पक्का निश्चय कर लिया है। मेरे कई मित्रो की भी यही राय हो गई है।"

श्रीमती जी कुछ अनखाई, रूठी-सी बैठी थी—स्पष्ट कारण तो ऐसा कुछ भी दिन भर में नही हुआ था—पतिदेवता की दिव्य वाणी से बचती हुई उन्होने तवे की रोटी चूल्हे मे डाल दी और हाथ की तवे में।

समस्त ध्वनि की धारा ऊसर में पडी देखकर भन्नन जी के एक हलकी खासी आई और उन्होने उडी कलई के गिलास से एक घूंट पानी का पिया—"किस दुविधा और चिंता में डूबी हुई हो? ये सब-की-सब अब बीते हुए कल की तरह निस्सार हो जायेंगी। मैंने अब पक्का निश्चय कर लिया है भग्गो!"

"तुम कुछ भी करो, मेरे सिर से यह चूल्हा-चौका कहीं जानेवाला नही है। भाग मे जो बिना तनख्वाह की नौकरानी बनना लिखा है—सो

भगवान् का अमिट लेख है।" भग्गो ने चूल्हे मे फूली हुई रोटी को एक छोटा-सा घुमाव और देकर निकाल लिया। एक-दो बार पटककर उसकी राख झाड दी। भन्नन जी की थाली मे डालती हुई बोली—"मै क्या करूँ, घी खतम हो गया। तुमसे कल ही कह भी दिया था।"

"हो जाने दो, मुझे इसकी कुछ भी परवा नही है। मनुष्य इस शरीर के भोजन पर ठहरा हुआ कहाँ है? आत्मिक भोजन ही उसकी असली स्थिति है। और मैं उसके लिए आत्मिक भोजन तैयार कर रहा हूँ।"—भन्नन जी ने कहा।

भग्गो जी की रसोई के ऊपर भन्नन जी ने जो अपनी कृति की श्रेष्ठता रख दी, इससे श्रीमती जी चिढ गईं—"घमड इतना भारी है, चार पैसे कमा नही सकते। एक-एक दो-दो रुपए का सौदा लाकर घर मे रखते हैं। कोई चीज खतम हो गई है कहा तो काट खाने को दौडते हैं।"

"अब यह सब बाते पुराने इतिहास के खडहरो-सी भूमिसात् हो जायेंगी। कई-कई फीट धरती के भीतर धँस जायेंगी, खोदने से भी इनका कही पता नही चलेगा।"

भग्गो ने दूसरी रोटी फुलाकर उनकी थाली मे दे मारी। उधर देखा, पति-देवता बिना सब्जी के ही रोटी उडाते जा रहे है। तमककर कटोरी में रसदार आलू देते हुए श्रीमती बोली—"मैं अपनी चिंताओ में डूबी हुई अगर रसोई परोसना भूल भी गई, तो क्या तुम्हे कहकर माँग लेना न चाहिए था?"

हँसकर भन्नन जी ने कहा—"तो मै कुछ नाराज थोडे हो गया! बिगड ही क्या गया?"

"एक तो रूखी रोटी और बिना दाल-तरकारी के।"

"जीवन की इस सादगी और रूखेपन से होकर ही साहित्य-साधक का मार्ग गया है भग्गो। तुम्हे इस गरीबी मे अभिशाप नही, वरदान समझने चाहिएँ।"

"कोई भी पौरुष न दिखा सकनेवाले दुर्बल प्राणियो का ऐसा ही गीत होता है।"—भग्गो बोली।

अगर किसा और दिन की बात होती तो भन्नन जी का सतुलन खो जाता। शत-प्रतिशत यह भी सम्भव था, वे मुँह का न निगला हुआ ग्रास भी थाली मे थूककर चल देते, पत्नी पर अपने क्रोध की चरम डिग्री दिखाने के लिए। लेकिन आज बम्बई जाने का सुनहरा सपना उनकी आँखो मे चक्कर काट रहा था।

बडी नम्रता मे उन्होने पत्नी के उस व्यग्य को फूल-माला की भाँति धारण कर लिया और बडी शाति के साथ बोले—"देखो भग्गो, तुम तो बिना तोले ही मुँह से शब्दो का अपव्यय कर देती हो। कितने परिश्रम से मैं लिखता हूँ, यह नही देखती हो ?"

"तुम से तो दफ्तरो के लेखक अच्छे है, पहली तारीख को बँधी हुई तनखा ले आते हैं।"

"भग्गो, तुम दफ्तर के लेखको और मेरे लेख मे कोई अतर ही नही देखती हो, ताज्जुब है। उनका लेख फाइलो मे नत्थी होकर पुराना हो जाने पर जला दिया जाता है और साहित्यिक का लेख काल की कालिया के ऊपर चमकता है।"

"मै यह कुछ नही समझती। मै तो रुपए को देखती हूँ और जो लेख रुपए दिखा सकता है, वही क्यो न बढिया है ?"

"ओह! अगर तुम पढी-लिखी होती तो ऐसे कदापि नही बोलती।"

"पढी-लिखी जो है वो क्या शब्दो से ही अपना पेट भर लेती है ? रसोई के लिए जो सामान चाहिए, वह क्या बिना रुपए के ही प्राप्त हो जाता है ? बखत पर तुम्हे चाय और पान-तमाखू नही मिले तो कैसा कर देते हो तुम ? वे क्या पैसे के ही खेल नही है ?"

"हाँ भग्गो, बिना चाय, पान-तमाखू के मेरे दिमाग में विचार की लहरें ही नही पैदा होती—मै उसे अपनी एक कमजोरी मानता हूँ।"

"कमजोरी की पूजा क्यो करते हो फिर ? प्राचीन काल में भी तो

बडी-बडी किताबे लिखी गई है, व्यास बाल्मीकि आदि ऋषि-मुनियो ने क्या चाय पीकर ही लिखा है ? महाभारत और रामायण जैसे पोथे क्या पान-तमाखू खाकर ही रचे गए है ?"—पत्नी ने चूल्हे में फूक मारते हुए कहा ।

"भग्गो, चाय-सिगरेट में क्या रखा है, वे पीते थे एक बहुत बढिया चीज—सोमरस !"

"तुम्हे भी तो चाहिए ।"

"हम कहाँ ? सोमरस का कही पता ही नही है । कौन पहचानता है अब उस बूटी को ?"

"क्यो ? क्या उसका पैदा होना बद करा दिया गया है किसी कानून से ?"

"तुम तो मूर्खता की बातें करती हो । कानून क्या ऐसे प्रकृति के भीतर हुकम चला सकता है ? अरी उस जडी की पहचान ही नही रही किसी को । अगर आजकल की किताबो की तरह वेदो में भी चित्र छपे रहते तो सोम का पौधा—पत्ती, फूल-फल सब कुछ हमें साफ-साफ मालूम रहता और वह इस तरह खो न जाता ।"

"वेद के ऋषि-मुनियो को किसने बताया ?"—भग्गो ने और एक रूखी रोटी उनकी थाली मे फेकते हुए पूछा ।

"उनको अपने-आप मालूम हो गया ।"—कुछ असमजस में पड़कर भन्नन जी ने जवाब दिया ।

"ऐसे ही तुम भी मालूम कर लो ।"

कुछ सकोच और मुसकान खिचे मुख से भन्नन जी बोले—"नही भग्गो, ऋषि-मुनियो को अन्तर्दृष्टि प्राप्त थी । उनके लिए कुछ भी कठिनाई नही थी ।"

"इसीलिए तो मैंने तुम्हारे पौरुष की बात कही थी । तुम्हारा वह पौरुष पत्नी को नौकरानी बना देने के सपने देखता है । एक सब्जी के साथ रूखी रोटी खाने मे सतोष की महिमा समझता है ।"

“अपना काम करने से नौकरानी कौन बनता है ? यह मजूरी के माहात्म्य का युग है । अच्छा आज मै मलूँगा सब जूठे बर्त्तन ।” कहना आसान था, कह दिया भन्नन जी ने । शीघ्र ही पश्चात्-विचार होकर बोले—“लेकिन भग्गो, असली बात तो रह गई । मुझे मेरे बहुत-से मित्र अपनी आर्थिक स्थिति ठीक कर लेने की सलाह दे रहे है । वास्तव मे जीवन के स्तर को ऊँचा उठाना ही चाहिए । अर्थात् रहन-सहन का अच्छा होना जरूरी है ।”

“रोज ही ऐसा कहते हो, कर सकते नही कभी ।”

“अब समय आ गया है । मैने निश्चय कर लिया है । मैं सिनेमा में कहानी दूंगा । सिनेमा के भीतर सोने की खान है ।”

कुछ प्रसन्नता की रेखा खिची भग्गो के मुख-मडल में—“क्या सिनेमा-वालो की कोई चिट्ठी आई है तुम्हारे पास ?”

“उन्हे किसी के पास पत्र भेजने की क्या पडी है ? तमाम देश के बडे-बडे लेखक, कलाकार और यात्रिक उनके चारो ओर चक्कर काटते रहते है । आरम्भ मे उन्ही के पास जाना पडेगा । हाँ, पब्लिक मे कहानी चल पडी तो फिर उसका लेखक अगर किसी गुफा मे भी जाकर छिप जायगा तो निर्माता को लालटेन लेकर उसे ढूंढने वही जाना पडेगा ।”

बडी प्रसन्न भावना में रँग उठी भग्गो—“फिर तुम्हे यहाँ के सिनेमा घरो मे मुफ्त देखने को पास भी मिल जायगा ?”

“कहाँ छोटी बात पर तुम्हारा मन गया ? जब हजारो रुपए हमें निर्माताओ से मिलने लगेंगे तो एक-दो रुपए के टिकट खरीदने मे हमें क्या कष्ट होगा ?”

“हजारो रुपए ? दूसरो ने तो तुम्हे कभी एक सौ रुपए भी एक साथ नही दिए, वे क्यो दे देंगे ?”

“सिनेमावाले जब लाखो रुपए कमायेगे तो उन्हे हजारो रुपए खर्च कर देने में क्या कष्ट होगा ?”

“जिनकी बदौलत कमाते है, वे उन्हे देगे या तुम्हे ?”

"यह तुम एक पुरानी बात कह रही हो। एक्ट्रेस भी तो तभी सेट् पर अपने नाज-नखरे दिखाती है जब लेखक कुछ लिखता है। उसी की पक्तियो पर तो उसके अधरो पर कपन फूट निकलते है और अग-प्रत्यग मे गति-विधियाँ ! और डायरेक्टर अभिनेता और अभिनेत्रियो की नकेल अपने हाथ मे लिए रहता है। वह जैसे डोरे खीचता है, वैसा ही नाच उन कठपुतलियो को नाचना पडता है। लेकिन उसकी नकेल भी लेखक के हाथ मे है। यह ज्वलत सत्य अभी थोडे ही दिनो से प्रकाश मे आया है। नही तो अभी तक तो रुपए का अधिकाश तारो और सितारो के बीच मे ही बँट जाता था। मेरा मतलब सगीत और सुदरियो के बीच से है। गीत की ताकत से दर्शको के कानो पर छापा मारा जाता था और नृत्य-सुन्दरियो के हाव-भाव दिखाकर उनकी आँखो को वश में किया जाता था। कौन पूछता था कहानी को ? डायलॉग सेट् पर ही गढ लिए जाते थे। लेकिन बाद को ऐसा हुआ बडे-बडे नामधारी सगीत-निर्देशक रह गए और बडी-बडी रग-नय्यियो के नाम और काम पब्लिक को नही खीच सके और निर्माताओ के नुसखे फेल हो गए !"

"तुम्हारी कहानी चल जायगी क्या ?"—भग्गो ने रोटी देते हुए कहा।

"यह तो भगवान् के हाथ की बात है। लेकिन सिनेमा के क्षेत्र मे कहानी नाम की एक चीज का तो जन्म हुआ ! मैं कहता हूँ तुमसे भग्गो, एक्ट्रेसें सिनेमा की हाड-चाम हैं, गाने और भडकीले सेट् उसका शृगार, कपडे और जेवर !"

"और क्या चाहिए फिर ?"

"और क्या चाहिए ? जो चाहिए उसी का तो पता नही। कोरे हाड-चाम और उसकी सजावट से होगा क्या ? अगर उसमें प्राणो की प्रतिष्ठा ही न हो तो कौन उस मिट्टी की तरफ आकर्षित होगा ?"

"मैं नही समझती तुम्हारी ये बाते।"

"रोना भी तो इसी का है। अगर तुम समझती होतीं, तो नकशा

कुछ दूसरा ही होता। अच्छा अब भी कुछ बिगडा नही है अगर तुम मदद करो तो।"

"क्या मदद करूँ फिर ?"

"मैं बम्बई जाने की तैयारी करता हूँ अब शीघ्र।"

"कुछ अच्छे कपडे बनवा लो। यही धोती और कमीज पहनकर जाओगे क्या ?"

"लेखक की सजावट उसका लेख है। मैं कहता हूँ जो लेखक अपने बनाव-शृंगार पर ध्यान रखता है, उसका लेख कभी उभर ही नही सकता। मुझे अपने कपडे दिखाने है क्या ? यह तो उन नाचनेवालियो को शोभा देता है, जो वहाँ अपनी शोभा का सौदा करती हैं। मैं लेखक हूँ, मेरी कल्पना की ही तमाम कलाकार और टेकनीशियन परिक्रमा करते हैं।"

"मुझे तो चाहिए दो चार कपडे। एक ही धोती, वही धोई और वही पहनी। यहाँ तो अपना घर हुआ जो भी किया। वहाँ परदेस में ?"

भन्नन जी पानी पी रहे थे। पानी न निगल सके वह गले मे अटक गया। मालूम नही पानी था या पत्नी की बात। उन्होने खाँस कर गिलास अलग रख दिया।

पत्नी घबराकर बोली—"क्या हुआ ?"

"अँह ह !" स्थिर होकर भन्नन जी बोले—"कुछ नही हुआ, लेकिन मैं कहता हूँ तुम बम्बई जाकर क्या करोगी ?"

"तुम्हारे लिए भोजन बनाऊँगी और घडी-घडी चाय !"—भग्गो ने कुछ निराश होकर कहा।

"नही भग्गो, वह बम्बई है—वहाँ सब कुछ मिल जाता है लेकिन रहने को मकान नही मिलता। खाने-पीने की क्या चिता है ? हर दूकान के बाद की दूकान होटल है वहाँ।"

"लेकिन तुम आखिर रहोगे ही तो सही कही-न-कही।"

"क्या मालूम किसी पार्क की कुर्सी, पुल के नीचे, कही गटर के पास

किसी फुटपाथ या पेड के तले शरण मिले। नही भग्गो, तुम्हे साथ नही ले जा सकता। मैं वहाँ तुम्हारी चौकसी करूँगा या अपनी कहानी को बगल मे दबाकर प्रोड्यूसरो के दरवाजे खटखटाऊँगा ?"

"फिर क्या मै यहाँ अकेली रहूँगी ?"

"अपना घर है यहाँ। क्या अकेला रहना है यहाँ ? पास-पडौसी सब मित्र-सम्बन्धी है। और अगर भगवान् ने सुन ली, अपना सिक्का चल गया तो फिर वहाँ मकान ढूँढकर तुम्हे हवाई जहाज में बुलवा लूँगा।"

भग्गो बोली—"रोटी ?"

भन्नन जी ने थाली के किनारे पर हाथ रख दिया।

पत्नी ने करछी की मूँठ पर हाथ लगाकर पूछा—"आलू ?"

"नही, कुछ भी नही। मैं खा चुका।" बडी विनम्रता से भन्नन जी बोले—"बम्बई जाने का तो तय है, लेकिन जाया कैसे जाय ? यही प्रश्न है। राह-खर्च कहाँ से आयगा ? वहाँ पहुँच जाने पर भी जब तक कही ठौर-ठिकाना न हो जायगा, जेब से ही तो खाना पडेगा।"

"अपने प्रकाशक के पास जाते क्यो नही ? उनसे कहो बडी सख्त जरूरत आ पडी है।"

"बम्बई जाने के लिए क्यो पैसा देने लगा वह ?"

"बम्बई का नाम न लेना।"

"वह किसी तरह न देगा। तुम मेरे बम्बई जाने के लिए सहमत हो गई हो, वहाँ का खर्च भी दो। मैं एक-एक पाई ब्याज-सहित लौटा दूँगा।"

आँखे बनाकर और हाथ नचाकर भग्गो ने कहा—"मेरे पास खजाना जमा है न तुम्हारा ? सप्ताह भर का खाने लायक कोरा अनाज भी तो ला नही सकते बाजार से। गुड चाटकर चाय का साथ करती हूँ। तरकारी मे पानी बढाकर गेहूँ और चावल की सगति मिलाती हूँ। गोबर थाप कर ईंधन का काम ''फटा सीकर लज्जा रखती हूँ, और जाडे से बचती हूँ। उपवास रखकर कैसे भगवान् की ओट में अपनी दीनता

छिपाती हूँ ।"

"तुम देवी हो भग्गो ! तुम्हारे इस दुख के लिए मैंने बम्बई जाने को क़मर कसी है। नही तो उस स्वर्णपुरी से मुझे वैसे ही भय लगता है।"

"जिन्होने बम्बई जाने की राय दी है, उन्ही से खर्च भी क्यो नही माँगते ?"

"यह क्या कहती हो ? उन लोगो की दृष्टि मे फिर मेरा क्या आदर रह जायगा अगर उन्होने 'नही' कर दी तो ?"

"और मै जिनसे माँगने जाऊँगी, उन्होने 'नही' कर दी तो ? क्या मेरी कोई इज्जत ही नही है ?"

"मेरा मतलब यह नही है, तुम किसी से जाकर उधार माँगो ।"

"कही गडा होता तो मै खोद लाती ।"

'वह सोने की नथ तो है ।"

क्रोध से तमतमा कर भग्गो बोली—"मै कहती हूँ, तुम्हे हो क्या गया ? अपने ही पैर मे कुल्हाडी मारते हो । वह मेरे सुहाग की चीज, तुम्हारा ही मगल तो उसमे घिरा हुआ है। नही मै उसे कदापि न दूँगी। मैं अपनी इसी दशा मे सतुष्ट हूँ । मुझे किसी ऐश्वर्य की लालसा नही है ।"

"वह गले की जंजीर दे दो उसी से काम चला लूंगा ।"

"उस पर तुम्हारा क्या हक ? वह मेरी माता की दी हुई चीज ।"

"मै कब उसे अपनी बताता हूँ ? मै भीख माँगता हूँ भग्गो, पहली कहानी बिक जाने पर पहली चीज तुम्हारी ही जजीर का पुनर्निर्माण होगा ।"

"माता के दिए हुए उपहार को तुम बाजार में ले जाकर बेचोगे ? उसकी यह दुर्दशा मुझे असह्य है ।"

"यह दुर्दशा है या सबसे बडा सौभाग्य-सयोग ? तुम्हारे पति के प्रगति-मार्ग में जो सबसे पहली सहायता होगी, वह क्यो न सबसे बडी समझी जायगी ? भग्गो, मै जीवन भर अपने दुर्भाग्य से लडता हुआ चला

आ रहा हूँ, मेरी विजय सन्निकट है। तुम्हे अब मेरे लिए उदासीन न होना चाहिए।"

भन्नन जी भोजन समाप्त कर हाथ धोने चले गए।

पत्नी बडी दुविधा में पडकर खाना खाने लगी। भन्नन जी ने उसे खूब सोच-विचार कर लेने का मौका दिया। वे तौलिए से हाथ पोछते हुए अपनी बैठक मे चले गए। सिगरेट पीने की आदत नही थी उन्हे पर पान और पान का तम्बाकू जरूर खाते थे। बाजार से सादे पान ले आते और घर ही पर उनके आधे-आधे टुकडे कर उन पर सफेदी और लाली रँगते। किताब की शकल का बना हुआ जर्मन सिलवर का एक डिब्बा था, उसे सुबह भर लेते। उसमे एक तरफ कटी सुपारी और एक तरफ तम्बाकू रखने का भी ठिकाना था।

दिन भर चबाते रहते थे पान-तम्बाकू। पान के लिए तम्बाकू नही खाते थे, तम्बाकू के लिए पान खाते थे। अकेले ही नही। मुक्त हस्त होकर मित्रो को भी उसमें भाग लेने देते थे। जो मित्र उनके अधिक अतरग थे, उन्हे तो उनकी जेब मे हाथ डालकर डिब्बे मे से पान निकाल लेने का जन्म-सिद्ध अधिकार भी प्राप्त था। जब कभी उनका डिब्बा दिन मे ही रीता हो जाता तो बाजार से भी वह भर लिया जाता था।

बैठक मे आते ही उन्होने पान के डिब्बे मे से पान और तम्बाकू खाया। वही सभी कुछ था उनके। अध्ययन-लेखन उसी मे होता था, मित्रो के साथ कभी-कभी चाय-गप की पार्टियाँ वही बैठती थी। कपड़ो का ट्रक वही था। खिड़की पर दर्पण और कघा रखा रहता था—वही उनका शृगार-कक्ष था। कभी पक्का खाना भी वही स्टूल पर थाली रख कर वे उडा जाते थे जाडो में। चारपाई उनकी उसी कमरे में जमी थी—वही शयन और विश्राम भी होता था।

अपनी तमाम छपी हुई पुस्तको की एक-एक प्रति इकट्ठा करने लगे वे एक ट्रक मे। कुछ अप्रकाशित कथानको की पाडुलिपियाँ थी, उन्हे भी रखा बम्बई ले जाने के लिए। वे सोचने लगे—"बम्बई जाऊँगा, वहाँ

जाने के निश्चय पर व्यय अपने-आप कही-न-कही से जुट ही जायगा।"

अपनी पिछली छपी हुई पुस्तकों की सख्या को देखकर उनके दृढ विश्वास होने लगा—"इनका ढेर जिस निर्माता और डायरेक्टर के सामने पटक दूँगा, उसे झक मार कर मेरी प्रतिभा का कायल होना पडेगा। फिर तो एक ही कहानी के सेलुलाइड से रजत पट पर विकीर्ण हो जाने पर मै थोडे ही समय में सारे भारत पर छा जाऊँगा। जरूर छा जाऊँगा।"

उनके मन मे भावो की इतनी बडी बाढ आई कि सभाल न सके, बाँध टूट गया। और आखिरी शब्द बडी जोर से कमरे मे गूँज उठे—"भारत पर छा जाऊँगा, जरूर छा जाऊँगा!"

भीतर भग्गो समझी, जाने कौन आ गया! दौडकर झाँका तो किसी दूसरे की परछाईं नही दिखाई दी। बैठक मे आकर बोली—"क्या बड-बडा रहे थे तुम?"

"अरे तुम इसे बडबडाना कहती हो, यह मेरे भविष्य का शब्द-चित्र प्रकट हो रह था—पेशगी, समय से पहले।"

"मै पूछती हूँ इतनी किताबे बम्बई ले जाकर क्या करोगे?"

"भगवान् का धन्यवाद है, तुम्हारे इस भाषण से एक बात तो सिद्ध हो गई कि तुम्हे मेरा बम्बई जाना मान्य है।"

भग्गो बालो की लट को कान के पीछे समेटती हुई मुसकाई—"जो किताबे तुम्हे यहाँ भर-पेट खाने को न दे सकी, उनसे बम्बई में क्या हल हो जायगा?"

"मैंने सुना है, उन लोगो को लेख-पढ का ज्यादे अभ्यास नही है। भग्गो, उस विशाल बम्बई मे मेरी सिफारिश करनेवाला कौन है? इतनी किताबें उनके सामने रखूंगा तो वे समझेंगे, आज सचमुच में कोई असली लेखक बम्बई की आबहवा मे आकर फँस गया!"

भग्गो ने ट्रक में रखी हुई उन किताबो को देखा।

भन्नन जी बोले—"और अब लाज तुम्हारे ही हाथ में है इस जहाज की, चाहो तो तुम यह बम्बई के किनारे से लग जाय, नही तो किसी

रेगिस्तान मे डूब जाय।"

"कितना खर्च लगेगा कुल मिलाकर ?"

"कम-से-कम—भग्गो, तुम्हारी वह जजीर कितने तोले की है ?"

"लेकिन वह मेरी माता जी की बनाई है।"

"माता जी ने अपने हाथ से तो बनाई नही है। मैं फिर उसे पहले ही सुयोग पर बना दूंगा। मैं समझता हूँ दो तोले की होगी।"

"हाँ।"

"मै उसे चार की बनवा दूंगा।"

"तुम सच कह रहे हो ?"

"हाँ, हाँ सच कह रहा हूँ। तुम्हारी स्वर्गस्थ माता की स्मृति के साथ विश्वासघात करना बडा पाप है। मैं लेखक हूँ, भावना की इस पवित्रता को खूब समझता हूँ।"

भग्गो राजी हो गई।

तीन

भग्गो ने अपने पास-पडौस की सभी सखी-सहेलियो से इस बात मे राय ली कि पति जी के बम्बई जाने के लिए राजी होना चाहिए या नही। उसने इसी प्रश्न पर उनका रुख जानना चाहा, राह खर्च के लिए जेवर देने की बात उसने दूसरी बैठक के लिए रिजर्व रख ली।

मोती की माँ, अपने पति की रेल की नौकरी मे उनके साथ दूर-दूर घूम आई है। बम्बई तक तो नही, झाँसी तक गई है। बडी अनुभवी है। सभी प्रान्तवालो के सम्पर्क में आई हुई, सभी बातो को समझती है। बाल आधे से अधिक पक चुके हैं। उसे विधवा हुए दस साल हो गए। अब उसके एक बेटा है और चार पोते-पोतियाँ, उन्ही के साथ रहती है।

बडी गम्भीर हो उसने भग्गो की ओर देखकर कहा—"लेकिन वे अकेले क्यो जा रहे हैं?"

"कहते हैं वहाँ काम लग जायगा तो फिर बुला लूँगा।"

मोती की माँ हँसकर बोली—"यह भी कोई बात हुई? तुम यहाँ

अकेली और वे वहाँ अकेले ? मैने सुना है बम्बई ठीक जगह नही है वह बात अधूरी ही रख चुप हो गई।

"कैसी ठीक जगह नही है ?"—सशय में पड गई भग्गो, उसके एका-एक चुप रह जाने से।

मोती की माँ ने विचार की पहली लहर को नई दिशा देकर कहा—"बेटी, बडी बुरी आबहवा है वहाँ की। भगवान् बचावे वहाँ से। एक के भी तो मुख मे श्री नही दिखाई देती। बच्चे, जवान और बूढे सब-के-सब पीले-पिचके गालो को लिए। न किसी के बदन में खून, न उत्साह ! एक झूठी फुर्ती को लिए हुए सब मशीन की तरह चक्कर में घूमते रहते है। आधी क्या ? मै कहती हूँ घर की चौथाई भी बहुत अच्छी है। रेल की नौकरी मे बहुत बडी तरक्की मिल रही थी उन्हे। पर उन्होने हमेशा ही वहाँ जाने से इनकार कर दिया।

मोती की माँ के पास से जब भग्गो उठकर घर जाने लगी तो उसने अपने मन मे यह पक्का निश्चय कर लिया था कि पति जी को हरगिज न जाने दूँगी उतनी दूर, उस विषम वायुमंडल में। लेकिन जब कुछ देर बाद उसने मोती की बहू से बाते की तो फिर दूसरे ही विचार चमक उठे उसके मन में !

उसकी सास कही चली गई थी। भग्गो ने सोचा, दो मिनट बहू से भी बातें कर लूँ, नही तो बुरा मान जायगी। वह अपने कमरे में थी। भग्गो ने बाहर से जजीर झनझनाई। मोती की बहू अपने नवजात शिशु के मुँह मे दूध देकर उसे सुला रही थी। बच्चे की नीद ज्यादे पक्की नही हुई थी। वह टूट न जाय इस भय से तुरन्त ही उठी और उसने द्वार खोल दिए।

भग्गो बोली—"क्या कर रही थी दीदी ? मैने हर्ज तो नही किया ?"

"नही तो, मुन्ने को सुला रही थी। बड़ा दिक करता है यह दिन भर। दो घड़ी जब सो जाता है तभी कुछ चैन मिलता है। कोई जरूरी

काम था क्या ? आओ बठो।"

आसन पर बैठती हुई भग्गो बोली—"नही जरूरी काम कुछ भी नही। बम्बई को जा रहे हैं, मैंने सोचा तुमसे भी राय ले लूं। तुम्हारी भाभी के मँकेवाले तो वही रहते हैं न ?"

"हाँ रहते है। मैं कहती हूँ, उनके लिए तो वहाँ सोना बरस पडा। यह तो अपने नाते-रिश्तेदारो की बातें हुईं और भी मैंने सुना है बहुत-से लोगो की भाग्य-लक्ष्मी जो सर्वत्र सोई रही, वही जाकर जागी है।"

"दीदी, इसी भरोसे मैं भी सोच रही हूँ, लेकिन मैंने सुना है वहाँ के लोग तरह-तरह की विद्या जानते है। बहुत-से व्यक्ति वहाँ जाकर वही के हो जाते है, उन पर ऐसा जादू छा जाता है कि वे उस जाले को काट-कर बाहर निकल ही नही सकते।"

हँसती हुई मोती की बहू बोली—"यह तो लोगो का अज्ञान है। लेकिन मैं कहती हूँ यदि भगवान् मनुष्य की तमाम आवश्यकताओ की वही पूर्ति कर देता है तो फिर वहाँ से आने की बात ही क्यो हो ? घर कहाँ है मनुष्य का ? भारत में भी तो हम बाहर ही से आए है। एक ही जगह पर रहते-रहते भी हमारे भीतर जडता का समावेश हो जाता है। कब जा रही हो ?"

बडे आश्चर्य की मुद्रा मे फँसकर भग्गो बोली—"मै कहाँ जा रही हूँ अभी ?"

"क्यों तुम क्यो नही जा रही हो ? नौकरी कही मिली है उन्हे ?"

"नौकरी तो करते ही नही वे, जैसे यहाँ किताबें लिख-लिखकर छापे-खानेवालो को देते हैं, वहाँ सिनेमावालो को देगे।"

कुछ चौंककर मोती की बहू बोली—"ऐऽ बहन, सिनेमावाले तो बड़ा रुपया कमाते हैं और सुना है वे खर्च भी काफी करते हैं।"

"भगवान् जाने।"—हाँ और नही के मध्यराज्य मे खडी होकर भग्गो ने जवाब दिया,

"कुछ दिन बाद तो फिर तुम भी जाने ही वाली ठहरी ?"

"लेकिन तुम्हारी मास जी तो कहती है वह बड़ी ख़राब जगह है।"

"उनको क्या पता ? वे वहाँ कभी गई भी तो नही। पुराने विचारो की है वे। जैसा मन आया वैसा कह देती है।"

सास की बनाई हुई भावना पर बहू का ही सर्वोपरि रग रखकर भग्गो अपने घर गई। भन्नन जी दो-तीन दिन से बम्बई-प्रस्थान का ही सामान जुटा रहे थे।

चार-पाँच बार उन्होने अपने ट्रक मे रखी हुई चीजे, उसमे से बरखास्त कर फिर दूसरी तरह से रखी थी। भीतर जाने पर भग्गो ने देखा उन्होने फिर एक बार और ट्रक उधेड कर सारे कमरे मे फैला दिया था।

"फिर और क्या रह गया ?"

"एक-दो कपडे भी उसमे आ जाये तो ठीक है। उन्ही के लिए कुछ किताबें कम कर जगह बना रहा हूँ।"

"कपडे बिस्तर मे बाँध लेना।"

"बिस्तर ले जाकर बोझ बढाना नही चाहता।"

'यह क्या कह रहे हो ? रात कहाँ काटोगे ? वहाँ अपने-पराए थोड़े बैठे है कोई।"

"वहाँ ऐसा जाडा नही होता कि बिस्तर की जरूरत पडे। एकाध चादर और दरी वही खरीद लूंगा। जितना थोड़ा लगेज होगा, उतनी आजादी रहेगी यात्रा में और प्रवास मे भी।"

"मेरी समझ में नही आ रही है तुम्हारी बात। कपडे क्या-क्या रखोगे ?" पत्नी ने पूछा।

"बस एक-एक अतिरिक्त कमीज और धोती।"

"मै कहती हूँ ऐसी दयनीय दशा बनाकर कैसे तुम्हारी कहानी बिकेगी ?"—भग्गो बड़ी असमजस मे पडकर बोली।

"भग्गो, मैं कहता हूँ लेखक को वेश से मतलब ही क्या है, वह तो एक साधक है, जितना ही कष्ट उठाएगा उतनी ही उसकी कला निखर उठेगी। तुम बार-बार मेरे मन मे यही उलझन डालती जा रही हो। मैंने

तुमसे पहले भी कहा है, मैं एक्टर होने नही जा रहा हूँ कि वे मेरी शक्ल और कपडो को देखकर मेरा मोल-तोल ठहरावे। लेखक के लिए सादगी ही होती है और उसी से उसको आदर मिलता है।"

भग्गो ने चुप रहकर कुछ देर विचार किया फिर बोली—"तो जाने का कब ठीक किया है ?"

'तुम्हारे ही हाथो में है, जब आज्ञा दे दो। तुम्हारी ही दुविधा की मेरे मन में भी उलझन है। तभी इस ट्रक को बार-बार बना और बिगाड रहा हूँ।"

"जजीर बेच लाने को देने को तैयार तो हूँ मैं। जब चाहो ले जाओ। लेकिन यह बात तुम्हे निरंतर याद रखनी होगी, अवसर मिलने पर फौरन ही उसकी पूर्ति हो जाय।"

"बम्बई के बढिया-से-बढिया ज्वेलर के यहाँ बनवा दूँगा इस बार, तुम्हारे तमाम इष्ट-मित्र, पास-पडौसी देखते ही रह जायेगे। जाओ निकाल लाओ मैं अभी बाजार जाकर दो-तीन जगह दिखाकर उसका सौदा कर लाता हूँ।"

भग्गो ने कमर मे से अपनी चाबी का गुच्छा हाथ में लेते हुए कहा—"लेकिन मेरे यहाँ रहने का क्या इन्तजाम होगा, खर्च इत्यादि का ? आठ दिन की बात कोई बात नही, तुम न जाने वहाँ कितना समय लगा दो।"

"कोई अधिक समय नही लगेगा ? लकडी-कोयले आदि के लिए कुछ रुपए तुम्हे दे जाऊँगा, बाकी सब चीजे बनिये के यहाँ से पूर्ववत् आती रहेगी, तुम्हे जिस चीज की जरूरत हो पुर्जा लिख देना। महरी ला देगी। और गोपाल भी तो तुम्हारा अपना है।"

पति के प्रवास को सन्निकट जानकर भग्गो के विह्वलता जाग उठी। रुद्धकंठ से उसने पूछा—"कब जायेगे आप ?"

"हाँ अगर तुम शुद्ध हर्ष से मुझे विदा देती हो तो कल चला जाऊँ।"

"लेकिन अभी इतनी जल्दी क्या है ? दूर की यात्रा, बिना सुदिन देखे और उसकी गणना कराए मैं न जाने दूँगी।"—कहती हुई भग्गो उठी

और उसने सदूक में से जजीर निकालकर प्रकपित हृदय से पति के हाथों मे रख दी।

"तुम यह जजीर दे तो रही हो, पर बडे दु:ख के साथ।"

"दु ख अवश्य ही है, पर यह जजीर के वियोग का नही है।" कुछ विराम देकर भग्गो ने कहा—"क्यो क्या यह तुम्हारे बिछुडने का नही हो सकता ?"

"विरह हमारे प्रम की परीक्षा है। उस अग्नि मे उत्तप्त होकर वह और भी उज्ज्वल और पवित्र हो जाता है। इसलिए उस सुदिन की आशा-तारिका पर दृष्टि जमाकर रखोगी, तो यह अंधेरी निशा अपने-आप कट जायगी।" भन्नन जी उसी समय जजीर का सौदा करने के लिए बाजार को चल दिए। अपनी महत्त्वाकाक्षाओ को कुसुमित करने को वे इतने दिनो से जिन तारों के सपने देख रहे थे, आज वह उनकी मुट्ठी में बँध गया था। उनके हर्ष का पारावार न था।

और भग्गो भी पड़ोस में ही ज्योतिषी जी के यहाँ चली गई, पतिदेव के प्रवास-गमन का सुदिन दिखाने के लिए।

सध्या समय भन्नन जी ने पत्नी के हाथ में १५५) रु० रखते हुए कहा—"लो यही है सब तुम्हारी जंजीर की कीमत।"

"कुल इतनी ही ?'

"हाँ, इसमें कुछ मिलावट निकली मेरे सामने ही तो उसने सोने को गलाकर साफ किया।"

शका करती हुई भग्गो कहने लगी—"मुझे तो यह कीमत कम जान पडती है।"

"शंका करनी ही बहुधा स्त्रियो का सहज स्वभाव होता है। कोई और ले गया होता तो कोई बात थी। मेरे सामने ही तो वह तपाकर गलाया गया और मेरी आँखो पर ही वह तोला गया। फिर संदेह के लिए कोई ओट नही रह जाती।"

भग्गो ने सब-के-सब रुपयो के वे नोट बिना गिने ही भन्नन जी को

देते हुए कहा—"लो रखो फिर इन्हे ।"

"कुछ तुम्हारे खर्च के लिए दे जाता हूँ ।"—भन्नन जी ने पाँच-पाँच रुपय के दो नोट भग्गो की ओर बढाए ।

"नही ! नही !" वारण करते हुए पत्नी के हाथ की तमाम चूडियाँ खनक उठी—"मैं तो यहाँ अपने घर ही पर हूँ, तुम्हे वहाँ परदेस मे कौन दे देगा ?"

भन्नन जी ने पाँच रुपए का एक नोट हठपूर्वक पत्नी के अचल में डाल दिया—"एक सौ पचास रुपए क्या कम है बबई पहुँचने और वहाँ स्थिर होने के लिए । अधिक रुपए रखना बेकार है, चोरों को सुयोग देना होगा । रुपया पास में होने पर मन भी इधर-उधर भटकेगा और लक्ष्य की तन्मयता जाती रहेगी। दिन कौन बताते है ज्योतिषी जी ?"

रुद्वकठ से भग्गो ने कहा—"आज का दिन बडा सुन्दर बताया है, व्यापारै के लिए तो बहुत ही श्रेष्ठ है ।"

प्रसन्न होकर भन्नन जी ने कहा—"बस तो ठीक है, आज रात की गाडी से जाकर सुबह मथुरा में बबई की गाड़ी पकड लूँगा ।"

"परसो का दिन भी अच्छा बताया है ।"

"बुद्धिमान पहले ही सुयोग पर अधिकार कर लेते है ।"

"लेकिन यह दिन तो व्यापार के लिए है, तुम साहित्यिक हो ।"

"लक्ष्य तो साहित्य के व्यापार से है । कोरे साहित्य के कारण ही तो साहित्यिक की दुर्दशा है । उसे व्यापार का रूप देकर ही विधाता के कुअक सुअको में बदले जा सकेंगे ।"

"लेकिन अचानक इतनी जल्दी ! तुमने अभी कोई तैयारी भी तो नही की है ।"

"यह तुम्हारा क्षुद्र मोह है ! मैं इतने दिनो से कर रहा हूँ तैयारी, देखो ट्रक पैक हो चुका है । सब कुछ समझ-बूझकर मैंने इसमें रख लिया है, बाकी और कुछ नही ।"

'बाकी और कुछ नही ? बड़ा आश्चर्य होता है मुझे तुम्हारे इस

सामान को देखकर। कुछ मार्ग के लिए खाने को मुझे बनाना चाहिए। उसके लिए 'नही' तुम कर नही सकते।"

"क्या देर लगेगी उसमे ? लेकिन कहाँ बबाल करती हो ? किसमें रखकर ले जाऊंगा ?"

"वह टिफिन कैरियर तो है।"

"नही, नही, तुम मेरे मस्तिष्क की बात नही जानती हो। साथ की अदद बढा देने से मेरा मन उतनी ही खूंटियो मे लटक जाएगा। मैं हर-वक्त ही कहानियाँ सोचता रहता हूँ। फिर रेल मे तो सैकडो प्रकार के टाइप मिलते हैं। टिफिन कैरियर साथ रहने से या तो मेरी किसी कहानी का कोई बढिया पात्र मेरे हाथ से चल देगा, या यह टिफिन कैरियर।"

"लोग अपने साथ दस-दस अदद ले जाते है।"

"लोग कुछ भी करें। तुम एक साहित्यिक की तुलना क्यो साधारण व्यक्तियो के साथ करती हो ? मेरा भोजन तो वह विचार की धारा है जो निरतर मेरे मानस में उठती रहती है। दुनिया का प्रत्येक व्यापार, जीवन का हर एक दृश्य—चेतना के भिन्न-भिन्न मार्गों से मेरे मन के भीतर जो आकृतियां बनाता है—उन सबमें मै अपनी कला का उपयोग ढूंढता रहता हूँ। भग्गो, तुमने अनेक बार ऐसी परिस्थितियो मे पकडकर मुझे पागलो के उपनाम दिए थे।"

भग्गो ने बडा सकोच और पश्चात्ताप दिखाकर कहा—"नही, लेकिन तुम्हारा निरादर करना मेरा मतलब नही था।"

"मेरी राह के भोजन की चिंता छोड़ दो। मार्ग मे तमाम बडे-बड़े स्टेशनो पर ताजा और अच्छा कच्चा-पक्का खाना मिल जाता है, फिर क्यो बासी भोजन करूँ ?"

"नही, यह बडी बुरी बात मेरे मन मे खटकती रहेगी कि तुम मेरे पास से विदेश को जाने लगो और मैं तुम्हारी राह के लिए भोजन न बनाऊं।"

"भग्गो, जीवन के बहुत बड़े सघर्ष का सामना करने को जाते समय

मैं तुमसे जरा भी कलह नही करूँगा। लेकिन एक छोटी-सी प्रार्थना तुम्हे मेरी माननी ही पडेगी। थोडा-सा खाना बना दो तुम—पर उसे मैं टिफिन-कैरियर मे रखकर न ले जाऊँगा।"

हँसती हुई भग्गो बोली—"अच्छी बात है, किसी रूमाल में बाँधकर रख दूंगी।"

भग्गो रसोईघर की तरफ जाने लगी, भन्नन जी बोले—"अभी तो बहुत समय है। मैं तब तक अपने दो-चार मित्रो से विदा ले आता हूँ।"

भन्नन जी अपने बचपन के मित्र श्री रामलोटन जी के यहाँ पहुँचे। दोनो ने एक ही ग्राम-पाठशाला से मिडिल पास किया था और साथ-ही-साथ दोनो के भीतर साहित्य-प्रेम के अकुर फूटे थे।

भन्नन जी कहानी-लेखक हो गए। जीवन-भर जितना लिख पाए उतना बेच नही पाए, जितना बेच पाए उतने के दाम वसूल करने मे उन्हे लिखने से ज्यादा मेहनत करनी पडी। लेकिन रामलोटन जी की तकदीर अच्छी थी। वे एक दैनिक पत्र के विज्ञापन-विभाग में घुस गए थे। तीक्ष्ण बुद्धि रखते थे। प्रेस के सशोधन-विभाग में एक जगह खाली होने पर उन्होंने वहाँ अपनी बदली करा ली। धीरे-धीरे पत्र मे लेख और टिप्पणी लिखने लगे। सपादकीय-विभाग उनका लोहा मानने लगा, वे मौका लगने पर प्रधान-सपादक की भी व्याकरण-सबधी भूले निकालने लगे।

पहले तो प्रधान-सपादक उनसे बहुत चिढ गया और उन्हे नौकरी से निकलवा देने के लिए कारण ढूँढने लगा, लेकिन एक दिन रामलोटन जी ने उनसे कहा—"देखिए प्रधान-सपादक जी, आप अपने पूँजीपति मालिक का कोई घमड न करे। रामलोटन आप का अपमान करने के उद्देश्य से कुछ नही कहता, शुद्ध साहित्य का प्रचार ही उसका मतलब है। जहाँ पर मेरी गलती हो मेरे कान पकड़कर बताइए मैं तुरन्त ही मान जाऊँगा। आपकी कुरसी के प्रति मेरी श्रद्धा और भक्ति है लेकिन आपके भ्रमो की पूजा करने को एक क्षण के लिए भी तैयार नही हूं, इससे अच्छा हो कि

मैं किसी गरीब के अखबार मे नौकरी कर लूँ जहाँ परिष्कृत भाषा और भावना का मूल्य ठीक पहली तारीख को मिलनेवाली बडी तनखा से बडा हो।"

प्रधान-सपादक ने अपने मन मे सोचा—"इस आदमी के साथ दुश्मनी बढाना युक्तिसगत नही है। यह भयानक शत्रु के रूप में जन्म ले लेगा। अगर इसके ऊपर कोई उपकार करके खरीद लिया जाय तो सभव है इससे बढकर दूसरा मित्र भी कठिनता से मिलेगा।"

इसी घटना के फलस्वरूप रामलोटन जी प्रूफ-सशोधन-विभाग से सपादकीय विभाग मे खीच लिए गए और कुछ ही दिनो मे प्रधान संपादक जी की कृपा से उप-सपादक हो गए। बाद को जब दैनिक-पत्र का साप्ताहिक सस्करण निकलने लगा तो उसके सपादन का भार उनके हाथ लग गया।

भन्नन जी और उनकी कला दोनो पर रामलोटन जी समय-समय पर बडी कृपा करते रहते थे। अपने साप्ताहिक में वे उनकी कहानियाँ छाप देते थे और उन्हें अच्छा पुरस्कार दिला देते थे। कभी-कभी उनके उपन्यास भी धारावाहिक रूप से निकाल देते थे। अपना पुरस्कार देकर फिर उपन्यासो को पुस्तक रूप से अन्य प्रकाशको से बेच लेने की सुविधा भी उन्हे दे रखी थी।

भन्नन जी ने अपने उस उपकारी मित्र के दर्शन करने को जाना जरूरी समझा। वे इन दिनों छुट्टी पर घर आए हुए थे।

भन्नन जी ने कहा—"मित्र, मैं तुम से आज विदा लेने आया हूँ।"

रामलोटन जी ने चौककर पूछा—"क्या रेडियो मे नौकरी मिल गई है तुम्हे ?"

"नही मै बबई सिनेमा के क्षेत्र मे जा रहा हूँ।"

नाक-भौ सिकोडकर सपादक जी बोले—"सिनेमा का क्षेत्र ? ताज्जुब है, तुम्हारे-जैसे साहित्यिक को क्यों अभिरुचि हुई इधर जाने की ?"

"साहित्य से पेट नही भर रहा है।" बडी कठिनाई से भन्नन जी

ने कहा ।

"तो क्या वहाँ किसी फिल्म कपनी से एग्रीमेंट किया है ?"

"नही, अभी स्वयम् ही जा रहा हूँ ।"

"मैं तो उन लोगो से बातें करने में भी अपमान समझता हूँ। देखो, तुम उन्हे खीचकर ऊपर उठा नही सकते, वे ही तुम्हे नीचे गिराकर अपने मतलब पर ले आवेंगे ।"

भन्नन जी रामलोटन जी के साथ खूब खुले हुए थे, तुरन्त ही बोल उठे—"और जो यह तुम हर हफ्ते सिनेमा का पेज छापते हो अपने साप्ताहिक में, अभिनेत्रियो की बड़ी-बडी फोटो और उनके अतिरजित स्तुति-वर्णन प्रकाशित करते हो ? वह क्या है ? अपनी मेज पर बैठे-बैठे जो ये कल्पित पाठको के सवाल-जवाब गढते रहते हो, क्या यही तुम्हारी बडी भारी सुरुचि है ? और यह तुम्हारी वर्ग-पहेली, यह क्या जुए का ही सभ्य रूप नही है ?"

कुछ छोटा मुख कर रामलोटन जी ने कहा—"क्या करे भाई, अपने अखबार के मालिक होते तो ऐसा न होता । ब्लाक फोकट मे मिल जाते हैं और अभिनेत्री-अभिनेताओ के अभिनदन छापने पडते हैं उन बडे-बडे सिनेमा के विज्ञापनो के कमीशन रूप मे ।"

"जो विवशता तुम्हारी है, उसी का शिकार मैं भी हूँ ।"

रामलोटन ने भन्नन जी का हाथ पकड लिया—"कब जा रहे हो ?"

"आज ही ।"

"क्या सहायता कर सकता हूँ फिर मै तुम्हारी ? सिनेमा के निर्माता, नट-नटी किसी से भी हमारा परिचय नही है, अन्यथा कोई सिफारिशी चिट्ठी लिख देता । वहाँ के किसी कहानी लेखक को भी नही जानते । स्थानीय कुछ सिनेमा-गृह के मालिको से जरूर जान-पहचान है—वे किस काम के, वे क्या कर सकते हैं ?"

"भगवान् के सहारे से जा रहा हूँ । अपने ही साहित्य और कला के भरोसे ।"

"लेकिन यह अपनापन उनके लालच में डुबा न देना। अगर उन्ही के स्वरो पर शब्द गढने लगे अगर उन्ही के इशारो पर तुम्हारी लेखनी नाचने लगी तो फैल गया फिर देश मे घर-घर प्रकाश !"

"कोई वादा नही करता तुम से, परिस्थितियाँ मालूम नही कहाँ धकेल दें।"

"परिस्थितियाँ पुरुष की अतरगामिनी होती है।"

"ठीक पहली तारीख को तनख्वा का मोटा चैक मिल जाता है न तुम्हे।"

"देखो भन्नन, दूसरे की ईर्ष्या नही करते, तुम्हारे भीतर पुरुषार्थ जगाने के उद्देश्य से ही मैने यह सब कुछ कहा है। बम्बई जाने के खर्च का प्रबन्ध हो गया ?"

"हाँ, धन्यवाद है तुम्हे।"

"थोडा-बहुत समय निकाल लिखकर भेजते रहना मेरे पास। कुछ मदद जरूर हो जायगी यहाँ से।"

"अवश्य ! कहा-सुना माफ करना।"—भन्नन हाथ जोडकर विदा हुआ।

रामलोटन ने उसकी पीठ पर कहा—"तुम भी क्षमा करना, पत्र देना हाँ। फिर हम तुम्हे सिनेमा का विशेष सवाददाता बना देंगे।"

भन्नन जी सडक पर आकर सोचने लगे—"अब कहाँ जाऊँ ?" कई मित्रो के चित्र उन्हे मानस मे दिखाई पडे। वे सोचते हुए आगे को बढते गए। गोपाल रेस्टोराँ के धुँधले साइन बोर्ड पर नजर पडी।

गोपाल को भी साहित्य का बहुत शौक था। वह कविता भी लिखता, कहानियाँ भी। गुजर के लिए उसने एक विश्राम-गृह खोल रखा था, साथ ही कुछ हिन्दी के पत्रो की एजसी भी। पत्रो से काट-काटकर वर्ग-पहेलियो के कूपन भी बेचता था।

किराए की बचत के लिए एक अँधेरी और मैली गली में उसका रेस्टोरा था। बहुत थोड़े से लोग वहाँ जाते थे। जरूरतो की पूर्ति के

लिए ही उसने अखबारो की एजंसी ले रखी थी। कहानी और कविताएँ जो उसकी छप जाती थी, उनके छप जाने को ही वह बहुत बड़ी सिद्धि मान लेता था। उनके पारिश्रमिक की कल्पना भी नही कर सकता था।

भन्नन जी के प्रति उसकी बड़ी श्रद्धा थी और वे भी नगर की चौडी सडको पर स्थित साफ-सुथरे होटलो को छोडकर गोपाल रेस्टोरां की गन्दी गली में जा घुसते थे। गोपाल उनके लिए एक्स्ट्रा स्पेशल चाय बना देता। कभी-कभी जब वे पत्नी से लड-भिडकर घर मे लिखना जारी नही रख सकते थे, तो वह उनके लिए दो-तीन तरफ से परदे कर एक केबिन बना उसके बाहर से "आक्यूपाइड" लिखा हुआ कार्ड-बोर्ड लटका देता।

भन्नन जी ने जब गोपाल रेस्टोरां मे प्रवेश किया तो वहाँ उसके मालिक को छोडकर और कोई न था। जमीन में धँसी हुई सिगडी पर धुएँ से मैली एक केतली चढी हुई थी। सिगडी के उधर एक तिपाई मे बैठा गोपाल एक समाचार पत्र पढ रहा था। उसके पीठ पीछे की अलमारी में कुछ बिस्कुट, कुछ चाय, सिगरेट, बीडी दियासलाई के बडल सजाकर रखे गए थे। सडक की ओर एक मेज पर हिन्दी के सस्ते रंगीन आवरणोवाले मासिक और साप्ताहिक पत्र सजाए गये थे। बहुत-सा आकर्षण होटल के द्वार पर लटकाया गया था। उनमें अधिकाशत. वर्ग-पहेलियो के कूपन और उनको हल करने का मार्ग बतानेवाली पत्रिकाएँ थी।

रेस्टोरां की दीवालो पर सिनेमा की नई और पुरानी फिल्मो के पोस्टर चिपकाए गये थे। टाट की चौखटो में चिपकाए हुए नगर के दो सिनेमा-गृहो में प्रचलित चित्रो के विज्ञापन भी उसके रेस्टोरां के दाहने-बाएँ नियमपूर्वक प्रदर्शित किए जाते थे। उनका गोपाल को कोई किराया नही मिलता था। एक खेल का एक समय का फ्री पास उसके लिए पर्याप्त था।

भन्नन जी ने कुछ असमय ही रेस्टोरां में प्रवेश किया। गोपाल

बोला—"पडित जी, आज बडी देर हो गई क्या ?"

"हाँ गोपाल, तुम्हारा मेरे ऊपर बडा स्नेह है । मैंने सोचा तुम से भेंट बहुत से लोगो को छोडकर भी करनी जरूरी है ।"

"क्यो, क्यो गुरुदेव ?"—दुचित होकर गोपाल ने पूछा ।

"मै जा रहा हूँ रात की गाडी से ।"

"कहाँ ?"

"बम्बई, सिनेमा कम्पनियो के लिए कहानी लिखने के लिए ।"

मन-प्राण से तैयार होकर गोपाल बोला—"गुरुदेव, मुझे भी ले जाइए अपने साथ । मै आपकी सेवा करूँगा । सिनेमा-कम्पनियो में कही बर्तन मलने की भी नौकरी मिल जाय तो मै तैयार हूँ । यहाँ अब इस रेस्टोराँ की गाडी अधिक नही खीची जाती ।"

"एक चले-चलाए कारोबार को ऐसे छोडकर जाना बुद्धिमानी नही है, फिर ऐसे मनुष्य के साथ जिसे स्वय ही उस स्थान का परिचय और अनुभव, शून्य के समान है ।"

बडी अनुनय-विनय के साथ गोपाल बोला—"पडित जी आपको जरा भी कष्ट नही होगा ।"

"नही, नही भाई, मुझे जाने दो रग-ढग देखकर मै तुम्हे लिखूंगा । तभी आना ठीक होगा । मै अभी रात की गाडी से जा रहा हूँ, तुम भला कैसे आ सकते हो ? तुम्हारी जमी हुई दुकान, दस आदमियो से लेना होगा और दस को देना । सबके अधूरे हिसाब छोड़कर चल दोगे तो लोग क्या कहेगे ?"

गोपाल ने एक गिलास चाय बनाकर जल्दी से भन्नन जी के आगे रख दी । भन्नन जी चाय पीते हुए बोले—"गोपाल, में अभी अकेले ही जा रहा हूँ ।"

"भग्गो दीदी यहीं रहेगी ?"

"हाँ, यही रहेगी । बीच-बीच में कभी उनके पास हो आना ।"

"जरूर, यह भी भला कोई कहने-सुनने की बात है ?"

"तुम्हारी दुकान का मुझे कुछ देना है, कितना है ?"

"फिर हो जायगा।"

"मैं सबका हिसाब चुकता करता जा रहा हूँ। बताओ कितना है ?"

"चार रुपए।"

भन्नन जी ने चारो रुपए गोपाल को दे दिए और वहाँ से चले गए।

कुछ और लोगो का हिसाब करना था उन्हे, सबको ले-देकर रात के आठ बजे घर पहुँचे पत्नी बडी चिन्ता मे उनकी राह देख रही थी—"बडी देर लगा दी तुमने ?"

"क्यो अभी तो आठ ही बजा है ?"

"गाडी कितने बजे जायगी ?"

"दस बजे।"

"मै समझी आठ बजे। चलो खाना खा लो।"

"कई जगह जान पहचानवालो के यहाँ गया। सभी ने बम्बई की विदाई के उपलक्ष्य में थोडा-बहुत खिलाया-पिलाया। अब इस समय खाने को बिलकुल इच्छा नही है।"

"नही ऐसा नही हो सकता, तुम परदेस को जा रहे हो, अपने घर बिना मुँह जूठा किए ही कैसे जाओगे ?"

"बनाया हुआ रख दो साथ में, जब भूख लगेगी तब खा लूंगा।"

"घर से निर्मुख ही जाओगे, नही, ऐसा नही हो सकता।"

"यही तो तुम्हारे झूठे अंधविश्वास है।"

"कुछ भी हो, एक ग्रास तब भी खाना पड़ेगा।"

और दिन होता तो अवश्य यह बात बढते-बढते बडा उग्र रूप धारण कर लेती। आज के बिछुडने पर न जाने कब भेंट हो, भन्नन जी ने इस बात को बडे हलके रूप मे ग्रहण किया और खाने के लिए चले गए।

खा-पीकर भग्गो के साथ फिर बातो मे लग गए। एक ट्रक ही उनके साथ का एक मात्र लगेज था। एक थैला पत्नी के आग्रह पर उन्हे और रखना पड़ा। थैले मे एक डिब्बे में खाने-पीने की चीजें, एक लोटा, एक

चादर, एक धोती और एक अगोछा बलपूर्वक उनकी इच्छा के विरुद्ध ठूँस दिए गये।

"टिकिट खरीद लाया हूँ।" भन्नन जी ने कहा—"और साइकिल रिक्शावाले महेदर से भी कह आया हूँ। वह ठीक गाडी के समय पर मुझे यहाँ से बुला ले जायगा।"

ज्यो-ज्यो गाडी का समय निकट आना जा रहा था भग्गो की अधीरता बढने लगी, पति को सावधान करने के लिए वह बोली—"रेल की बडी लम्बी यात्रा है। एक-से-एक बदमाश मिलेगे किसी के हाथ की कोई चीज खाना मत।"

हँसकर भन्नन जी ने कहा—"भग्गो, क्या बच्चो की तरह मुझे समझा रही हो तुम, मैं लेखक हूँ, बडी तीखी कल्पना रखता हूँ। सैकडो प्रकार के चरित्रो को गढकर लिख चुका हूँ। भले-बुरे, परोपकारी, जेब-कट, पडित-मूर्ख, लुच्चे-लफगे, साधु-चोर सभी के जीवन-चरित्र उतार चुका हूँ, मुझे क्या सिखाती हो तुम ? ससार की सारी काली-सफेदी मेरे हाथो से रूप पाती है—कोई मेरा क्या करेगा ? मै उडती चिडिया के पंख गिन दूँ।"

"मनुष्य को किसी बात का घमण्ड नही चाहिए। मालूम नही किस वक्त कौन-सी ग्रह-दशा क्या करा दे ?"

"अब पलट गई है ग्रह-दशा भग्गो, अब कुछ नही हो सकता। जितने भी बुरे दिन थे, वे सब बीत चुके, अब तो उजाला-ही-उजाला है, बम्बई तो पहुँच जाने दो।"

"बम्बई मे भी सुना है बडे-बडे ठग रहते है और तुम बहुत सीधे हो। हर एक से बातें न करना।"

हँसकर भन्नन जी बोले—"भग्गो, बडी दया आती है तुम्हारी बाते सुनकर। तमाम ठगो के दाँव-पेंच मालूम है, मुझे कोई क्या करेगा ?"

"सडको पर अच्छी तरह चलना। मोटर, बस, ट्राम आदि के नीचे वहाँ दिन मे कितने ही कुचल जाते हैं।"

"वे वैसे ही मूरख होते है जो फुटपाथ को छोडकर जाते है या गलत जगह पर सडक को पार करते है।"

ऐसे ही बडी देर तक उनकी बाते होती रही अचानक बाहर से महेदर का रिक्शा रुका और उसने पुकारा—"पडित जी, रिक्शा आ गया।"

भन्नन जी ने घडी देखकर कहा—"अभी तो बडी जल्दी है।"

"जब जाना ही है तो फिर दस मिनट पहले स्टेशन पर पहुँचना क्या बुरा है?"

भन्नन जी ने जल्दी से एक हाथ में अपना ट्रक उठाया और दूसरे मे थैला। "घबराने की कोई बात नही है।"—कहकर वे चल दिए।

पत्नी ने साश्रु होकर देखा—उनका रिक्शा उस अँधेरी राह में स्टेशन के मार्ग मे अदृश्य हो गया। और पत्नी कुछ देर तक धोती का आचल हाथ में लिए वहाँ खडी रही। फिर उसे आँखो मे रखती हुई भीतर चली गई।

चार

स्टेशन पहुँचकर भन्नन जी ज्यो ही रिक्शा से उतरने लगे, एक मनुष्य उनके हाथ से ट्रक और थैला लेने लगा। भन्नन जी खीझकर बोले—"नही भाई, मुझे कुली नही चाहिए।"

उनके इस निवारण पर भी उस व्यक्ति ने बलपूर्वक उनके हाथ-से दोनो चीजें छीन ली। हँसकर भन्नन जी बोले—"ऐसा भारी नही है ट्रक गोपाल, तुमने क्यों कष्ट किया ? आए कब ?"

"यही दस पाँच मिनट हुए होगे। दूर बम्बई की यात्रा करने जा रहे हैं आप। अवश्य ही आपको विदा देना अपना कर्त्तव्य है गुरुदेव।"

"अभी तो गाडी के आने में बडी देर है।"

"हाँ मैंने सोचा, आपको टिकट लेने में कुछ सुविधा हो जायगी।"

"टिकट मैंने ले लिया है पहले ही। लो तुम अपने लिए, एक प्लेटफार्म ले आओ।"—कहकर उन्होंने गोपाल की तरफ एक इकन्नी बढ़ाई।

"नही फाटक पर कह दूँगा, टिकट कलक्टर मेरी पहचान का है।"

दोनो स्टेशन के भीतर चले दो नबर के प्लेटफार्म में मथुरा की गाडी पकडने के लिए।

"अभी से बडी भीड इकट्ठी हा गई है। जान पडता है, खडे होने को भी जगह नही मिलेगी।"

"आपके पास अधिक सामान तो है नही। खिडकी की राह कूद जाइएगा किसी डिब्बे में, मैं ट्रक दे दूँगा। बैठते-बैठते जगह निकल ही आती है।"

एक स्थान पर सामान रखकर दोनों प्लेटफार्म पर टहलने लगे। बडी विनम्रता से हाथ जोडकर गोपाल बोला—"गुरुदेव, आपको मालूम ही है लिखने का बहुत शौक है मुझे। लेकिन क्या करूँ गाडी चले कैसे ?"

"लिखते ही जाओ, भाई बराबर लिखते ही जाओ। यही एक चाबी है।"

"लिख तो रहा ही हूँ। कोई तरकीब बताइए कि छप भी जाय।"

"जल्दी मत करो। अगर रचनाएँ लौट आती हैं तो घबराओ नही फिर प्रयत्न करो।"

"रचनाएँ छपती भी नही है और टिकट भेजने पर भी लौटती नही।"

"गोपाल, मत्र एक ही है—लिखते रहो, लिखते रहो। इसी अभ्यास से एक दिन भावना खुल पड़ेगी मन के भीतर। कल्पना का प्रवाह फूट पडेगा मानस में, भाषा मँज जायगी और लेखनी मे जादू प्रकट हो जायगा। तब तुम्हें लेख भेजने की जरूरत नही पडेगी, उसके लिए तुम्हारे पास पत्र आने आरम्भ होंगे।"

गद्गद होकर गोपाल बोला—"पैसा भी मिलेगा ?"

"भाई अच्छे अखबारवाले जो लेखको की बदौलत पैसा कमाते हैं वे तो लेखकों को उनका भाग देना अपना पवित्र कर्त्तव्य समझते है। लेकिन कुछ दिन तुम्हे लेख के केवल छप जाने पर ही सतोष करना होगा।"

बडी दबी जबान मे गोपाल ने कहा—"और यह सिनेमा की कहानी ?"

भन्नन जी ने दूर पर रेल की लाइन में देखने की कोशिश की—"गाडी आ गई क्या ? सिगनल गिर गया ?"

"नही तो। मैंने सुना है, बिना कैमरे और साउड रिकार्डिग के टेकनीक का ज्ञान हुए कोई कहानी नही लिख सकता।"

"नही जी।" भन्नन जी ने निराशा के स्वर मे आशा भरते हुए कहा—"नही जी, कौन कहता है ? ये दोनो मशीनो की टेकनीक डायरेक्टर के लिए हैं जरूरी। कहानी-लेखक की अपनी टेकनीक अलग है। देखो गोपाल, मुझे जाने दो बम्बई, मेरा पैर जमने दो वहाँ, फिर धीरे-धीरे सब कुछ हो जायगा। सीढियाँ किस तरह है, तुम्हे मालूम है ?"

अबूझ होकर गोपाल ने कहा—"नही तो।"

"मै बताता हूँ—पहले गीत-लेखक, फिर कहानी-लेखक, तीसरी सीढी मे डायरेक्टर और चौथी मे ?· जब मै तीसरी सीढी मे पहुँच जाऊँगा तो मुझे कहानी-लेखको की जरूरत पडेगी ही। गोपाल, कहानी लिखना एक कला है, बहुत बडी कला है। उसके लिए विश्वविद्यालय की बड़ी डिग्री की अपेक्षा नही, धनी-मानी होने की भी नही, वह जन्मजात है। रूप, वर्ण, लिंग, जाति-भेद से परे किसी को भी वर सकती है, कला।"

"आपकी सगति से बराबर यहाँ मुझे प्रेरणा मिलती रहती थी। मेरे रेस्टोराँ मे भी आपके आ जाने से बडी रौनक रहती थी।"

"मित्र, तुम अब भी मेरे हृदय में हो।"

"वहाँ ठहरने का क्या प्रबन्ध किया है ?"

"भगवान् के भरोसे मर ही उस समुद्र मे कूद पडा हूँ।"

"आप पहले भी कभी वहाँ गए हैं ?"

"नही आज पहली ही बार।"

"दो-चार आदमी आपकी जान-पहचान के तो होगे ही ?"

"एक सज्जन मेरे मित्र हैं तो सही। सुना है, वे एक कम्पनी खोल

रहे हैं। उनके पास काम तो मुश्किल है, पर यह ट्रंक रखने भर को जगह मिल जायगी। इससे अधिक कुछ चाहिए भी नही मुझे। क्यो तुम्हारे परिचय का है कोई ?"

बडी कठिनाई से स्मृति के सागर में जाल डालकर उसने कुछ बाहर निकाला—"हाँ मेरे गाँव का हरीश है वहाँ।"

"क्या करता है ?"

"पत्र तो उसका बडे बढिया दो रगो में उभरे लेटरहेड् मे आता है—बेनू-प्रोडक्शन्स छपा रहता है उसमे। उसी के ऑफिस में काम करता है।"

"पढा-लिखा है क्या ?"

"पढा-लिखा तो कुछ नही है। एक्टर बनने की आशा मे चला गया है वहाँ। अभी तो वह बेनू के ऑफिस को खोलता बन्द करता है। चाय-नाश्ता तैयार करता है। ऑफिस की डाक लाता-ले जाता है।"

"बेनू कौन है ?"

"आप नही जानते ? एक हास्य-अभिनेता है। खूब रुपया उसने कमा लिया है। अब उसे निर्माता बनने की धुन सवार हो गई है।"

"हाँ, उसका नाम सुना तो है मैने। ये तीसरी श्रेणी की हिंदुस्तानी फिल्मे बहुत कम देखता हूँ मै। अब देखनी पडेगी।"

"हरीश उन्ही के ऑफिस में रहता है। बेनू का बड़ा कृपापात्र है। नौकरी जरूर अभी उसकी बहुत साधारण है, लेकिन अगर किसी दिन बेनू ने उसे कोई छोटा-मोटा पार्ट दे दिया तो वह तारा-लोक की तरफ उड़ जायगा थोडे ही समय मे!—इसमे कोई संदेह नही। पढा-लिखा अधिक नही है, लेकिन बड़ा विनयशील और कर्त्तव्यपरायण है। सफाई पसद और सुरुचि-पूर्ण। आप उसका पता अपनी डायरी मे नोट कर लीजिए, सम्भव है कही और प्रबन्ध होने तक वह आपकी सेवा कर सके।"

भंन्नन जी ने जेब से डायरी निकालते हुए कहा—"हाँ लिखा दो।"

"श्री हरीश, मार्फत बेनू प्रोडक्शन्स ऑफिस, ३ पी, दादर मेन रोड, बम्बई।"

भन्नन जी ने वह पता लिखा फिर एक बार पढ़कर पूछा—"कहाँ उतर जाना पडेगा ?"

"दादर जी० आई० पी० स्टेशन में उतरते ही मेन रोड है, ऐसा उसने एक बार लिखा था। कुछ दूर चलकर दो बडे फिल्म स्टूडियो, उन्ही के पास है उसका ऑफिस। उसके कपाउड मे एक तरफ रगवाले की एजसी है और दूसरी तरफ किंडरगार्टन स्कूल।"

"तुम्हे बडी डिटेल में पता याद है।"

"हरीश ने एक वक्त मुझे वहाँ आने को लिखा था, तभी मैंने यह सब पुछवाया था।"

'गए नही तुम ?"

"मै बीमार पड गया था, फिर खर्च की कमी हो गई और फिर हरीश ने लिखा अब अगले साल आना। गाडी अटकी सो अटकी ही रह गई।"

इसी समय दूर पर रेल की सीटी सुनाई दी और यात्रियो मे हलचल मच उठी। भन्नन जी भी गोपाल के साथ दौडकर अपने सामान के पास आ गए। गोपाल ने ट्रक और थैला अपने हाथो मे उठा लिए।

गाडी प्लेटफार्म पर आकर रुक गई। भन्नन जी दौडकर भगवान् का नाम ले एक गाडी का हेंडिल पकडकर उसके भीतर घुस पडे। काफी जगह देख उन्होने अपने भाग्य की सराहना की। इतने मे भीतर से कई आवाजे आईं—"ऐ मरदुआ! कहाँ घुसा चला आता है, देखता नही जनाना डिब्बा है ?"

भन्नन जी का सारा उत्साह धूल में मिल गया! श्रीगणेश जी में दूब रखते ही जो मुँह की खानी पडी, उसे अनुभव कर उनका मुँह फीका पड गया। वे बिना कुछ बोले लौट गए। प्लेटफार्म पर और अधीर हो इधर-उधर डिब्बो की तरफ दौड़ने लगे। सब के द्वारो पर चढ़ने-उतरने

वाले यात्रियो की भीड थी, उसपर बोझा लिए कुलियो की ठेलमठेल ! भन्नन जी अधीर हो उठे और उनकी आँखे भर आईं। क्या करे, किधर जायें ? कुछ सोच ही नही सके। रुँधे हुए कठ से पुकारने लगे—"गोपाल ! गोपाल !"

अचानक गोपाल गाडी के डिब्बे की एक खिड़की से मुँह बाहर निकालकर बोला—"गुरुदेव, मैंने आपके लिए यहाँ जगह कर ली है। आपका सामान भी सब पहुँच गया है। कोई चिता न करे। दरवाजे पर की भीड छँट जाने दीजिए फिर आराम से चढ जाइएगा। अभी गाड़ी बडी देर रुकेगी।"

भन्नन जी के गए प्राण फिर लौट आए। उसका धन्यवाद करते हुए बडी प्रसन्न मुद्रा मे बोले—"वाह ! गोपाल बाबू, तुम्हे कितने आशीर्वाद दूं ? तुम्हारे यहाँ आने को मै एक बेकार बात समझ रहा था। मुझे नही मालूम था, तुम मेरा काम साधने आए हो। अगर तुम न आते तो जरूर मुझे घर को लौट जाना पडता। एक नए क्षेत्र के प्रवेश पर यह प्रथम ग्रास में ही मक्खी का पात था।"

गोपाल बोला—"कोई बात नही गुरुदेव। मै तो आपका सेवक हूँ।"

एक चायवाला पास से अपनी हाथगाडी लुढकाता हुआ चला जा रहा था—"चाय गरम !"

भन्नन जी बोले—"गोपाल बाबू चाय पी लो, ठड मालूम दे रही होगी।"

"नही गुरुदेव, कोई जरूरत नही।"

"अरे पियो भी भाई। कितना बडा काम कर दिया तुमने। नही तो बड़े अपमान से लौटता आज मै।" भन्नन जी ने चायवाले से कहा—"दे जा भाई, दो चाय दे जा।"

चायवाले ने चाय दी। भन्नन जी ने एक बर्त्तन गोपाल की तरफ बढाया गाडी में। चाय पीने के बाद उन्होने दो पत्ते पान के लेकर एक अपने मित्र को देते हुए कहा—"सिगरेट भी पिओगे ?"

बडी लज्जा का प्रकाश कर गोपाल ने कहा—"नही ।"

"तुम पीते तो हो, फिर क्या बात है ?"

"नही, आपके सामने नही । तम्बाकू दे दीजिए थोडा-सा ।"

"धुवाँ भी तो उसी का है जिसका तम्बाकू । फिर उससे मान की रक्षा न हो और इससे हो जाय ! विचित्र रहस्य है ।"—कहकर भन्नन जी ने उसे भी एक चुटकी तम्बाकू की दी ।

भीड छँट गई थी । बैठनेवाले बैठ गए थे और जानेवाले भी चल दिए थे । गोपाल ने भन्नन जी का ट्रक और थैला उनकी सीट पर रख दिया था । वह उठकर बाहर को आने लगा और पडित जी गाडी में चढने लगे ।

दरवाजे के पास बैठे लोगो ने उनका विरोध करते हुए कहा—"कहाँ सिर पर चढे जा रहे हो ?"

"मेरी सीट है भाई ।"

उधर से बाहर को आते हुए गोपाल ने कहा—"आने दो इनके बदले मै उतर जाता हूँ ।"

इस प्रकार सहारा पाकर भन्नन जी आगे बढे अपनी सीट पर । प्लेटफार्म की तरफ ही सिरे पर सीट घेर ली थी गोपाल ने । भीड बहुत थी । मन-ही-मन खूब तारीफ की उन्होने गोपाल के साहस और सफलता की । दोनो चीजे देखकर उन्होने कहा—"गोपाल, बहुत-बहुत धन्यवाद है तुम्हे । अब तुम जाओ । लो यह ।"

हाथ में कुछ द्रव्य छिपाकर देने लगे थे वे । गोपाल ने उसे लेने से इनकार किया । भन्नन जी ने हठपूर्वक कहा—"लो, लेते क्यो नही रिक्शा कर लेना । ज्यादा नही है ।"

गोपाल ने फिर उसे अस्वीकृत करते हुए कहा—"गुरुदेव, इसकी जरा भी आवश्यकता नही है । मै तो आपके केवल आशीर्वाद का भूखा हूँ ।"

भन्नन जी ने हाथ खीच लिया—"नियमित रूप से पत्र लिखते रहना

गोपाल। कभी जवाब देने मे देर हो गई तो इसकी कोई परवा न करना।"

बडी विनय से हाथ जोडकर गोपाल ने कहा—"हाँ गुरुदेव।"

"और लिखन का क्रम कभी न तोडना।"—भन्नन जी कुछ और भी कहना चाहते थे।

बीच ही में उनके पास बैठा हुआ एक धुनिया, जिसके पल्ले उनकी कोई बात नही पड रही थी, बिगडकर बोला—"सामान हटाओ बैठने की जगह पर से। मुसाफिरो को तकलीफ हो रही है।"

'कहाँ रखे ?" भन्नन जी ने भी जरा तेजी से कहा—"ऊपर तो सब तुमने इधर से उधर तक धुनकी, गठरी-मोटरी, रूई-गूदड़ न-जाने क्या-क्या भर दिया है।"

"भरेंगे कैसे नही ? टिकट लिया है। नीचे रख दो।"

"नीचे नही रखते, हमारा कीमती सामान है।"

"कीमती सामान है तो फट्ट किलास का खरीदो टिक्कस।"

"अपना तो सारी दुनिया का काठ-कबाड लिए चल रहे हो ? और हमारा एक छोटा-सा ट्रक तुम्हारी आँख में खटक रहा है।"

"सामान रखना पडेगा नीचे।"—धुनिया बोला।

भन्नन जी की मदद के लिए गोपाल कहने लगा—"भाई, किसी को पहचान कर बात करनी चाहिए। नही जानते तुम वे कौन है ?"

"अपने-अपने घर के सभी राजा-महाराजा हैं।"—धुनिया कहने लगा।

गोपाल बाहर से कहने लगा—"भाई, ट्रक मे इनकी किताबे है। ये बड़े भारी हिंदी के लेखक है। किताबो को पैरो के नीचे कोई नही रखता।"

धुनिए ने मुँह बनाया और अपने एक रूवड का गठरी ऊपर से निकाल कर नीचे डालते हुए कहा—"लो रख लो अपना ट्रक।"

भन्नन जी ने भी बड़े रूखेपन से वह ट्रक उठाया और ऊपर रख

लिया। इतने में गाडी ने सीटी दी, बाहर गए लोग जल्दी से अपने डिब्बो मे घुस पड़े। खिडकी-दरवाजो पर खड़े अपनी-अपनी जगहो मे बैठ गए। दरवाजे बद होने लगे। गाडी चल पडी।

गोपाल ने बडी नम्रता से हाथ जोडते हुए कहा—"गुरुदेव, कृपा रखिएगा। भूलिएगा नही सेवक को।"

"नही गोपाल। बीच-बीच में दीदी के पास जाते रहना।"

"वह तो अपना कर्त्तव्य ही है।"—गोपाल ने गाड़ी के साथ-साथ दौडते हुए कहा।

"अच्छा गोपाल, गुडलक! चीरियो!"—भन्नन जी अपनी सीट पर बैठ गए।

गोपाल ने—"नमस्कार" कहा और मन-ही-मन विस्मय करने लगा, भन्नन जी के उन अग्रेजी शब्दो के प्रयोग पर। वह समझता था, उन्हे अग्रेजी नही आती। बम्बई की ओर प्रस्थान करते हुए—उस अतर-जातीय नगरी मे अग्रेजी की वाक्यावली का फूट निकलना क्यो आश्चर्य का विषय हो!

गोपाल दूरी पर अदृश्य होती हुई उस रेलगाडी को देखकर मन में सोचने लगा—"हे भगवान्! क्या कभी कोई दिन ऐसा भी होगा कि मैं भी इस गाड़ी में चढकर जाऊँगा।" वह चुपचाप अपने नीलामी गरम ओवरकोट की दोनों जेबो मे हाथ डालकर स्टेशन के बाहर निकल गया।

सीट में बैठकर भन्नन जी ने फिर उस धुनिए की तरफ दृष्टि ही नही की और यह निश्चय किया, इस मूर्ख से बिलकुल बात नही करूँगा। वह भी अकडकर बैठा रहा। भन्नन जी के कल्पना-प्रबल मस्तिष्क में भाँति-भाँति की लहरें बनने और टूटने लगी। वे सोचने लगे—"तीसरे दरजे मे भेड़ो की तरह भरे जाने के सिवा यह मानसिक तकलीफ बहुत असह्य है कि इन अपढो के साथ भिड़ जाना पड़ता है। काव्य और साहित्यिक समझ की एक भी खिड़की इनके दिमाग मे खुली नही। क्या किसी

कलाकार को समझ सकते है ये, क्या उसका आदर कर सकते है ?"

खिडकी से ठडी हवा आ रही थी। और लोगो ने भी खिडकियाँ बद करनी शुरू कर दी थी। भन्नन जी ने भी शीशा खीच लिया। फिर एक विचारधारा उनके मन में चल पडी—"लेखक तो बहुत बडी चीज है। अगर वह अपने मन मे बडे-छोटे, ऊँच-नीच, पढे-अपढ, मान-अपमान आदि के झगडे बढा लेगा तो फिर क्या लिख सकेगा ? सत्य कदापि उसकी लेखनी का अनुसरण नही करेगा। वह एकागी, कोरा प्रचारक ही होकर रह जायगा।"

"सारी मानवता उसके चित्रण के लिए है। सब तरह के चरित्र ही उसके आदर्श है। उनसे घृणा कर दूसरे या पहले दरजे में जगह ढूंढना एक कायरता है। ये छोटे-छोटे श्रमजीवी सब मेरे भाई है। मै मसिजीवी होने पर क्यो इनके श्रम से घृणा करूँ ? अपनी विद्या के अनुसार इनकी समझ है। अगर उसमे कुछ अनुदारता और असहन शक्ति है तो मुझे हँसते हुए उसको बर्दाश्त करना चाहिए। नही तो मेरा लेखक होकर साधारण व्यक्तियो से ऊपर उठ जाना—कोरा दभ और पाखड है।"

भन्नन जी ने हृदय को कुछ उदार कर उस धुनिए की ओर देखा। उनकी इच्छा थी उसके साथ प्रेम-भाव से कुछ बातें कर पहला दुर्भाव मिटा डाले। धुनिया अपने साथी के साथ बीड़ी पीता हुआ बडी जोर से हँसने लगा। उसने भन्नन जी की तरफ बडा कटाक्ष किया। भन्नन जी को वह नही पच सका। न-जाने उसका क्या अर्थ लगाकर उन्होने सधि की ओर बढता हुआ अपना हाथ खीच लिया।

उनके सामने की सीट पर एक व्यक्ति ने अपनी बीडी का बडल खोलते हुए उनकी तरफ बढाकर कहा—"लो बीडी पियो।"

भन्नन जी ने बडे आदर भाव से उसे हाथ जोडते हुए कहा—"नही भाई, मैं बीडी नही पीता।"

"क्या काम करते हो ?" उसने पूछा।

"मैं साहित्यिक हूँ।"

"सा-तिकतिक क्या हुआ ?"

"साहित्यिक को नही जानते ? तुम क्या काम करते हो ?"

'रेल के दफ्तर में बाबू हूँ ।"

"पढे-लिखे हो, पर साहित्य को नही जानते। सिर्फ रोटी के ही पीछे दौडने को जीवन का चरम लक्ष्य समझे बैठे हो ? हमारे मानसिक भोजन का नाम साहित्य है। शरीर की भूख-प्यास को ही सब-कुछ समझ बैठना पशुता है।"

"आप दवा का काम करते हैं क्या ? किसी इजेक्शन के एजेंट है ?"

"अफसोस ! हमारे पढे-लिखो की जब यह हालत है तो मूर्खो की क्या दशा होगी ? भाई, साहित्य वह इजेक्शन है—जो एक मनुष्य नही, सारे राष्ट्र को नवीन चेतना और नव जीवन से ओत-प्रोत कर देता है। साहित्य ही वह मत्र है जिसके द्वारा धरती पर की कौटुबिकता बढाकर हम उसे स्वर्ग मे बदल सकते है । दुनियाँ मे जो बहुत से बडे-बड़े काम लडाइयो से सिद्ध नही हो सके, दंड और कानून के भय से नही किए जा सके, वे साहित्य की मदद से बड़ी आसानी से सम्पन्न हो गए।"

बाबू कुछ शरमाकर बोले—"मुझे माफ कीजिएगा। आप तो बडे भारी पडित जान पड़ते है।"

"और नही तो क्या ? मैंने दो दर्जन से ऊपर किताबे लिखी है। मेरा नाम श्री भानुदेव शर्मा है। जान पडता है, तुमने हिंदी नही पढी है।"

"नही।"

"बस यही बात है। देखो मैं अब बम्बई जा रहा हूँ। मुझे सिनेमा-वाले कब से बुला रहे थे। लेकिन मेरी कई शर्तों को नही मान रहे थे।"

"देने-लेने पर झगड़ा चला था क्या ?"

"अजी देना-लेना तो मामूली चीज है। मुझे किताबो की छपाई से ही अच्छी आमदनी हो जाती है। वे मेरी चलाई हुई कलम पर कलम चलाना चाहते थे। मैं लेखक हूँ, कैसे यह अपमान सहा जा सकता है ?"

बाबू ने अपनी जेब से एक टाइम टेबुल निकाला और उसके भीतर पिन से नत्थी किए हुए कई कागज हाथ मे लिए और भन्नन जी को देते हुए बोला—"मैं मथुरा के जंकशन स्टेशन पर काम करता हूँ। चार साल हो गए मुझे काम करते-करते मैं जहाँ का तहाँ पडा हुआ हूँ।"

उस कागज को देखते ही भन्नन जी की आँखो मे नीद छा गई और उन्होने ऊँघना शुरू किया।

बाबू बोला—"पडित जी, सुन रहे है न आप ?"

भन्नन जी ने कहा—"हाँ भाई, कई रोज का जागा हुआ हूँ, क्या कागज है तुम्हारा ? रखो भी इसे, मैं किसी दफ्तर का लेखक थोडे हूँ। मैं तो हिन्दी-साहित्य का उपन्यास लेखक हूँ। हिन्दी का कोई उपन्यास तुमने लिखा हो तो मै उसका सशोधन कर सकता हूँ, उसकी किसी आलोचना के पत्र मे बढिया आलोचना लिख सकता हूँ। अपने दस्तखत देकर उसकी भूमिका लिख सकता हूँ, जिससे उसकी बिक्री बढ सकती है।"

बाबू बोला—"यह अर्जी मैने भेजी थी, दफ्तरवालो ने जो-जो भी कागज माँगे थे, वे मैंने सब इसमे लगाकर उनके पास भेज दिए थे। अब फिर यह केस मेरे पास लौट आया है। जरा इसे पढकर मुझे राय तो दीजिए क्या करूँ। पडित जी।"

भन्नन जी ने आँखें बन्द किए हुए ही कहा—"तुम समझे नही, मैं दूसरी चीज का पंडित हूँ और यह दूसरा बबाल है।"

"आप थोडे ही मे समझ जायेंगे। जरा देखने का कष्ट भर कर दीजिए। समझ मे कुछ आ जाये तो बना दीजिएगा। आपने इतनी बडी-बडी किताबे लिखी हैं—इन दो-चार कागजो की लौट-फेर में क्या रखा है ?"

भन्नन जी अगर उससे साफ यह कह देते कि अंग्रेजी नही आती तो पिंड छूट जाता लेकिन वे समझे अगर उसका अज्ञान उस पर प्रकट कर दूँगा तो फिर इसके सामने मेरी कोई इज्जत नही रह जायगी।

वे बोले—"भाई, इस समय तो तुम माफ करो एक तो मेरा दिमाग

सही काम नही करेगा। सिर में जोर का दर्द हो रहा है।"

बाबू ने उत्तर दिया—"मेरे पास सिर दर्द की अक्सीर दवा है, अभी दवा खाते ही गायब हो जायगा। बडी मेहरबानी होगी आपकी। आपके तजरबे और इल्म को देखकर मुझे ऐसा जान पडता है आप जरूर मुझे सही राय देंगे।"

"भाई, मैं ऐसी दवाइयाँ नही खाता, इनका दिल पर बडा खराब असर पडता है। मेरी सही राय तुम्हारे लिए यही है, तुम भी कभी भूलकर इनका इस्तेमाल न करना।"

"मुझे यह उम्मीद नही थी, आपके जैसा भलामानस मुझे इस तरह नाउम्मीद कर देगा।"

"सुबह मथुरा जंकशन कितने बजे पहुँचेगी यह गाडी ?"

"साढे आठ-नौ बजे।"

"बस ठीक है, वहाँ टाइम मिल जायगा।"

"आप बम्बई जायेंगे ?"

"हाँ।"

"मेल से ?"

"हाँ।"

"बस बारह बजे तक वह मिलेगी आपको।"

"ठीक है। तीन घटे नहा-धो सध्या-पूजा खाने-पीने के लिए काफी से कही ज्यादा वक्त है। बस वही तुम्हारे कागज देख दूँगा। तुम भी तो वही उतर जाओगे न ?"

"हाँ मेरे गरीबखाने में ही चले चलिएगा। पास ही तो क्वार्टर है।"

"नही भाई, मुझे दूसरी जगह बडी अडचन मालूम देती है। फिर मैं पूजा-पाठ करता हूँ। पूरा एक घटा लग जाता है।"

बाबू बोला—"इस अरजी में साहब ने एक नोट लगाया है, ऐसी घसीट लिख मारी है कि हाँ या ना कुछ समझ ही नही पड़ता, जरा इतना तो पढ़ दीजिए।"

"अब तुम मेरी नीद न गडबडाओ। रात को मै बिना चश्मे के नही पढ सकता और चश्मा मेरे ट्रक में बन्द है। कह तो रहा हूँ तुमसे सुबह होने पर मथुरा पहुँचकर सारे कागज पढ दूंगा और जो कुछ मुझसे हो सकेगा तुम्हे बता दूंगा।"—भन्नन जी ने पूर्ववत् आँखें बन्द किए-ही-किए कहा।

वह रेल का बाबू फिर कुछ न बोला। भन्नन जी को भला नीद कहाँ आती ? उनके मानस में तो बबई की वह नृत्य-गीत से कल्लोलित और रूप-रस मे परिप्लावित सिनेमा की दुनिया चक्कर काट रही थी। कभी मनसूबे करते-करते उनका दिल मजबूत हो जाता और सफलता उनकी जेब मे ही दिखाई दे जाती और फिर कभी दूसरी तरह की साँसे चल जाने पर वह प्रकाश अस्त हो जाता और वे उस निबिड तिमिर मे ठोकरे ही खाते रह जाते।

भन्नन जी ने एक बार अधखुली आँखो से उस रेल के बाबू को देखा, वह अपने केस के पन्नो को उलट-पलट रहा था। भन्नन जी मन-ही-मन बहुत शरमाए। सोचने लगे—"इस युग मे अँग्रेजी का न जानना बडी शर्म की बात है। वैसे साहित्यिक के लिए भावना, अनुभूति और उन्हे स्पष्ट करने के लिए सिर्फ एक भाषा-माध्यम की आवश्यकता है। लेकिन अँग्रेजी इस युग की विश्व-भाषा है। हमारे कितनी ही पूर्णता क्यो न हो, बिना उसके हम अधूरे ही हैं। यह कमजोरी बम्बई जाकर बहुत भयानक हो जायगी। सुना है, वहाँ तो आफिस बॉय, बैरा-खानसामा सब-के-सब अँग्रेजी ही बोलते है। भगवान भला करे इस रेल के बाबू का, इसने बम्बई जाते समय सबसे जरूरी बात पर ध्यान आकर्षित करा दिया। अब बम्बई पहुँचते ही अँग्रेजी सीखना आरम्भ कर दूंगा।"

सहसा उनके मन में कई अडचने दिखाई देने लगी—"लेकिन अँग्रेजी कैसे आयगी ? किसी के पास जाकर खुले आम सीखना तो बड़े भारी अपमान की बात होगी। एक कोष की सहायता से सीखा तो जायगा। भीतर की लगन ही शक्ति है। लेकिन सुना है अँग्रेजी का उच्चारण

बडा दोषपूर्ण है बिना गुरु के नही आता । फिर क्या होगा ?"

इसी उधेड-बुन में उनका बहुत सा रास्ता कट चला था । रेल घड-घडाती हुई रात्रि के अन्धकार में मथुरा की ओर अपनी पूरी शक्ति से चली जा रही थी । अन्त में भन्नन जी ने अपना प्रश्न हल कर ही लिया । उन्हें हिन्दी-अँग्रेजी-शिक्षक नाम की एक पुस्तक याद आ गई—"वह बडी अच्छी पुस्तक है । उसमे उच्चारण भी है । उसके प्रकाशक ने उसके विज्ञापन में तो लिखा है सात दिन में किसी को भी इस किताब की मदद से अँग्रेजी आ सकती है । उसने कितनी ही झूठ बोली हो सत्तर दिन मे तो आ ही जायगी—क्या हुआ ? ढाई महीने से भी कम !"

ज्यो-ज्यो बम्बई की ओर गाडी चली जा रही थी, त्यो-त्यों अब भन्नन जी के मन में ठहरने की जगह का प्रश्न ही सर्वोपरि तीक्ष्ण होकर गड रहा था । उनका एक परिचित मित्र वहाँ सिनेमा में काम करता तो था । कई वर्षो से उसके कोई समाचार उन्हे मिले नही थे, मालूम नही वह कहाँ था । कभी वे सोचते पाँच-सात दिन किसी धर्मशाला में कट जायेगे, फिर उन्हे गोपाल के दिए हुए पते का भरोसा हो गया—"जब तक कही कुछ न हो जायगा, तब तक यह स्थान तो है । हमारे बडे मित्र हमें राह बता देने में बडे प्रवीण होते है और छोटे मित्र सच्चे हृदय से हमारी सहायता करते हैं ।"

तैरते-उडते, कामनाओ के बीच से होकर भन्नन जी चले जा रहे थे—कभी निद्रा, कभी तन्द्रा और कभी जागृति में—कि सुबह हो गई । भन्नन जी ने धीरे-धीरे आँख खोलकर देखा । हाथरस का स्टेशन आया रेल का बाबू बाहर जाकर मुँह-हाथ धो आया और भन्नन जी से बोला—"उठिए पडित जी चाय पीजिए ।"

पडित जी ने निद्रा के वश में होने का अभिनय कर कहा—"ऊँहूँ, मैं बिना नहाए चाय नही पीता ।" वे फिर सो गए ।

नौ बजे के लगभग जब मथुरा जकशन आने को हुआ तो रेल का बाबू बोला—"उठिए साहब, अब तो स्टेशन आ गया । गाडी बदलनी

होगी आपको।"

चकराकर उठे भन्नन जी। जल्दी से उठकर अपना ट्रंक निकालने लगे। रेल के बाबू ने धीरज बँधाया—"बडी देर रुकेगी गाडी।"

भन्नन जी फिर बैठ गए। रेल के बाबू ने फिर वह कागज निकालकर उनके हाथ मे देते हुए कहा—"तब तक यह कागज देखिए तो सही।"

बुरी तरह से मुँह बनाकर भन्नन जी बोले—"बडे अजीब आदमी हो तुम। रात भर के जाडे और जागरण से कष्ट में हूँ। दिशा-मैदान जाऊँगा, नहाऊँगा-धोऊँगा—कुछ चाय पिऊँगा जब दिमाग ताजा होगा तभी तो लिखने-पढने का काम भी होगा।"

"मेरे घर चलिए वहाँ सब सुभीते रहेगे। तीन घटे का समय है।"

"नही भाई, मै कह चुका हूँ तुमसे। यहाँ स्टेशन में सुभीता है।"

"अच्छी बात है, मैं घर हो आता हूँ। आप भी तब तक नहा-धो लीजिए। कहाँ पर मिलेगे ?"

"बडी लाइन के प्लेटफार्म पर।"

"बात ऐसी है पडित जी मेरा विश्वास हो गया है आप पर।"

मन-ही-मन घबराकर पडित जी बोले—"कोई बात नही, ऐसा भी कभी-कभी हो जाता है। आदमी को आदमी के काम आना चाहिए।"

रेल बाबू के चले जाने पर भन्नन जी ने एक सज्जन के पास थोडी देर के लिए अपना ट्रक और थैला रख दिया। एक पुडिया मे से थोडा चूरन-सा निकालकर फाँका, उसके ऊपर पानी पिया फिर एक चुटकी तमाखू को मुँह में दबा जल्दी-जल्दी मे शौच गए और नहा आए। फिर अपना ट्रक और थैला उठाकर चले गए मुसाफिरखाने मे। वहाँ थैले में से निकालकर कुछ नाश्ता किया और चायवाले से लेकर चाय पी। आधे घटे में यह सब कुछ हो गया। अब उन्हें चिन्ता हुई रेल बाबू के लौट आने की।

एक विचार उनके मन में आया—"कही शहर की तरफ चल दिया जाय। अभी तो ट्रेन का ढाई घटा है।" फिर अधिक देखा-सुना शहर न

होने के कारण उन्होने उस विचार को स्थगित कर दिया ।

'फिर क्या किया जाय ?" कैसी झूठी बनावट के पीछे मनुष्य पागल है। दो शब्दो में अगर भन्नन जी उससे कह देते—"मुझे अँग्रेजी नही आती ।" तो कितने हलके हो जाते वे ? वास्तविकता बुद्धि की है, भाषाओ के ज्ञान से मनुष्य का क्या महत्त्व है ?

एक हल्की ऊनी चादर भग्गो ने न जाने कब उनके थैले में ठूँस दी थी। रात भर जाडे से अकड़ते चले आए थे बिचारे । अब खाना निकालते समय नजर पडी उनकी उसपर । पत्नी और उनके बीच में बीसियों मीलो का अन्तर पड गया था और वह निरन्तर बढती पर ही था। पत्नी की उस दूरदर्शिता पर वे प्रसन्न हो उठे—"बडी सूझवाली है यह भग्गो। नजदीक रहने से किसी के गुण इतने नही दिखाई देते। क्या बढिया चीज उसने मेरे थैले मे रख दी ? अगर मेरी आँखे होती तो रात भर वैसे जाडे मे न ठिठुरता। कोई बात नही ! जाडे से भी भयानक जो सकट इस समय मेरे सिर पर आया है, वह तो इसकी सहायता से हल हो जायगा। जय गुरुदेव !"

पास ही एक बेंच खाली था भन्नन जी ने उस पर जाकर अपना ट्रक रख दिया, उसके आगे थैला जमा अपना सिर रख लेट गए और सिर से पैर तक उस ऊनी चादर से ढक लिया । मन-ही-मन खुश होकर बोले—"अब क्या पता लगा सकेगा वह रेल का बाबू ! भला यह भी कोई बात हुई, उसकी अर्जी के लिए रास्ता ढूढनेवाला कौन हुआ मैं ? उसकी तरक्की रुक गई है तो क्या उसके आगे मैंने रोडे अटका रखे हैं ? दफ्तर मे जाये, बाबू लोगों की अभ्यर्थना करे । जिसको जैसी-जितनी भेंट चढती हो वह सामने रखे, काम बन जायगा । मैं साहित्यिक आदमी, क्या जानूँ थे धंदे ! कभी जीवन मे न नौकरी की, न कही को अर्जी भेजी ।"

रात भर के जागे तो थे ही आँखे लगने लगी, साथ ही यह भय भी होने लगा कि कही गाडी न छूट जाय । उन्हे वहाँ पडे-पड़े करीब आधा

घटा हो गया। वे सोचने लगे—"अब तो वह रेल का बाबू चक्कर काट-कर चला भी गया होगा। चलूँ बडी लाइन के स्टेशन में जाकर गाडी की प्रतीक्षा करूँ। लेकिन अभी तो दो घटे है।"

भन्नन जी इसी उधेड-बुन मे पडे थे कि किसी ने उन्हे झकझोरना शुरू किया। घबराए वे—"क्या कट्टी पर से थैला-ट्रक या हाथ-पैर खुला रह गया और रेल के बाबू ने पहचान लिया मुझे ?"

"ऐ उठो, कौन है ?"—किसी की कर्कश आवाज थी।

भन्नन जी को धैर्य हुआ, वह आवाज रेल बाबू की नही थी। उन्होने कराहना शुरू किया—"अऽऽऽ, हूँऽऽऽ"

"उठो, क्या यह सोने का वक्त है ?"

भन्नन जी ने मुँह खोलकर देखा तो एक पुलिस का सिपाही उन्हे अपने दडे से कुरेदने लगा था। भन्नन जी ने बडी विनम्रता से कहा—"दरोगा साहब, बडी जोर का बुखार हो गया है। अँऽऽऽ, अँऽऽऽऽ, जरा देर सो लेने दीजिए कृपा होगी।"

"यह बेंच मुसाफिरो के बैठने के लिए है, इस तरह अस्पताल बना देने के लिए नही। कहाँ जाओगे ?"—जरा नरम पडकर सिपाही बोला।

"अँऽऽऽ दरोगा साहब, बम्बई जाऊँगा।"

फिर रोब से बोला सिपाही—"बम्बई जाओगे तो वहाँ बड़े स्टेशन मे तुम्हे जाना चाहिए या यहाँ सो जाना ?"

मुँह ढकते हुए भन्नन जी बोले—"दरोगा साहब, मैं हिंदी का बहुत बडा साहित्यकार हूँ।"

"क्या माने ?"

"किताबे लिखता हूँ। दर्जनो किताबे लिख चुका हूँ। साथ में लाया हूँ, आप कहे तो आपको दिखा दूँ। कपडा पहनने का शौक नही है। सीधा-सादा आदमी हूँ। इसी से हरएक पहचानता नही।"

"बस-बस हो गया। तुम किताबे लिखते हो तो क्या उनमे ऐसे ही बेकायदा बाते करना पब्लिक को सिखाते हो ?"

"बड़ी दया होगी दरोगा साहब, दस-पाँच मिनट और आराम कर लेने दीजिए। मुझे अपनी लाइन और अपनी गाडी का समय अच्छी तरह मालूम है। मै अभी उठकर चल दूँगा। अँऽऽऽऽ।"

पुलिस का सिपाही चला गया भन्नन जी के अभिनय पर। उन्होने जरा-सा मुँह खोलकर देखा। दो मुश्किलो मे उनकी नाव फँस गई थी। उन्होने भग्गो की रखी हुई उस ऊनी चादर की फिर तारीफ की जिसके कारण उन्होने उन दोनो मुश्किलो पर समान भाव से विजय पाई।

एक कुली से उन्होने पूछा—"पजाब मेल आ गई ?"

"अभी से कहाँ आ गई ? अभी दो घटे हैं। कुली कर रखा है क्या ?"

"नही भाई ज्यादे सामान नही है।"

"सामान नही है, नीद तो है। कुली कर लो और मजे से सो रहो। गाड़ी के टाईम से पन्द्रह मिनट पहले तुम्हे उठा ले जाऊँगा और मजे से सीट मे बिठा दूँगा। बडी भीड है। तुम्हे सीट न मिल सकेगी।"

"भाई सामान तो सिर्फ एक छोटा-सा ट्रक है। कितने पैसे लोगे ?" भन्नन जी ने पूछा।

"एक रुपया।"

"एक रुपया ? लूट लोगे क्या किसी को ?"

"तुम्हारी मर्जी। मेहनत के पैसे लूँगा। पहले देख लेना, फिर देना। आज बडी भीड है।"

"नही भाई, एक चवन्नी दूँगा।"

कुली मानो उस चवन्नी पर थूककर चल दिया और भन्नन जी ने फिर चादर तान ली। अभी दो घटे का भरोसा था उन्हे।

दस-पन्द्रह मिनट और बीतने दिए उन्होने। फिर चादर फेंककर उठ खडे हो गए—"इस तरह अपने विद्वान् बनने की चेष्टा से मैं मूर्ख बन रहा हूँ। कह दूँगा मै साफ उससे, मुझे अग्रेजी नही आती। चोर की भाँति मुँह छिपाना पड़ रहा है ? क्या व्यास-बाल्मीकि अग्रेजी ही जानते

थे ? कालिदास-तुलसी अंग्रेजी के ही विद्वान थे ? बिना अंग्रेजी के ज्ञान के भी मनुष्य साहित्यिक हो सकता है।"

भन्नन जी ने उस चादर को थैले में ही पैक कर दिया और माथा ऊँचाकर बड़ी लाइन के स्टेशन की तरफ बढ़े। फाटक पर टिकट चेकर ने उनका टिकट माँगा। टिकट दिखाकर वे आगे बढ़े।

पाँच

"मनुष्य अपने विचार का बदी है। उसका मन उसका लौह कारागार है। भीतर-बाहर के असाम्य पर वे बडी बडी दीवारे अपने-आप उठ जाती हैं जिनके भीतर वह घिर जाता है। जैसा मन मे, वैसा वाणी और कर्म मे—इसी एकता का नाम ज्ञान है। यह ज्ञान उन दीवालो को भूमिसात् कर मनुष्य को स्वतत्र कर देता है, यही मुक्ति है।"—सोचते-सोचते भन्नन जी ने बडी लाइन के स्टेशन मे प्रवेश किया।

कुछ लोग आकर बैठने लग गए थे वहाँ। एक से पूछा उन्होने—"भाई, पजाब मेल कहाँ पर आयेगी?"

"अभी उसके आने में दो घंटे की देर है। आयेगी यही पर।"—उसने जवाब दिया।

भन्नन जी ने ट्रंक और थैला वही पर रख दिया। हठात् उन्हें याद आई—"आज पूजा भी नही की और बिना पूजा किए ही खा-पी लिया।" बड़ी ग्लानि हुई उन्हे। फिर अपने-आप मन को समझाने लगे—"बीमारी

और यात्रा मे नियमो के टूट जाने से कुछ नही बिगडता।"

अफीम का-सा नशा है पूजा-पाठ का भी। जब तक अभ्यास के मुताबिक दुहरा नही लिया जाता मनुष्य को चैन नही पड़ता। नीद का नशा भी अब भन्नन जी के दिमाग मे घूमने लगा था।

"दो पेडे ही तो खाए है मैंने, अनाज थोड़े खाया है ? जब चाय अशुद्ध नही है तो पेडे कैसे अशुद्ध हो गए ? दूध-चीनी चाय मे भी और दूध-चीनी के बने पेडे भी।"—भन्नन जी ने अपने मन में जमी हुई सारी ग्लानि धो डाली।

आदमियो की भीड़ से दूर प्लेटफार्म के एक कोने में उन्होंने अपनी ऊनी चादर चौहरी कर बिछाई। ट्रक सामने कर उस पर अपने पाठ की पुस्तक रख धीमे-धीमे स्वरो मे पाठ करना आरम्भ किया। प्रायः एक घटा समय इस धदे मे बीत गया होगा।

अब तो प्लेटफार्म पर बम्बई की गाडियो से जानेवाले यात्रियो की भीड बढने लगी थी। पडित जी ने भी जल्दी-जल्दी अपनी पूजा का अमल पूरा किया। फिर कुछ खा-पीकर पोथी कबल थैले मे रख उसी ओर पैर बढाए। अब उनके रेल बाबू के आने का भय तिरोहित हो गया था।

ट्रक और थैला एक स्थान पर जमाकर वही पर विराजमान हो गए। भाँति-भाँति की तरगें मन में मे उठ रही थी। भन्नन जी का साहित्यिक पूरे वेग से उनके भीतर जाग रहा था। आस-पास के तीसरी श्रेणी के यात्रियो से भला वे क्यो बातें करने लगते ? अपनी अलग दुनिया बनाकर वे एक कापी में कुछ लिखने लगे।

तब उनके खूब एकाग्रता बढ गई थी। समय का ज्ञान खो गया था। वे लिख ही रहे थे कि यात्रियो में शोर हो उठा—"गाडी आ गई !"

जल्दी से कापी बद कर उठ खडे हो गए भन्नन जी। अपने दोनो हाथो में अपनी दोनो अददो को लिए आनेवाली गाडी के लिए तैयार हो गए। मन-ही-मन अपने तमाम देवी-देवताओ को मनाने लगे कि गाडी में जगह मिल जाय।

गाडी पिछले स्टेशन से ही खचाखच भरी हुई आई थी और उस स्टेशन में भी काफी भीड थी। भन्नन जी एक डिब्बे से दूसरे डिब्बे मे दौड़ते रहे कभी आगे कभी पीछे। कही भी भीतर घुसने का मार्ग नहीं निकाल सके। जहाँ भी गए प्रवेश न पा सके। अब तो वे सोचने लगे—"कुली को एक रुपया दे देने मे कोई घाटा न था।"

अब उन्हें वह रेल बाबू भी याद आने लगा। शायद किसी उपाय से वह उन्हे गाडी में सवार करा देता। लेकिन अंग्रेजी का अज्ञान दिखा देने पर क्या उस पर उनका कोई रोब रह जाता ?

फिर चेष्टा की उन्होनें एक बार, एजिन से लेकर गार्ड के डिब्बे तक दौड़ लगाई। इतनी देर से आनेवाले को फिर सभी दुतकार देते हैं। कई जगह अनुनय-विनय की, कोई द्रवित नही हुआ। बम्बई मे अपना बडा जरूरी काम बताया, किसी ने कान नही दिए। अपने साहित्यिक होने का सबूत दिया, किसी ने जगह नही बनाई। उस समय भन्नन जी सोचने लगे—"कितना पिछडा हुआ मेरा यह देश है? राष्ट्र-भाषा के साहित्यिक की यह दुर्दशा ! अगर मै किसी महकमे का कोई चपरासी भी होता तो मेरे बिल्ले की चमक से मुझे जगह मिल गई होती।

एकाएक उनके दिमाग में एक तारिका चमक उठी। दूसरे दर्जे के सर्वेंट क्लास पर उनकी नजर पडी। बडे धीरज से उन्होने उसकी चाबी घुमाई।

"आगे चलो, यह दूसरा दर्जा है।"—भीतर से एक पग्गडधारी मनुष्य बोला। उसके बाएँ कन्धे पर जनेऊ की दिशा में एक चपरास लटक रही थी, उसमे पीतल के प्लेट पर कुछ अक्षर थे, भन्नन जी ने उन्हें पढ़ने की कोई कोशिश नही की।

वे बोले—"हमारा भी दूसरे ही दरजे का टिकट है।"

दूसरे आदमी ने कहा—"दिखाओ टिकट।"

"टिकट-कलक्टर हो क्या तुम ?"—उस समय भन्नन जी को फिर अंग्रेजी का अभाव खटका। अगर अंग्रेजी आती होती तो ऐसा मुँहतोड़

जवाब उसे देते कि शेष जीवन-भर वह उसके माने टटोलते ही रह जाता। फिर भी उन्होने दरवाजा खोल ही लिया और उसके भीतर प्रविष्ट हो गए।

दोनो ने फिर आवाज मिलाकर कहा—"यह दूसरा दरजा है।"

"नमस्ते भाई साहब।" बडे आदरपूर्वक दोनो को हाथ जोडकर उन्होने कहा—"आपने क्या मुझे बेपढा समझ रखा है। मेरी योग्यता का सबूत इस ट्रक के भीतर है अभी पता चल जायगा आपको। आप कौन साहब है, कहाँ तक जायेगे ?"

चपरासधारी बोला—"मैं हूँ इनकमटैक्स ऑफिसर साहब का चपरासी और ये हैं बडे साहब के बैरा। मैं पूना जाऊँगा और ये जावेगे बम्बई।"

"धन्यभाग्य ! बडी दूर तक के साथी आप लोग मिल गए, भई नदी-नाव का सयोग है। नही तो कहाँ के तुम और कहाँ का मैं ?"

चपरासी बोला—"लेकिन भाई साहब, आप भी तो बताइए आप किसके नौकर है ? यह तो नौकरो का दर्जा है।"

"तुम एक का कहते हो मैं तो पाँच साहबो का नौकर हूँ। पाँचो एक-से-एक है। गाडी चलने दो सब बताऊँगा। मैं साहित्यिक हूँ।"—भन्नन जी एक बेंच के सिरे पर जरा-सी जगह बनाकर जम गए।

बैरा और चपरासी दोनो में से किसी ने भी इतना बड़ा लफ्ज ऐसी अजीब आवाज में कभी सुना ही नही था। दोनो ने एक दूसरे को सिर से पैर तक देखकर फिर भन्नन जी पर नजर डालकर कहा—"ऐसी बात तो हमने कभी जिंदगी मे सुनी ही नही।"

बैरा बोला—"मै अब तक अग्रेज की ही नौकरी कर रहा हूँ, उसने कभी गुस्से मे भी ऐसी बात मुँह से नही निकाली।"

"भाई, यह तो हमारी संस्कृति की बात है, उसे क्या पड़ी थी जो वह उसे जगाता। मैने तुमसे कहा नही मै उपन्यास लिखता हूँ—कहानी-किताब !"

चपरासी ने बैरा को समझाते हुए कहा—"तोता-मैना ! आ गई होगी तुम्हारी अकल में ?"

बैरा ने कुछ मौन स्वीकृति दी।

चपरासी बोला—"वे कहानियाँ क्या सचमुच की हैं ? अब भी वैसा होता है क्या ?"

भन्नन जी बोले—"एक मिनट में बता देने की बात नहीं है यह। भगवान ने जब आप लोगो का सत्सग दिया है तो आपकी लियाकत के मुताबिक मैं बताऊँगा।" भन्नन जी ने अपने ट्रक की तरफ इशारा किया।

नीचे फर्श पर एक बोरे का कोट पहने सिर और दाढी के बाल बढाए एक अजीब आदमी बैठा था। उसने भन्नन जी के ट्रक को बडे गौर से देखा। एक ट्रक उसके पास भी था पडित जी के ट्रक से जरा बडा, बडी हिफाजत से वह उसे सँभाले हुए था।

भन्नन जी को जब अपनी सीट का भरोसा हो गया तो उन्होंने पूछा—"यह आदमी कौन है ?"

उस कमरे मे सिर्फ यही चार आदमी थे, लेकिन सारी जगह दोनो साहबो के लगेज से घिरी हुई थी। बडे-बडे पाँच लोहे और चमडे के बक्स, टिफिन कैरियर, वेक्यूम फ्लास्क, टोप केस, एक गॉफ स्टिक का केस, एक बन्दूक का बक्स, एक बेत के बक्स में क्राकरी-कटलरी और सबसे अद्भत एक जालीदार डलिया में गर्दन बाहर किए तीन मुर्गियाँ।

भन्नन जी की ध्वनि पाकर वह आदमी खुद ही अपना परिचय देने लगा—"मैं हूँ बिल्लौर का स्टेशन-मास्टर और तार बाबू। मैं ही हूँ वहाँ का बुकिंग क्लर्क और टिकट-कलक्टर। एक दिन जरा गाँजे के नशे में मैंने फोर अप से एक मालगाडी भिडा दी। जान-माल का कोई नुकसान नही हुआ था। रेलवे के दो-तीन डिब्बे जरूर टूट गए थे। ब्रीच ऑफ ड्यूटी का बहुत बडा इलजाम मेरी खोपडी पर थोप दिया गया और मैं निकाल दिया गया नौकरी पर से।"

चपरासी ने अपने सिर पर हाथ की उँगली ठोकी। उसका मतलब

था इस आदमी का दिमाग गोल हो गया है।

भन्नन जी चपरासी का इशारा समझ गए। इस बात से और भी अधिक खिच गए वे उसकी तरफ। मानो उनके कल्पना-लोक का कोई धूमिल नक्षत्र, प्रत्यक्ष चरित्र बनकर उनके सामने आ गया।

वह कहता जा रहा था—"जब मेरी स्त्री और उसके गोद का बच्चा दाने-दाने और बूंद-बूंद को हैरान होने लगे तो मुझे तमाम अफसरो के पैरो पर अपनी टोपी रखनी पडी। अन्त मे उनको पसीजना ही पडा और उन्होने मुझे नौकरी दे दी। लेकिन स्टेशन-मास्टरी नही, एक छोटे-से स्टेशन का माल बाबू बना दिया।"

गाडी ने सीटी दी और गाडी चल पडी। भन्नन जी ने मन-ही-मन भगवान को सैकडो धन्यवाद दिए। उस दरजे मे सिर्फ दो बैंच थे। दोनो मे चपरासी और बैरा ने अपना-अपना बिस्तर पहले ही से जमा रखा था। उनके बिस्तरो के बाद जो-कुछ जगह बाकी रह गई थी, उसमे उन्होने अपने-अपने साहबो का सामान रख दिया था।

भन्नन जी बैरा की तरफ के बेंच में गुंजायश पाकर बैठ गए थे। गाड़ी जब चलने लगी तो उन्होने गाडी पर दोनो पैर जमा पीठ के बल सामान कुछ और खिसका दिया बैरा की तरफ।

बैरा बोला—"हैं! है! तुम तो उँगली पकडकर पहुँचा पकड़ने लगे।"

भन्नन जी उठकर बोले—"नही भाई साहब, अगर आपको तकलीफ होती है तो मैं बैठ जाऊँगा जमीन पर स्टेशन मास्टर साहब के साथ।"

स्टेशन मास्टर हँसा—"स्टेशन मास्टरी रही कहाँ? लेकिन था एक दिन जरूर!" उसने अपने बोरे के कोट के भीतर से पिन किया हुआ एक बिल्ला निकालकर भन्नन जी के हाथ मे दिया।

इतनी अँग्रेजी जानते ही थे भन्नन जी। चाँदी की कलई खुल चुकी थी उन हरूफो पर से और पीतल दिखाई पडने लगा था। उन्होने धीरे-धीरे मन में पढा—एस-टी-ए-टी-आए-ओ-एन फिर तो बेधडक बोल उठे वे—"स्टेशन मास्टर!"

"जीते रहो खूब पढातु मने। यही था मेरा बिल्ला। गरमियो में सफेद और जाडो में काले कोट पर लगाता था मै इसे। और किसी मुसाफिर को पूछना नही पडता था कि स्टेशन मास्टर कौन है ? इसे लौटा दो कह रहे थे। मै क्यो लौटा देता ? यही तो एक सबूत है मेरी स्टेशन-मास्टरी का, नही तो पतियाता कौन ?"

उसने अपनी कहानी मे एक यति दी। टोपी के किनारो में उँगली घुमाकर उसने एक बुझाकर रख दी गई बीडी का टुकडा निकाला और बीडी पीते हुए बैरा की तरफ हाथ बढाया।

बैरा ने उसे अपने बडल मे एक नई बीडी निकालकर दी, साथ ही दियासलाई भी—"लो इसे पियो।"

"जय हो! खुश रहो।" उसने बीडी सुलगाई और निकोटीन ने उसके दिमाग में नई लहरे उपजाईं, पुरानी स्मृतियो के द्वार खोल दिए—"लेकिन मशहूर मैं तमाम लाइन-भर मे हूँ माल बाबू के ही नाम से। ताड से गिरा, खजूर पर अटका और खजूर से खुद-ब-खुद कूद गया मैं इस सरल जमीन पर।" उसने भन्नन जी की कल्पना खीच ली थी। उन्होने पूछा—"मालबाबू, यह क्या कह गए तुम ?"

"अभी कहा कहाँ ? जब कहूँगा तो रोने लगोगे, लेकिन मेरे मालिक नही रोए। उन्होने एक स्वर से कह दिया—माल बाबू, अफसोस तुम्हारा दिमाग खराब हो गया !" उसने अपनी जेब से एक बडी पुरानी डायरी निकाली। उसके भीतर कई चिटिठयाँ और पुरजे भी फाइल किए गए थे। एक डाकखाने का कार्ड उसमें से निकलकर फर्श पर गिर पडा। माल बाबू उसे उठाकर बोले—"ये सबसे पहले आ धमकते है। ये मेरी पहली शादी के एकलौते सुपुत्र हैं। इनकी तमीज देखो ये बाप को अँग्रेजी में चिट्ठी लिखते है—'माई डियर डैडी ! थू ! तेरी की ! गोया मैं इनका यार हूँ।"

"अँग्रेजों की सभ्यता ऐसी ही तो है। उनकी दृष्टि से क्या बुरा है यह ?"

"वो साला अँग्रेज का बच्चा है। सिर्फ दसवाँ दरजा ही तो पास है। मैं उसे मादरी जबान मे चिट्ठी लिखता हूँ, क्यो वह अँग्रेजी में लिखता है? लो पढो तो सही अभी और इसकी लियाकत का सबूत मिल जायगा।"—माल बाबू ने वह चिट्ठी भन्नन जी को थमा दी।

काँपते हुए हाथो से उन्होने चिट्ठी ली। फिर प्राण सकट में पडे थे। सोचने लगे—"अगर इस बैरा और खानसामा के सामने अँग्रेजी न जानने की पोल खुल गई तो ये जमीन पर भी न बैठने देंगे।" उन्होने बहुत गम्भीर हो कर उस चिट्ठी पर आँखें दौडाईं और पत्र को पीठ पर भी लौटाकर बडा सच्चा अभिनय कर दिखाया। चिट्ठी वापस करते हुए बोले—"देखिए माल बाबू साहब, वेद मे लिखा है—पुत्र में पिता की आत्मा ही पैदा होती है।"

"अरे क्या खाक आत्मा पैदा होती है? यह अपनी औरत को लेकर अलग हो गया मुझसे पहले ही, तब मेरी दूसरी औरत जिदा थी। मैं ऐसे दर-दर भटक रहा हूँ और वह लिखता है मै अपनी तनखा मे से एक भी पैसा न भेजने के लिए मजबूर हूँ। न देता पैसा। उसने यह क्यो लिखा कि मेरा दिमाग खराब हो गया है। वह साला टी० एस० के दफ्तर का एक छोटा-सा क्लर्क, क्या वह कोई डॉक्टर है?"

भन्नन जी ने जरा चैन की साँस ली। वे समझ गए, माल बाबू चिट्ठी का सारा मजमून अपने श्रीमुख से उगल चुके। उन्ही के स्वर-मे-स्वर मिलाते हुए बोले—"माल बाबू जी, आपको कुछ भी नही कहना चाहिए सारी दुनिया मे हवा ही ऐसी बह रही है। तुम्हारे बेटे का लेख तो बडा सुन्दर है।"

"लेख की आरती उतारूँ क्या? जब बेईमान का व्यवहार ठीक नही है तो उसकी शकल-सूरत, उसकी टाइ-कोट से क्या करूँ मैं?"

"कपडा पहनने का शौक होगा उसे, हो जाता है किसी को।"

"अजी बस पूछो मत आधी तनखा उसी में छँट जाती है और साले को पिंग-पाग खेलने का भी मरज है। सिगरेट तो मेरे सामने ही पीता

था। लोग कहते हैं कुछ और भी पीने लगा है।"

बैरा कहने लगा—"पिंग-पाग को तो मै नही जानता, वह कमरे के भीतर खेला जाता है, लेकिन गॉफ के हमारे बडे साहब बडे मशहूर खिलाडी हैं।"

"अजी तुम्हारे बडे साहब की क्या बात है! जो कुछ भी वे करें सब उन्हे शोभा दे सकता है। यात्रा मे भी इतना सामान उनके साथ चल रहा है। हंसी-खेल है क्या? हम तो एक छोटा-सा ट्रक और एक थैला लेकर चलने मे ही किसी दरजे के भीतर नही घुस सके। बैरा साहब, तुम्हारी दया अगर नही होती और चपरासी साहब आपकी भी तो, फिर गरीब का क्या हाल होता भगवान् ही जानता है।"

चपरासी बोला—"तुम तो कहते थे तुम्हारे पास इस दरजे का टिकट है?"

माल बाबू बोले—"कोई परवा नही दोस्त, तुम माल बाबू के साथ हो। सब टी० टी० सी० मेरे दोस्त हैं, मैं कभी टिकट नही खरीदता। मैंने जनम-भर इस रेल मे नौकरी की है। मैं ले जाऊँगा तुम्हें, जहाँ तक भी जाओगे। कहाँ जा रहे हो?"

"तुम कहाँ जा रहे हो?"

"मैं तो आगरे तक जा रहा हूँ। बेटा वही है मेरा। मैं चाल समझता हूँ उसकी। उसकी मशा मुझे मेंटल अस्पताल में भरती करा देने की है। लेकिन मैं पागल हूँ क्या? आगरे तक बेखटके चलो मेरे साथ।"

चपरासी बोला—"तुम्हारे पास टिकट बिलकुल नदारद है?"

"नही टिकट है तीसरे दरजे का।"

"देखा जायगा, चले चलो फिर हमारे साथ।"

"डेढ़ बजे पहुँच जायगी यह गाडी आगरे। अभी बारह-सवा बारह का टाइम होगा।"

कुछ आश्वासन पाकर भन्नन जी के फिर साहित्यिक जिज्ञासा जाग उठी। वे बोले—"माल बाबू जी! अपनी कहानी की आगे की गाँठें

तो खोलिए।"

बिगड गए मालबाबू—"तुम इसे कहानी कहते हो ? नही करूँगा अब तुमसे कोई बात।"

बहुत हाथ-पैर जोडे, बडी अनुनय-विनय की भन्नन जी ने तब कही मालबाबू ने कुछ कहना शुरू किया, लेकिन बड़े टूटे दिल से—"देखो जी, एक दिन की बात है कि मेरे गोद के बच्चे को न-जाने क्या हो गया, वह एक दम बेहोश हो गया। मै मालगोदाम मे अपनी नौकरी पर था। मेरी औरत अपनी सुध-बुध खो घर से मेरे पास दौडी आई। बेटे के प्रेम में वह अधी हो रही थी—कुछ देखा सुना नही उसने। लाइन पर ठोकर खाकर गिर पडी उधर से मेल आ रही थी और दोनो माँ-बेटे वही कटकर ढेर हो गए। यह दोहरी चोट सही है मैंने—और लोग मुझसे कहने लगे उसी दिन से मेरा दिमाग सही नही रहा। देखो यह अरजी लिखी थी मैने बडे साहब को।" डायरी के भीतर से एक पुरानी मैली-फटी अर्जी की तहे खोलकर वह भन्नन जी को देने लगा।

"रहने दो, इसे रहने दो, यह पढी भी तो नही जायगी जगह-जगह से टूट गई है। तुम खुद ही कह दो इस मे क्या लिखा है।"

"तुम इसे कहानी कह रहे हो न इसी से तुम्हे दिखा रहा हूँ। इसमें मैने लिखा, जब दो गाडियाँ लडी तो रेलवे के अधिकारियो ने मेरी नौकरी छीन ली। आज तुम्हारी रेलगाडी ने मेरी घरवाली और बच्चा दोनो को खतम कर दिया। इसके माने है मेरी सारी घर-गिरस्ती का सफाया हो गया। मुझे मेरा पूरा-पूरा हर्जाना मिल जाना चाहिए।"—इतना कह कर मालबाबू ने चुप्पी साध ली।

कथाकार भन्नन जी के कुछ कौतूहल बढ गया था। उन्होने अधीर होकर पूछा—"मालबाबू जी, क्या हुआ फिर ? मिला आपको कुछ हर्जाना ?"

अँगूठा हिलाते हुए मालबाबू ने कहा—"नही एक पाई भी नही। उन्होने जवाब दिया कि वह सरासर मेरी घरवाली की लापरवाही है जो

उनसे जयराम जी की कर चला आया। दूसरे दिन क्वार्टर खाली कर उसका काठ-कबाड, लोहा-पीतल, ऊन-सूत, सब मौसी के यहाँ रख तीर्थ-यात्रा को चल दिया।"

"कहाँ-कहाँ घूमे ?"

"अजी, जब क्या खाऊँगा ? कहाँ से आयेगा ? इस तरह का ख्याल खतम हुआ नही कि प्रकृति मे अपने-आप एक रास्ता खुल जाता है दाताओ के हाथो से ठीक तुम्हारे मुँह तक। मै कहता हूँ अभी हिंदुस्थान में देनेवालो की कुछ भी कमी नही है। शर्त एक ही है अगर तुमने हाथ पसार कर माँगा तो तुम्हे श्रद्धा मे कोई नही देगा, खाने भर को अपने आप मिल जाता है। जमा करने के लिए कोई जेब, थैली, सदूक या मकान न रखो तो तुम्हारा पेट सदा भारी ही रहेगा। पूरब, दक्खिन और पश्चिम हिंदुस्थान के तीनो हिस्से घूम आया हूँ—पैदल। यात्रा का आनद ही पैरो से चलने मे है।"

भारत को रेल की पटरियो से बाँधकर उसके सारे तीर्थो की महिमा उडा दी गई और नलो से लपेटकर गगा-यमुना, सिंधु-सरस्वती, गोमती-ब्रह्मपुत्र, कृष्णा-कावेरी, महानदी-गोदावरी, का महातम चला गया !"

"मालबाबू ! बडा भूगोल याद है तुम्हें ?"

"पहले वक्त की पढाई है—असली पढाई। जो याद करते थे जनम भर के लिए हड्डियो में खुद जाता था। अब तो तोता रटंत है, इम्तहान पास करने का लटका ! इम्तहान पास किया, घर आकर साबुन से नहाया धोया—सारी लियाकत मैल सी धुल गई बदन पर से।"

"उत्तर की तरफ नही गए ?"

'जाऊँगा क्यो नही ? उसी रास्ते जाकर मौत से भेट करूंगा पॉडवों की तरह। मै मरने से जरा नही डरता। आदमी की सबसे बड़ी कमजोरी वही है। जब तक मौत की डर है, तभी तक लालच है। जब लालच आदमी के भीतर से चला जाता है तो वह देवता बन जाता है। फिर कोई उसका कुछ नही कर सकता। ऐसा ही एक अवधूत हो गया

हूँ मै। यहाँ मे बदरीनाथ जो जाऊँगा, वहाँ से कैलाश-मानसरोवर और वहाँ से फिर चढ जाऊँगा उस सफेदी पर जिससे ऊँची दुनिया-भर में कोई जगह ही नही है।

"मालबाबू, वहाँ क्या खा-पीकर चढोगे ?"

"वहाँ क्या कुछ लेने जा रहा हूँ ? वहाँ सब-कुछ चढ़ा देने जाऊँगा। जीवन का सुख-दुख, पाप-पुण्य ही नही—स्वर्ग और मुक्ति भी !"

"धन्य हो मालबाबू ! आपके भीतर तो मुझे बडी पवित्र आत्मा दिखाई दे रही है। भगवान् की बडी दया से आपका सत्सग मिला।" भन्नन जी ने अपने थैले मे हाथ डालते हुए कहा—"कुछ खाया-पिया भी है या नही ?"

"वह तो कह चुका हूँ तुमसे। जिसे गरज होगी वह देगा मुझे।"

उस साहित्यिक ने क्षण-भर के लिए एक विचित्र लहर का अनुभव किया। वे सोचने लगे—"इस मालबाबू ने जिस तरह भगवान् को अपनी टेक बना लिया है, अगर यह निरन्तर ही इस सत्य पर टिका रह सकता है, तो इसे धन्य है। मन की आकाक्षा को जिसने पैर के नीचे मसल दिया है, नि सदेह वही बिना सेना और राजभवन का सम्राट है।"

भन्नन जी ने अपने थैले में से कुछ खाने-पीने की चीजे निकालकर कहा—"कोई बर्तन है तुम्हारे पास ? किसमे लोगे ?"

"कोई बर्तन नही रखता मै। उसी मे तो लालच अंडे देता है। पेट ही मेरा सबसे बडा बर्तन है। न उसके खोने की डर है, न लादने का बखेडा और न माँजने की झझट ! यह एक हाथ तश्तरी है, दूसरा चम्मच ! हाथ मे जितना आता है उससे ज्यादे मत देना।"—मालबाबू हाथ फैलाते हुए बोले।

और उनकी निस्पृहता को देखकर भन्नन जी ने भले प्रकार उनके हाथ को भर दिया। मालबाबू बडी उदासीनता से भोजन करने लगे।

बेरा ने इशारा कर भन्नन जी को अपनी तरफ बुलाकर कहा—"तुम कहाँ उस पागल के पीछे लगे हो ?"

"मुझे तो उस पागल के भीतर एक बडा संत दिखाई दे रहा है।"—भन्नन जी बोले।

"संत-हृत कोई कुछ नही, दुनिया को ठगने के लिए ये बहुरुपिए है। तुम बडे सीधे आदमी दिखाई देते हो। जान पड़ता है, घर से आज ही बाहर पैर निकाले हैं ?" चपरासी ने पूछा।

अपने को कुछ छोटा-सा अनुभव कर भन्नन जी बोले—"नही जी, मै हर साल पहाड पर जाता हूँ।"

हँसकर बैरा बोला—"पहाड पर तुम्हें ठडी हवा और पानी मिल सकता है। सुनहरे हिमालय और रुपहरे झरने भी, मैं कहता हूँ—कभी बम्बई-कलकत्ते भी गए हो पहले ? जानेवाले तो विलायत तक चले जाते है।"

"जा तो रहा हूँ बम्बई इस बार।"—कुछ खिसियाकर भन्नन जी ने कहा।

'लेकिन ऐमे दरजे मे बैठकर जा रहे हो जिसका टिकट नहीं है तुम्हारे पास।"

"आपकी दया होगी तो।"—सिर खुजाने लगे वे।

"हमारी दया क्या होगी भाई, हम कोई रेल के अफसर थोड़े है ? तुम्हारी ही तरह एक मुसाफिर हम भी है। आगरे का स्टेशन आने ही वाला है वहाँ जरूर टिकट चेकर आयेगा यहाँ।" बैरा बोला—"और तुम्हे इसकी कोई फिकर ही नही है, उस पागल के साथ लगे हो, वह डूबा हुआ क्या तुम्हारा हाथ पकडेगा ?"

"बताइए क्या करूँ फिर ?"—भन्नन जी ने पूछा।

"आगरे में फौरन उतरकर देख लेना अगर किसी डिब्बे में जगह नजर आई तो अपना सामान यहाँ से उठा ले जाना। मौका न मिले तो घुस जाना तुम किसी डिब्बे में, फिर किसी अगले स्टेशन मे तुम्हारा सामान मिल जायगा तुम्हे।"—चपरासी ने कहा।

बैरा बोला—"आगरे में वैसे भी तुम्हारा इस डिब्बे मे मौजूद रहना

खतरनाक है। अक्सर वहाँ टिकटों की जाँच होती है। अगर धर लिए गए तो कोई छोडनेवाला नही।"

"अच्छी बात है साहब, आपने ठीक समय पर मुझे खबरदार कर दिया। मैं आगरा पहुँचते ही उतरकर कही जगह ढूँढ लूँगा। लेकिन वहाँ तो और भी भीड भर जायगी।"—भन्नन जी ने कहा।

"यह कोई जरूरी नहीं हैं। मुमकिन है बीस मुसाफिर उतर जाये और सिर्फ दस ही चढे।"—बैरा ने कहा।

"अच्छी बात है ऐसा ही करूँगा। लेकिन एक बिनती है, कोशिश मै आगरे मे भी करूँगा और उसके आगे जहाँ भी गाडी रुके। मान लीजिए अगर आगरे में जगह न मिली और मुझे इसी डिब्बे मे कुछ दूर तक चलना पड गया और कही टिकट चेकर आ धमका तो आप लोग मेरी मदद कर देंगे?"

"क्या मदद कर देगे तुम्हारी? हमे फँसाओगे क्या?"—बैरा आँखे विस्फारित कर बोला।

भन्नन जी ने फिर अपने मन की बात वही छिपाकर रख ली और बोले—"अच्छी बात है मै आगरा आते ही उतर जाऊँगा। आप लोग जरा मेरे इस ट्रंक का ध्यान रखिएगा। मेरा बहुत कीमती माल है इसमे।"

"हमारे साहब लोगो का तो इतना माल पडा है। कोई डर नही।" बैरा बोला।

भन्नन जी निश्चिन्त होकर अपनी सीट पर आ गए। वे सोचने लगे—"अगर पकड लिया गया तो क्या होगा?" कुछ ढीले पडकर फिर पौरुष जाग उठा उनके भीतर—"बिना टिकट के थोडे हूँ? जब रेलवे ने टिकट बेचा है तो यह उनका परम कर्त्तव्य हो जाता है कि वे मुझे सीट दे। सारी ट्रेन के चक्कर मारने पर भी जब मुझे जगह नही मिली तो आखिर मैं करता क्या? मेरा इतना जरूरी काम है। फिर यह कौन बड़ा दरजा है? नौकर-चाकरो का तीसरा ही दरजा तो है न?"

मालबाबू भन्नन जी को चुप चिंता मे पडा देख बोले—"क्यो मिस्टर, तुमको क्या फिकर हो गई ? इस लाइन भर में सब मेरे पहचान के है। कोई परवा मत करो टिकट की। मैं कह दूंगा फाटक पर, ये मेरे दोस्त हैं।"

भन्नन जी बोले—"नही, टिकट है मेरे पास।"

"और बीडी ?"—मालबाबू टोपी मे अँगुली घुमाते हुए बोले।

"बीडी तो मैं पीता ही नही हूँ। माँग ला दूँ ?"

"नही भाई, जिसे गरज होगी उसे देना पडेगा मुझे। मैं अपने बाप से भी नही माँगता कुछ। बेटे से भी नही, इसीलिए तो वह अपनी औरत को लेकर चल दिया। कुछ आदत मैंने खराब कर दी उसकी कुछ साहब लोगो की सगत में हो गई।"

"कौन साहब लोग ?" भन्नन जी ने पूछा।

"हमारे ही क्वार्टर के पास उनका बँगला था। एक ड्राइवर साहब का लडका, दूसरा गार्ड साहब का। उन्होने ही उसे तमाम बाते सिखा दी—कोट-पतलून, टाइ-टोप, टी-टोस्ट का इस्तेमाल उन्होने ही बताया। थैंक यू, गुड बाइ वही से उसकी जबान पर चढे। और उन्होने ही उसके कान में यह मतर फूँका कि औरत को लेकर बाप से अलग हो जाओ। वे अपनी तनखा खाने के लिए आजाद हैं और तुम अपनी तनखा चाहे जैसे खर्च कर सकते हो।"

चपरासी ने दो बीडियाँ दियासलाई से हाथ मे ही जलाईं। एक अपने मुँह में खोसकर दूसरी मालबाबू को देता हुआ बोला—"लो बीड़ी पिओगे ?"

"क्यो नही ? जिस चीज में मेरा नाम खुदा है, वह मुझे मिलेगी ही। इसी बात को अच्छी तरह समझ लेने की जरूरत है। बस फिर तो बेड़ा पार है।" मालबाबू बीडी पीने लगे—"लेकिन तुम क्यो नही पीते ? अकेले का बडा सच्चा साथी पाया मैंने इसे।"

"मै सुरती खाता हूँ।" भन्नन जी ने जेब से एक पुडिया निकाली

उसमें से कुछ पत्ती तोडकर हथेली पर जमाई और एक टीन की चुनौटी मे से कुछ चूना निकालकर अँगूठे से सुरती बनाने लगे।

वे अपने मन की विचारधारा मे विलीन हो गए और मालबाबू अपनी कल्पना मे। चपरासी और बैरा धुआँ उडाते हुए अपने-अपने बिस्तरो मे लम्बे हो गए थे। उस कमरे के विधान-सिद्ध अधिकारी वे ही दो थे। बाकी वे दो पराश्रित आकाश-बेल की तरह उनके दरजे के सिर पर जम गए थे।

इसके बाद बहुत देर तक उस डिब्बे मे शून्यता छाई रह गई। दोनो साहबो के नौकरो ने लम्बी यात्रा के लिए दिन के विश्राम को जरूरी समझा। भन्नन जी ने भी आँखें बन्द कर ली और मालबाबू भी अपने सपनो के जाल मे जकड गए। पजाब मेल पूरी चाल से आगरे की ओर दौडी जा रही थी।

भन्नन जी की छाती धुक-धुका रही थी तेज गति से। वे सोच रहे थे—"आगरा पहुँचते ही इधर मैंने गाडी से उतरने के लिए हैंडिल घुमाया और उधर से अगर किसी ने मुझ से कहा टिकट? तो क्या जवाब दूँगा? 'नहीं जो बात सोच ली जाती है वह नही होती।"

और कुछ समय बीत गया, पर भन्नन जी की चिंताकुलता में वे सैकड मिनटो मे खिचते गए। तार के खभे खटाखट उनकी नजरो से भागते जा रहे थे और दूर की धूसर-नील वृक्षावलियाँ भी तो।

अत मे वह बडी प्रतीक्षा की जगह आ गई जान पडी। गाडी ने बड़ी जोर से सीटी दी। गाड़ी रुक गई। भन्नन जी मन मे सोचने लगे—"कभी ऐसे गाडी रोककर भी टिकट चेक किए जाते हैं।"

मालबाबू बाहर देखकर बोले—"सिगनल डाउन नही है।"

थोडी देर में गाड़ी ने फिर सीटी दी और बडी सतर्कता से आगे को बढने लगी। भन्नन जी ने एक बार मन मे स्थिर किया—"दो छोटी अदर्दें ही तो है हाथ मे ले चलूँ। क्या जाने अपने पीछे क्या हो अपने सामान का?" उसी समय उनकी पश्चात् बुद्धि बोली—"सामान ले

चलोगे तो फिर उसके साथ इतनी दूर तक का तुम्हारा अधिकार भी सब मिट जायगा। और डिब्बो में जगह मिलनी असभव है। क्या तुम्हारा सामान है? कौन सोना-चाँदी है? यह साहब लोगो के सामान का डिब्बा, लुच्चे लफगो की नजर भी इसके भीतर नही घुस सकती।"

धीरे-धीरे गाडी प्लेट फार्म पर आ लगी और खाली कुलियो ने शोर मचाया—"कुली! कुली! और सिर पर सामान लादे कुलियो ने फटा-फट हैंडिल घुमाने शुरू किए। कुछ तो मय सामान के गाडियो की रेलिंग पकड फुट बोर्ड पर चढ भी गए थे।

गाडी में से सबसे पहले प्लेट फार्म पर कूद जानेवाले यात्रियो में शायद भन्नन जी का नबर ही था। उनके बाद बैरा ने अपने साहब के पास जाकर पूछा—'हुजूर कोई हुकुम?"

साहब बोले—"हाँ बैरा देखो, वह हमारी ऑफिस की फाइलोवाला बक्स उसको यहाँ लाकर रख दो। और चाय भिजवा दो।"

बैरा जब जाने लगा तो दूसरे साहब बोले—"मेरे चपरासी को यहाँ भेज देना। उसने मेरे कुछ जरूरी कागजात न जाने कहाँ रख दिए है।"

बैरा ने जाकर चपरासी को वहाँ भेज दिया और अपना ट्रक बाहर निकालने लगा। मालबाबू को अपनी जगह में जमा देखकर उसने कहा—"क्यो जी, तुम तो कहते थे आगरे छावनी मे उतर जाऊँगा।"

"अरे यहाँ क्या कही भी उतर जाऊँगा, लेकिन अभी सोचने लगा हूँ, झाँसी क्यो न चला चलूँ, वहाँ पुरानी ससुराल है।"

"अच्छा, जरा इस बकस को तो हाथ लगा दो। साहब के पास ले जाना है।"

"लाओ, हाथ लगाना क्या मै पहुँचा आऊँ।"—मालबाबू ने उठाकर वह बक्स बैरा के सिर पर रख दिया।

इसी बीच कुली के सिर मे दो-तीन बक्स लेकर एक दवा के एजेंट का नौकर चला आया और उसी दरजे में वह अपना सामान ठूँसने लगा। मालबाबू बोले—"ठहर जाओ भाई मै यहाँ उतर जाऊँगा।" वे अपना

ट्रक लेकर उतर गए ।

पास ही भन्नन जी की नजर थी अपने डिब्बे पर । मालबाबू को देखकर बोले—"क्यो मालबाबू, उतर गए क्या ?"

"हाँ भाई, नमस्ते । तुम यहाँ उतरो तो तुम्हारे टिकट के लिए कह दूँ ।"

"मै तो बम्बई जाऊँगा ।"

"बम्बई के लिए कह दूँ ?"

"नही मेरे पास टिकट है, नमस्ते ।"

मालबाबू लाइन पार कर न-जाने क्वार्टरो की तरफ कहाँ चला गया । भन्नन जी को डिब्बे मे कुछ लगेज और आ जाने से चिंता होने लगी । एक मुसाफिर भी बढ गया था । वे सोचने लगे—"खैर मालबाबू की जगह तो बनी है जमीन पर । यहाँ कौन अपने जान-पहचान का है ?"

वे दौडकर एक वक्त अपने डिब्बे मे बाहर से अपने ट्रक को देखने के लिए गए । लेकिन नही दिखाई दिया उनका ट्रक उन्हे । उसकी जगह में उन्हें दूसरा सामान रखा नजर आया । उन्होने उस नए मुसाफिर से पूछा—"एक पीले रग का छोटा-सा ट्रक था वहाँ पर ।"

"वही होगा भाई । भीतर जाकर देख लो ।"

लेकिन उसी समय उन्हे एक कोट में बिल्ला लगा रेल-कर्मचारी दिखाई दिया । वे समझे—"आ गया टिकट-चेकर ।" फिर खिसक गए कुछ दूर । लेकिन उनके मन में अपने ट्रक के लिए एक शंका बनी रह गई । फिर कभी सोचते—"क्या करेगा कोई उससे ? मेरे सिवा और वे किताबें किसके काम की है ?"

किसी प्रकार बडी व्याकुलता से ट्रेन चलने तक का समय उन्होने बाहर बिताया । जब गाड़ी ने सीटी दी तो अपने डिब्बे मे आकर उन्होने फौरन ही ट्रक की तलाश की । उन्होंने सोच रखा था, सीट के नीचे होगा, लेकिन वहाँ कुछ न था । उनके होश उड गए !

बैरा ने पूछा—"क्यो, नही मिला ?"

"नही तो।"—बडो निराशा के स्वर मे भन्नन जी बोले।

"अच्छी तरह ढूँढ लो भाई, जा कहाँ सकता है?"—चपरासी ने राय दी।

भन्नन जी ने फिर ढूँढना शुरू किया। दो-तीन बार प्रयास किया फिर उनके मन के भीतर यह विश्वास दृढ हो गया कि वह खो गया।

बैरा ने एजेट के नौकर से पूछा—"तुमने नही देखा, यहाँ पर एक छोटा-सा ट्रंक था?"

"कुली रख गया यहाँ ये दवाओं के बक्से।"—नौकर ने जवाब दिया।

'फिर यहाँ और कौन आया?"—बैरे ने पूछा।

"आया और कौन? जानेवालो में जरूर वह एक पगला मालबाबू था।"—चपरासी ने कहा।

बैरे ने जवाब दिया—"भली चलाई! कौन था भेख बनाए हुए। मै तो समझता हूँ उसी ने कोई कारीगरी की। वह तो कहता था झाँसी जाकर उतरूँगा। ट्रक हाथ लग गया तो यही उतर पड़ा।"

भन्नन जी बोले—"नही साहब, मैंने उसे यहाँ पर उतरते देख लिया था। उसके हाथ मे अपना ट्रक था और वह क्वार्टरो की तरफ चला जा रहा था। वह तो बडा भला आदमी था। मैंने उससे बाते की थी।"

"बडा घुटा हुआ था वह। पडित, तुम बडे सीधे आदमी नजर आते हो मुझे। देखो, मै अपने साहब के साथ सारे हिदुस्थान ही में नही घूमा हूँ, लाम पर भी गया हूँ। मैने आदमियो के बडे-बडे रूप देखे है, बडी-बड़ी कहानियाँ सुनी है।"

"कौन हैं तुम्हारे साहब?"—एजेंट के नौकर ने पूछा।

"वही जो फौजी कपड़े पहने बैठे है, मेजर साहब। पडित, मैं कहता हूँ अगर तुम्हारा ट्रक यहाँ नही है तो जरूर वही लै गया—या वह कुली जो इनका सामान रखने आया यहाँ।"—बैरा ने अपना फैसला दिया।

चपरासी बोला—"कुली की ऐसी हिम्मत नही हो सकती कि साहब

लोगो के सामान पर हाथ साफ कर दे।"

"तो फिर जरूर वही ले गया—वही मालबाबू। मुझे तो उसकी हुलिया याद कर अब भी हँसी आ रही है।"

भन्नन जी ने कहा—"वह कैसे ले गया ? उसके हाथ मे तो उसका अपना ही ट्रक था।"

"तुम नही जानते पडित। इन चोट्टो के पास खिसकनेवाले तले का बक्स होता है। मौका पाकर किसी भी बक्स पर वे उसे जमा देते हैं। फिर किसकी ताकत है उन्हें पकड सके ? जरूर वही ले गया—दूसरा और ले ही कौन जाता ?"—बैरा ने कहा।

भन्नन जी को इस बात का बिलकुल विश्वास नही हुआ। वे उसे बडा त्यागी-तपस्वी समझते थे। अपने ट्रक को पा जाने के लिए नही, इस बार उस बिचारे मालबाबू को निर्दोष साबित कर देने को उन्होने नए सिरे से फिर अपने खोए ट्रक की तलाश शुरू की। एक-एक ट्रक, बक्स, होल्डॉल, टिफिन कैरियर आदि उठा-उठाकर वे ढूँढने लगे।

बैरा बोला—"तुम्हें मेरी बात का विश्वास नही होता ! वह सुई थोडे है जो इस तरह टिफिन कैरियर के नीचे घुस जाएगी ?"

अब तो भन्नन जी को माथा पकडकर बैठ जाना पडा अपनी सीट पर। चपरासी ने पूछा—"रुपए कितने थे उसमें ?"

भन्नन जी ने अपने बन्द गले के सफेद कोट की भीतरी जेब में टटोल कर कहा—"रुपए कुछ नही थे उसमें ?"

"और कोई सोना-चाँदी ?"—बैरा ने पूछा।

"नही, कुछ नही।"—भन्नन जी ने जवाब दिया।

चपरासी बोला—"फिर क्या था उसमे ? कपडे-लत्ते ?"

"एकाध। उसमे मेरी लिखी हुई छपी किताबें थी और कुछ बिना छपी।"

"कुल कितने सेर होगी ?"—एजेंट के नौकर ने पूछा।

बन्दूक की गोली की तरह से यह वाक्य भन्नन जी के लग गया।

आँखें विस्फारित कर उन्होने उसकी तरफ देखा—"क्या मतलब है तुम्हारा ?"

बैरा बोला कुछ हँसकर—"इनका मतलब है बाजार मे एक रुपए के दो सेर छोटे कागज बिकते है।"

भन्नन जी ने माथे पर हाथ मारकर कहा—"मेरे हाथ की लिखी कई कहानियाँ थी उसमें। बिक जाने पर एक ही से कोई निर्माता लाखो रुपए पीट सकता है। लाखो मे क्या हजार भी लेखक को नही मिलते ?"

चपरासी कहने लगा—"अच्छा ऐसी बात है ? लेकिन जो तुम्हारा ट्रक ले गया उसे तो दो सेर का एक ही रुपया मिलेगा।"

बैरा ने कहा—"लेकिन छपी किताबे तो तुम्हे फिर मिल जायेगी ?"

"हाँ।"

चपरासी ने कहा—"और हाथ की लिखी तुम्हारे दिमाग से ही निकली है, फिर वहाँ से निकाल लोगे इसमे मुश्किल कौन है ?"

"हाँ भाई।"—बडी दीनता से भन्नन जी ने कहा।

उसके लिए बैरा की तमाम दया जाग उठी। वह बोला—"सच-सच बताओ पडित, तुम्हारा कुल कितने का नुकसान हुआ ?"

"मेरी उसमे तीन कहानियाँ लिखी हुई थी—उन्ही का मुझे दुख है। जो छपे हुए उपन्यास थे, वे होंगे करीब तीस रुपए के—पूरे दाम।"

"तो लिखे हुए होंगे कोई बीस रुपए के ?"

बड़ी कोमल हँसी हँसते हुए भन्नन जी बोले—"अगर सिनेमावालो के हाथ वे तीनो कहानियाँ बिक जाती तो कम-से-कम दस-बारह हजार रुपए मिल जाते।"

बैरा बोला—"सच पंडत, एक बात कहता हूँ, बुरा मत मानना। तुम्हारे इस हुलिए को देखकर कोई तुम्हें दस-बारहे रुपए भी मुश्किल से देगा।"

भन्नन जी के मन में बड़ा भारी आघात पहुँचा। शायद यह घाव ट्रंक के खो जाने की चोट से कही गहरा था।

बैरा बोला—"तुम रुपया कमाने बम्बई जा रहे हो न ? जहाँ पर कुछ रुपया होता है, वही पर रुपया खिचता है । भिखारी के फैलाए हुए बोरे पर पैसा-दो पैसा से ज्यादे कोई नही डालता ।"

बैरा की बाते बडी गहराई से उस साहित्यिक के मानस मे गडी जा रही थी, जिसका आज तक का वेश था सफेद बन्द कालर का कोट, टोपी-धोती और जिसका आदर्श था—"सादा रहन-सहन और उच्च विचार !" उसके मानसिक विद्रोह की पहली लहर उठी !

भन्नन जी मन में सोचने लगे—"जो होता है, सब अच्छे ही के लिए होता है । ट्रक खो गया तो जाने दो । छपी किताबे फिर मँगा लूँगा और लिखी हुई जो कहानियाँ है उनको फिर लिख डालूँगा । शायद पहले से कही अच्छी लिख ली जा सकेगी । इस बैरा ने जो उपदेश दिया है, वह ट्रक की कीमत से कीमती है ।"

बैरा बोला—"पडत, मेरे मालिक मेजर साहब यही कहते हैं। उनके कपडो मे कोई फालतू सरबट नही रहनी चाहिए । जूते और कधो पर के नंबरो की पॉलिश मे जरा भी कसर नही । हर चीज उनकी बढिया और साफ ! वे कहते है—अग्रेज से वही दो बाते उन्होने सीखी—सफाई और वक्त की पाबदी ।"

भन्नन जी बोले—"बैरा साहब, यह अंग्रेज का बहुत बडा मत्र आपने मुझे दिया मैं इस पर अमल करूँगा ।"

बैरा ने कहा—"तुम इस दरजे में बेखटके बैठो । हम तुम्हें बम्बई तक पहुँचा देगे । अगर तुम्हारे पास टिकट न भी होता तो लड-झगड कर तुम्हारा हक साबित कर देते ।"

छः

बैरा ने अपने वचन का एक-एक अक्षर पूरा-पूरा निभाया। दूसरे दिन तीन बजे शाम के लगभग जब दादर के स्टेशन पर गाडी रुकी तो बोला—"स्टेशन आ गया। यही हैं न तुम्हारे दोस्त ?"

"हाँ दादर मेन रोड में।"

"उतर जाओ फिर जल्दी से।"

भन्नन जी का भार हलका हो गया था। एक थैला लेकर वे उतर पड़े और हाथ जोडकर बोले—"आपकी खास मेहरबानी से मैं बडे आनंद से बम्बई पहुँचा, आपको धन्यवाद।"

"हाँ भाई, हमारी मेहरबानी से तो तुम्हारा ट्रंक उड़ गया, माफी चाहते हैं हम।"

उन तीनो से विदा होकर भन्नन जी पूछते-पूछते लोहे के पुल पर चढे। नर-मुडो की नदी ऐसी बाढ तो उन्होने कभी देखी ही नहीं थी। पुल पार कर सड़क पर आए तो फिर उन्होने एक मनुष्य से पूछा—

"भाई ३ पी, दादर मेन रोड कहाँ पर है ?"

"दादर मेन रोड पर ही तुम खडे हो। नबर ढूँढ लेना आगे चल कर।"

"सिनेमा के स्टूडियो कहाँ पर है ? उन्ही के आस-पास है।"

"सीधे चले जाओ दाहिने हाथ की तरफ। थोडी ही दूर पर हैं स्टूडियो।"

भन्नन जी उस विशाल नगरी मे प्रवेश करने लगे। कभी-कभी एक स्वप्न-सा लगता उन्हे—"क्या यही वह गगनचुबी अट्टालिकाओ से भरी नगरी है, जहाँ कुछ ही दिनो के हेर-फेर से मनुष्य कुछ का कुछ हो जाता है। उसे बनते भी देर नही लगती और बिगडते भी नही। क्या मेरी आशाएँ भी यहाँ पूरी होगी ?" एक दीर्घ निश्वास अपने आप उनके मुँह से निकल गया—"लेकिन क्या कोई मेरे परिश्रम और मेरी साधना का मूल्य लगानेवाला होगा यहाँ ?"

सिनेमा-स्टूडियो के प्रथम दर्शन के आकर्षण मे खिचे जा रहे थे। बडा विचित्र अनुमान लगा रखा था उन्होने। उस दौड में तन-बदन की भी सुधि नही थी। छुआछूत की डर से उन्होने अब तक कुछ खाया भी नही था। गाड़ी से उतर-उतर कर दो-तीन मर्तबे चाय पी थी। कुछ नागपुर के सतरे और बम्बई प्रान्त के हरी छाल के केले जरूर छीले थे। थैले में पत्नी का तैयार किया हुआ भोजन रखा ही हुआ था।

जाते-जाते मार्ग मे होटलो और विश्राम-गृहो से निकली हुई चाय-पकौड़ी की गध से उनके भी रसना में पानी जाग उठा। वे सोचने लगे—"होटलो मे इस बाहरी दिखावे की सफाई में खाना खाने की तो मेरी जरा भी इच्छा नही है। जान पडता है चाय पीनी ही पडेगी। लेकिन मैं विजया-बूटी को छोडकर और आदी किसी चीज का नही हूँ।"

फुटपाथ पर एक पानी का नल दिखाई देने से भन्नन जी ने सोचा—"पत्नी के साथ रखे हुए इस भोजन के भार को अब कब तक ढोता फिरूँ?" वे वहाँ पर एक किनारे से बैठ गए और अधिकाश स्वय खा-

पीकर कुछ हिस्सा उन्होंने पास बैठी हुई एक भिखारिन को दिया। जूठन और टुकडे एक कुत्ते के सामने फेंक दिए। नल मे हाथ धो पानी पीकर वे फिर सिनेमा-स्टूडियो की आशा में बढे।

थोडी दूर जाने पर बाएँ हाथ की तरफ एक विशाल फाटक पर खुलता हुआ स्टूडियो दिखाई दिया। पहले ही उन्होने उसको समझ लिया था, फिर साइन बोर्ड पढकर तो कोई सशय नही रह गया था। स्टूडियो को देखकर ऐसा जान पडा उन्हे, मानो वहाँ कहानी और कहानीकार का सर्वथा अभाव है, साहित्य और सुरुचि की चरम शून्यता है, आज उनके प्रवेश पर वह स्थल कृत्य-कृत्य हो जायगा—ऐसी एक भावना घनीभूत हो उठी उनके मानस में। केवल अहकार !

उन्होने अपने को दूसरो की दृष्टि से देखा—"कपडे सब के सब मैले हो गए है लबी यात्रा मे रेल के धुएँ और मार्ग की धूल से ! क्या करूँ ट्रक में जो बदलने का हिसाब था वह चोरी चला गया। लेखक-साहित्यिक की सूचना देनेवाला एक भी अलकार नही मेरे पास। दो-चार किताबें भी बगल में होती तो—"

फिर नए सिरे से विचार किया उन्होने—"नही जी, कपडो की सुन्दरता के लिए जो भावना है वह आदमी की कमजोरी है। विचार की दुर्बलता ही अक्सर बढिया कपडे पहनकर उसमें छिपाई जाती है। साहब का वह बैरा उसकी समझ ही कितनी ? साहित्यकार की उडान तक कहाँ वह बिचारा पहुँच सकता है ? और बगल में किताबो का होना भी कोई जरूरी साइनबोर्ड नही। साहित्यकार जब अपना मुँह खोलेगा तो वह अपने शब्दो की बिजली से दसो दिशाओ को प्रभावित कर देगा।

इस तरह कल्पना के ऊँचे स्तरो में प्रतिष्ठित हुआ वह साहित्यिक सिनेमा स्टूडियो के भीतर ठाठ से बेरोक-टोक घुस जाने के लिए तैयार हो गया। खाना खा लेने से, कुछ विजया की तरगो ने उच्च-स्तर की प्राप्ति मे मदद कर दी थी। उन्होने एक बार फाटक के भीतर बाँया पैर बढाया। फिर न-जाने क्या समझ कर पैर पीछे कर लिया। कुछ देर ठहर कर,

दाहना पैर बढाया, फिर उसे भी पीछे कर लिया।

कई बार ऐसा ही करते रह गए! स्टूडियो का चौकीदार खान, फाटक की ओर खडा-खडा उनके इस करतब को देख-देख कर मन-ही-मन खुश हो रहा था। अत मे जब भन्नन जी पूरे निश्चय पर आ गए और उन्होने दोनो पैर स्टूडियो के भीतर चलायमान कर दिए। खान ने ललकारा—"ऐ ऽ कोन किडर जाटा है वहाँ ?"

सहमकर वही पर खडे रह गए भन्नन जी मन में बोले—"यह आकाश-वाणी कहाँ से हुई ?" पर जब उन्होने पूरे पक्के छै फीट के जवान को सामने देखा तो बोले—"फि-फिलम स्टूडियो यही है ?"

"हाँ-हाँ फिलम स्टूडियो तो यही है, पर टुम जाटा किडर है ? कोई परमिट है ? पास है ?"

"कैसा पास ? हम कहानीलेखक है।"

"क्या माने ? इसटोरी राइटर ?"

"हाँ।"—बडे अभिमान के उच्चारण में भन्नन जी बोले।

"इसटोरी कोई बिकी भा ? फिलम मे भी आई ?"

"अभी तो नया ही नया आया हूँ।"

"तो बाहर जाओ, क्या करोगे खाली भीतर भीड बढाकर ? वहाँ शूटिंग हो रही है। फालटू आदमी के जाने की इजाजत नही है।"

"मैं स्टोरी रायटर हूँ, फालतू आदमी कहाँ से हो गया ?"

"जब तक टुम्हारी किसी पैसेवाले से डोस्टी नही हो जाटी टबटक टुम वैसे ही हो। यह बबई है। हर बस-स्टैड के क्यू मे तुम्हे एक इसटोरी रायटर मिल जायगा और हर लोकल ट्रेन के डडा पकडकर जानेवालो में भी कोई-न-कोई।"

भन्नन जी उसका मुँह देखते ही रह गए। उन्होने विचारा—"अगर वह ट्रक खो गया न होता तो मैं इसके सामने उसे खोलकर रख देता और इसका घमंड चकनाचूर कर देता।"

वह लाला बोला—"जरा और आगे बढ़ जाओ, इसी टरफ एक और

इसटूडियो है, वहाँ शायद टुमको घुस जाने की राह मिल जाय। लेकिन वहाँ ऐसा मट करना जैसा यहां पर कर रहे थे टुम।" वह फिर हँसने लगा।

भन्नन जी छोटा-सा मुँह बनाकर वहाँ से आगे बढे। स्टूडियो आया, लेकिन उसके लोहे के द्वार बद थे। बाहर सडक पर कई मोटरें खडी थी, भन्नन जी दूर ही से निराश होकर लौट रहे थे कि सामने कमरे में नगी चारपाइयो पर बैठे हुए दो आदमी थे। दोनो टूटी हुई क्रीज की पतलून और कुछ-कुछ मैली कमीज पहने थे। रूखी सिर पर केश-राशि थी और कनपटी पर कानो की जड तक बाल बढा रक्खे थे। उनमे से एक भन्नन जी की तरफ बढकर बोला—"क्यो जी किसे ढूंढ रहे हो ?"

पहले तो भन्नन जी ने उन्हे टाल जाने की सोची, फिर वे न जाने क्या सोचकर आकर्षित हो गए। उन्होने उत्तर में कहा—"स्टूडियो बन्द है क्या ?"

"नही, शूटिंग चल रही है। आपको किससे मिलना है ?"

"किसी से नही।"

"क्या काम करते है आप ?"

"मैं हिन्दी का एक लेखक हूँ। मेरा नाम भानुदेव शर्मा है। मेरे दर्जनो उपन्यास हिन्दी मे छप चुके हैं। आप हिन्दी जानते है ?"

"नही, यह मेरी बदकिस्मती है। इस थैले मे है क्या आपकी कोई कहानियाँ ?"

"नही, यह मेरी भी बदकिस्मती है। मेरा एक पूरा ट्रक रेल मे चोरी चला गया।"

"वे छपी किताबें थी या मेनसक्रप्ट ?"

"छपी किताबो की तो कोई परवाह नही, तीन हाथ की लिखी थी।"

"थीम तो याद होगा ही तीनो का आपको।" बड़े प्रेम से उसने भन्नन जी का हाथ पकड लिया मानो कब की जान-पहचान थी। फिर कहने लगा—"चलो, चाय पी जाय।"

भन्नन जी इस बढती हुई प्रीति से पीछे हटते हुए बोले—"लेकिन—"

उसने फिर उनका हाथ पकड लिया—"आप जरूर बहुत बढिया स्टोरी लिखकर लाए है।"

भन्नन जी का माथा ठनका। वे मन मे समझे जरूर इस बार भाग्य की तारिका जाग उठी है। उन्होने कहा—"कैसे कहते है आप ?"

"क्योंकि आप बाहर से आए है। बबई मे रहनेवाले नही लिख सकते कोई नई कहानी। उनके एक खास बचे हुए ख्यालात है और वे उस कैदखाने को तोडकर बाहर आ नही सकते। बस उनकी तो यही एक कहानी है—लौडा-लौडिया मिले, बिछुडे, मिले, बिछुडे ·· चलिए चाय पिएँ।"

भन्नन जी ने पूछा—"आप क्या सिनेमा मे ही कोई काम करते है?"

"जी हाँ। मैं म्यूजिक डायरेक्टर हूँ। अनेक फिल्मो की ट्यूनें लिखी है। कई बरसो से मैं इस काम को करता हूँ। इडस्ट्री के भीतर शायद ही कोई ऐसा होगा जो किरसन को न जानता हो। कम-से-कम आधे दरजन मशहूर एक्टर और एक्ट्रेस मेरे ही मार्फत पहले-पहल इस लाइन के भीतर घुसे है। अब भी इज्जत करते है वे किरसन की।"—किरसन फिर भन्नन जी का हाथ पकड उन्हे निकटतम विश्राम-गृह की तरफ खीच ले चला।

उन्हें एक कुरसी में बिठाकर किरसन बोला—"क्या खाएँगे आप चाय के साथ ? भजिया या टोस्ट ?"

बडा सकोच करते हुए भन्नन जी ने हाथ जोडकर कहा, "नही मैं कुछ न लूँगा।"

"क्यो क्या बात है ?"

"मैं होटल का बना कुछ नही खाता। अभी तक कभी खाया ही नही है।"

"तो अब तो आप बबई आ गए हैं, अब तो खाना ही पडेगा।"

"यह कोई जरूरी थोडे है।"

"जरूरी कैसे नही है ? सिनेमा के भीतर कोई फिरकापरस्ती नही

है। वहाँ इस तरह आप दूसरे की छुवा-छूत मानेगे तो कौन आपके साथ बात करेगा ? कितनी ही बढिया आपकी कहानी लिखी होगी, कोई पूछेगा भी नही। खाना बनाने की, उसके रखने की सफाई देखनी चाहिए आप को—हाइजिनिक पॉइंट ही तो मज़हबी नुकता है।"

भन्नन जी चुप रहकर मन मे सोचने लगे—"मुझे एक गुरु ट्रेन मे मिला जिसने बढिया कपडा पहनने का मत्र दिया और दूसरा यह बबई के प्रवेश पर छुआछूत की रूढि को तोड देने को कह रहा है। मुझे क्या करना चाहिए ?"

"देखिए, क्या नाम बताया आपने ? भानुदेव जी, दुनिया आगे को बढ रही है, आप बबई आए है—कहानी बेचने के लिए, अगर आपकी कहानी में कोई नया सदेश न होगा तो वह नही बिक सकेगी। नया सदेश आगे बढने का है, पीछे हटने का नही। ससार सिमट कर एक कुटुम्ब बन रहा है—छुआछूत तो कौमियत का धब्बा है, वह इटरनैशनेलिटी की राह का ज़हरीला काँटा है। इसलिए अगर आप यहाँ कुछ तरक्की चाहते है तो फौरन् ही आपको अपने दिमाग की ये पुरानी खाइयाँ पाट देनी पडेंगी।"

"चाय मँगा लीजिए इस वक्त सिर्फ। मैं अभी खाना खाकर आया हूँ।"—भन्नन जी समझे थे बम्बई मे किसी के हाथ का न खाने से अपना एक विशिष्ट व्यक्तित्व बन सकेगा। गाड़ी से उतरते ही किरसन ने उस विचार के सिर पर कुल्हाडी रख दी।

किरसन मुसकाता हुआ बोला—"देखिए भानुदेव जी, तकदीर की बात है। अगर आपकी एक कहानी बिक गई और वह अपना खर्चा वापिस ले आई तो फिर आपकी कई कहानियाँ बिक जायेंगी, अगर उनमे से किसी एक ने भी सिलवर जुबली मना ली तो फिर चाय क्या चीज है आप कई और चीजें पीने के मुस्तहक हो जायेंगे।"

"नही किरसन साहब, इस गरीब के बचपन से ही कुछ दूसरी तरह के सस्कार पडे हुए है। सध्या-पूजा, स्नान-ध्यान में मेरा ज्यादे मन लगता

है। छुआछूत, किसी मनुष्य या जाति से घृणा करने के मतलब से नहीं है, पर पुराने अभ्यास की लाचारी।"—भन्नन जी ने कहा।

"फिर आप इस गलत रास्ते पर अपने-आप आए या किसी ने धकेल दिया इधर आपको ?" किरसन ने होटलवाले से कहा—"बॉय दो कप चाय, स्पेशल।"

"क्या बताऊँ ? राय तो एक दोस्त ने दी थी कि सिनेमा मे बडी गदी तस्वीरे निकल रही है। वहाँ घुसकर उनमे सुधार करना हरएक साहित्यिक का कर्त्तव्य है।"

"तो क्या आप समझते है, आपके स्नान-ध्यान, पूजा-पाठ, जप-माला से यह काम हो जायगा ? भानुदेव जी ये सब तो ढकोसले हैं। कला खुद-बखुद एक मजहब है और ऐसा मजहब है जो बिना मेहनत के ही लोगों को अपनी तरफ खीच लेता है। फिर सिनेमा के भीतर ससार की तमाम कलाएँ आकर मिली हुई हैं। इस जमाने में पब्लिक के सुधार का इससे दूसरा बढिया जरिया कोई नही है।"

बॉय ने दो कप चाय मेज पर रख दिए। किरसन एक प्याला भन्नन जी की तरफ सरकाकर बोला—"पीजिए।"

भन्नन जी चाय पीते-पीते बोले—"आपको मैं अनेक धन्यवाद देता हूँ। आप मार्गदर्शक की भाँति मुझे सिनेमा के फाटक पर मिले है। आपकी बाते मेरे दिल मे गड गई है, वे अवश्य ही थोडे समय में अकुरित हो उठेगी।"

"बुरा न मानिएगा भानुदेव जी, मैं ऐसा ही आदमी हूँ। कुछ ऊट-पटाँग आपके सामने बक दिया। अच्छा, अब जरा कहानी तो सुनाइए।"

"कहानी इस वक्त कोई नही है।"

"कोई याद तो होगी। थोडा-थोडा थीम सुना दीजिए कि ज़रा-सा मुझे आइडिया हो जाय। बात ऐसी है आप कहानी को लिए-लिए फिरेंगे तो काम नही बनेगा। एक आदमी बीच मे चाहिए। मैं जब आपकी किसी प्रोड्यूसर से बाते करूँगा तो जरूर उसकी खोपडी में गहरी लकीर खिच

जायेगी।"

किरसन की बात जच गई भन्नन जी के पर उन्होने मन में सोचा—"अभी इस तरह सर्वथा एक अपरिचित को अपनी कहानी देना सरासर मूर्खता है । मैंने सुना है बबई मे तुरत ही आइडिया के उडा लेनेवाले डाकू बहुत से है। अभी कही कोई बढिया कहानी सुनी और आनन-फानन मे उसका लोकेशन, युग और कास्ट बदल दूसरे दिन बेच डाली किसी प्रोड्यूसर से। असली कहानी-लेखक के किसी निर्माता को कहानी सुनाने से पहले वह सेलुलाइड के पार परदे पर चमक उठता है और लेखक मूर्ख बन कर घर लौटता है।"

भन्नन जी को चुप रहता देख किरसन बोला—"आप तो सोचते ही रह गए !"

"मित्र, बात ऐसी है। मै दो रात का जागा हुआ हूँ, इस सबब कहानी सुनाने का मूड ही नही है बिल्कुल। आपसे जान-पहचान हो गई, स्थिर हो जाने पर आपसे जरूर मिलूंगा। आपका पता ?"

"बस यही पर समझिए। यही मिलूंगा, कभी इस होटल मे और कभी इस स्टूडियो में।"

"स्टूडियोवाले रोकेंगे तो नही ?"

"नही रोक सकते। कह देना, मैं किरसन साहब से भेट करना चाहता हूँ। मैं भी चौकीदार से बोल जाऊँगा। बात ऐसी है एक बिचारी गरीब एक्ट्रेस है। दो-तीन साल से एकस्ट्रा में ही अपनी जिन्दगी बरबाद कर रही है। हर तरह से लायक है। नाच-गीत, चेहरे का कट, रंग, अदा-कद, उमर-स्वभाव—सब बहुत बढिया। सिर्फ एक ही कमी है, गरीब है और कोई उसकी तरफदारी करनेवाला नही, मैं चाहता था अगर किसी स्टोरी में उसके लायक पार्ट फिट हो जाता तो झक मारकर डायरेक्टर को उसे चास देना पडता। भानुदेव जी, आपकी कहानी मे कोई बिज़िनेस् पैदा करने की मेरी जरा भी मशा नही है। अगर उस एक्ट्रेस में आपकी कहानी फिट् बैठ गई तो फिर क्या बात है—आपकी पाँचो उँगलियाँ एक

ही रात में घी में हो जायेंगी। हिन्दुस्तान के बच्चे-बच्चे के मुँह में आप का नाम हो जायगा। आप गाने भी लिख सकते है?"

"जी हाँ, ज़रूर कुछ तुकबदी करने का शौक है बचपन ही से।"

इतने में एक मोटी-सी स्त्री वहाँ पर आई। मोती बाई उनका नाम, पीठ पीछे लोग उनसे मोटी बाई भी कह देते है। वे तपाक से कुर्सी में बैठ मेज में मुट्ठी ठोककर बोली—"अजी किरसन जी, अच्छी मजाक कर रहे हैं आप? पहले मेक-अप पर आपने रुपया एडवास दिला देने को कहा था और आज शूटिंग का पाँचवा दिन है। कहाँ हैं तुम्हारे प्रोड्यूसर?"

"स्टूडियो मे ही तो। बॉय एक प्याला चाय। कुछ खाएँगी आप?"

मोटी स्त्री अपने आपे में नही थी, बोली—"कुछ नही खाऊँगी, मैं आज बिना एडवास लिए घर न जाऊँगी। यही धरना देकर रहूँगी स्टूडियो के फाटक पर। बडी एक्ट्रेसें और एक्टरो को रुपया मिल गया है, पीसे जा रहे हैं गरीब ही।"

"अभी किसी को नही मिला है। जो कुछ सेठ साहब देहली से लाए थे, वह म्यूजिक के स्टाफ मे और गानो की रेकार्डिंग में खर्च हो गया। जो बाकी बचा था वह स्टूडियो के किराये का एडवास, रॉ मैटीरियल, ऑफिस के मैनटेनेस, कसट्यूम और मेक-अप के सामान मे खर्च हो गया। सब एक्टर उनके साथ कोऑपरेट कर रहे हैं। बडे अच्छे आदमी हैं सेठ जी। रुपया बस आनेवाला है।"

"रुपए से ही आदमी की अच्छाई-बुराई है किरसन जी। मेरी सारी उमर हिन्दुस्तान के हर सूबे के आदमी की पहचान मे बरबाद हुई है। मैं सब कुछ जानती हूँ। मैंने देखा है, जब आदमी के पास पैसा नही रहा, तो अच्छे से अच्छा आदमी भी बेईमान हो गया।" बॉय ने उसके सामने चाय का प्याला रख दिया था। उसमें से उसने एक घूँट मुँह मे ली और फौरन ही तश्तरी मे थूक दिया—"उफ कडवी! बिल्कुल कडवी! उतना ही दूध और चीनी होनी चाहिए!"

"बॉय!" किरसन जी ने डाँटकर उसे पुकारा। वह फौरन ही हाजिर

हो गया । किरसन जी ने कहा—"जाओ, अच्छी चाय बनाकर लाओ। इसे फेक दो गटर मे। इसका पैसा नही मिलेगा।"

बॉय प्याला लेकर चला गया दूसरी चाय लाने।

किरसन जी ने उस मोटी महिला से कहा—"आप तो आज घर से लडने के इरादे से आई हैं।"

"स्टुडियो का दरवाजा क्यो बद कर रक्खा है ?"

धीरे-धीरे किरसन जी बोले—"एक-दो डिस्ट्रीब्यूटर आए है। उन्हे गाने सुनाए जा रहे है। अगर पट गए तो दस-बीस हजार पेशगी दे जायेगे। सभी का काम चल जायगा।"

बडे अचरज मे पडकर वह मोटी बाई बोली—"ऐ ऽ आप तो कहते थे, सेठ बडे पैसेवाले है। लाखो की रियासत के वारिस हैं। फिर यह डिस्ट्रीब्यूटरो की खुशामद कैसी ?"

"रियासतें तो खटाई मे पड गई है न।"

'मुआवजा तो मिला होगा।" मोती बाई ने कहा। चाय वाला उनके सामने चाय रख गया और वे पीने लगी।

भन्नन जी उस महिला को देखते ही रह गए। घर से बाहर पब्लिक मे चली आई थी वह, बडी उजड्डता से। बिना कघी के उसके रूखे और लम्बे बाल कधे पर लटक रहे थे। कुछ-कुछ मैले रेशमी रूमाल से उसने सिर बॉध रक्खा था। पेटीकोट ही पहन कर चली आई थी। हाथ में एक घी की अल्यूमिनियम की बाल्टी और एक थैला था।

एकाएक मोती बाई को फिर न-जाने क्या याद आई। वे बोली—"चलो, मैं फाटक खुलवाकर छोडूँगी अभी।"

"फाटक खोलने का हुक्म नही है, जब तक गाने खत्म न हो जाये।"

"कौन कानून है यह ? मैं पत्थरो से फाटक की चॉदमारी कर उसे खुलवा लूंगी। मै पैसा लेकर ही जाऊँगी आज।"

"हैं ! है ! है ! आपको आज यह क्या हो गया मोती बाई ? बदन में आधे कपडे भी नही ? ऐसी ही चली आई हो स्टूडियो को गुसलखाना

समझकर, तमाम लोग क्या कहेगे ? डिस्ट्रीब्यूटरो की नजर मे हमारी क्या इज्जत रह जायगी ? जाइए घर जाकर पहले ठीक-ठीक कपडे पहन आइए ।"—किरसन जी ने कहा ।

"क्या मैंने कभी कपडे नही देखे है ? एक-से-एक बढिया चीजें पहनी है । यहाँ से नाप जाती थी और यूरोप से सिलकर आते थे । मेरा शौक पूरा हो गया और मैं अब फैशन को एक झूठा खोल समझती हूँ जो सिर्फ पब्लिक को धोका देने के लिए काम मे लाया जाता है। किरसन जी, चल कर मेरे घर देख लीजिए पहले आदमी को पेट भर खाना चाहिए, फिर उसे कपडो की सूझती है । मै आटे के लिए यह थैला और घी के लिए बर्तन लाई हूँ । मुझे पैसे दिलवा दीजिए ।" —मोती बाई ने कहा ।

"आज इस समय अब मालिको से भेट नही हो सकती । मैं कर दूंगा सौदे का कोई इंतजाम । अपने बनिए के लिए पुरजी लिख दूंगा । ले आना उसके यहाँ से सौदा ।"

"तुम्हारा बनिया तो गिरगाँव में है ।"

"गोल पीठे में तुम भी रहती हो कौन दूर है ? जरा सी देर का ट्राम का रास्ता । गलियो से पैदल जाओ तो और भी जल्दी हो जायगी ।"

मोती बाई कुछ आश्वासित-सी जान पडी । किरसन जी ने भन्नन जी की तरफ नजर कर कहा—"ये मोती बाई है—मशहूर गीतागना, आप अपने जमाने मे नाच मे भी अपना कोई सानी नही रखती थी । आपने बाकायदा उस्तादो से कत्थक नृत्य की शिक्षा पाई थी अब जरा बादी बढ जाने से नाच नही सकती । जिन लोगो ने आपकी कला को देखा, वे अब भी आपकी बडी कद्र और इज्जत करते है । कितनी सादगी से आप रहती हैं । देखिए, कौन कहेगा इनसे ये कला की सजीव प्रतिमा हैं । ड्रेस कम्प्लेक्स नाम को भी नही !"

भन्नन जी ने बडे आदर से खडे होकर हाथ जोडे—"नमस्ते !"

किरसन जी ने परिचय को और आगे बढाते हुए कहा—"अभी जिस ऐक्ट्रेस के बारे में मैंने आपसे कहा । वह आपकी ही लडकी है । उनका

फिल्मी नाम रक्खा है मैंने कला-बाला । ईश्वर चाहेगा तो कला-बाला फिल्म की दुनिया मे चाँद-सी चमक उठेगी । मोती बाई जी का जमाना दूसरा था । अकेले दम, कितनी ही कला क्यो न हो, एक हद तक ही कलाकार फैल सकता था और अब सिनेमा फिल्म की पचास कापियो मे एक ही रात मे कलाकार पचास स्टेशनो में जगमगा उठता है ।"

मोती बाई बेटी के लिए ऐसा अभिनदन पाकर मन-ही-मन फूली नही समाईं । उनका क्रोध भूला गया था । उन्होने भन्नन जी की तरफ इशारा किया—"आपकी तारीफ ?"

"आप श्री भानुदेव शर्मा है, हिन्दी के बडे भारी मुसन्निफ है । आपकी लिखी हुई दर्जनो किताबें है । अब आपने सिनेमा की तरफ कदम बढाये हैं, उसकी स्टोरी लिखने के लिए । हम लोगो की खुशकिस्मती है यह ।"

बडी प्रसन्न मुद्रा मे मोटी बाई बोली—"कही बाहर से आए है आप ?"

"जी हाँ उत्तर-प्रदेश से ।"—भन्नन जी ने जवाब दिया ।

"कला-बाला के लिए कोई अच्छा पार्ट लिख देने के लिए कह रहा हूँ मैं कि तमाम प्रोड्यूसर उसकी तरफ दौड पड़ें उसे हीरोइन बनाने के लिए ।"

"हाँ जब तकदीर में लिखा होगा तो ऐसा होने मे क्या देर लगेगी ?"

"कुछ भी हो तकदीर का जोड लगानेवाला बुद्धिमान ही कहा जाता है । मोती बाई जी, कुछ लोग तो कहते है आपके पास राजे-रजवाडो का बहुत-सा सोना-जवाहरात जमा है ।"—किरसन जी बोले ।

'ज़मीन मे बो रक्खा है मैने या अपने साथ अपनी कब्र मे गाड कर ले जाऊँगी मिस्रवालो की तरह । इस तरह दाने-दाने और धज्जी-धज्जी को तो मै हैरान हो रही हूँ । किरसन जी, अगर आप मुझे उन कहनेवालो के नाम बता दे तो मैं उनकी जबान की जड मरोड कर रख दूँ ।"

"कुछ रुपया बैंक मे तो है आपके । होना भी चाहिए, दुख-बीमारी और काले दिनो की मदद के लिए ।"

"नही है किरसन जी, आप से क्यो छिपाऊँ ? आप मुझसे उधार

थोडे ही माँग रहे है ? वह मेरा बडा लडका, उसकी सगत ठीक नही है न। था मेरे पास काफी रुपया, सब उसने फूंक दिया। कुछ खर्च हो गया और कला-बाला की नाच-गीत की तालीम मे भी बहुत सर्फ हो जाना कोई ताज्जुब की बात नही है।"

"कला-बाला पर तो आपने जो भी खर्च किया है, वह कुछ ही दिनो में मय सूद के वसूल हो जायगा।"—किरसन जी ने कहा।

"कुछ नही होनेवाला है, इसी लिए तो मैने यह भाग-दौड मचा रखी है।"

"मै नही समझा।"

"किरसन जी बात ऐसी है अभी तो यह कलाबाई अपने बस की है। थोडे दिन बाद अगर किसी एक्टर के साथ इसका मन लग गया तो फिर कौन पूछनेवाला है ? जब तक इसके वह अकल नही जाग उठती तब तक जो कुछ भी इससे वसूल हो जाय। आज तो आपके कहने से मान गई। प्रोड्यूसर और डायरेक्टर दोनो से कह देना मुझे पूरा एडवास दिला दे नही तो मैं फाटक पर धरना देकर सबकी इज्ज़त खतरे मे डाल दूँगी।"

"आज ही मौका मिलने पर मैं दोनो से बात-चीत करूँगा। आप धीरज रक्खे।"

"पुरजा लिख दो फिर बनिए के नाम।"

किरसन जी ने पुरजा लिख दिया और मोटी बाई चली गई। भन्नन जी भी उठकर बोले—"अब मुझे भी आज्ञा मिले। नबर ३ पी, दादर मेन रोड कहाँ पर होगी ?"

"मैं समझता हूँ, आप और आगे चले जाइए। वहाँ पूछ लीजिएगा। कोई आपका दोस्त है क्या वहाँ ?"

"हाँ।"

"अच्छी बात है, फिर मिलिएगा जरूर। खूब बढ़िया स्पेशल कहानी लिखकर लाइए, आग भरी हुई, जिससे सारे समाज में तहलका मच जाय। कब मिलेंगे ?"

"देखिए जब भगवान को मजूर होगा।"—भन्नन जी ने थैला उठाया और दोनों हाथ जोड सिर से मिलाकर चल दिए।

अपनी धुन और नाक की सीध में भन्नन जी जाते ही रहे दादर मेन रोड पर। सिनेमा-जगत के पहले-पहले के दो चरित्र—बडे विचित्र उनके मन मे समा गए थे। वे सोचने लगे—"सारी समवेदना और सहृदयता दिखाई किरसन जी ने, लेकिन यह नही पूछा—तू ठहरेगा कहाँ ?" फिर उन्हे याद आया, यह बंबई है, यहाँ कुछ दुर्लभ नही पर भूमि मे रात के सिर रखने का ठिकाना—वह आकाश-कुसुम है।"

दो सडकों के सगम पर आ गए वे। दूसरी सड़क काफी लबी-चौड़ी थी, उसके बीच ट्रामे दौड रही थी इधर से उधर—टन्-टन्-टन्-टन्-टन्! अपने रुकने और चलने की भाषा भी यही थी और इसी पर ट्राम के मार्ग पर यात्रियो को सावधान करने के सकेत भी।

ट्राम के इधर-उधर की दोनो सडको पर बेहताशा मोटरे दौड रही थी। भन्नन जी ने देखा उन दोनो सडको पर एकतरफा ट्रेफिक चल रही थी। सडको के उधर एक इमारत मे वडी सजावट देखी उन्होने। होशियारी से सडक पार कर वहाँ जा पहुँचे। किसी सिनेमा की नई फिल्म चलने की चहल-पहल थी। एक आदमी से लगे पूछने—"भाई नंबर ३ पी, दादर मेन रोड कहाँ पर है ?"

आदमी बोला—"तुम तो हिंद माता पर आ गए। वो उस नोक से बाएँ हाथ को चले जाओ।"

"बेनू-प्रोडक्शन्स का ऑफिस ?"

"हाँ-हाँ, वही, बाहर एक भइया की दूध की दूकान है, उसी के बगल मे एक पीला फाटक है। भीतर एक तरफ एक रंगवाले की एजेन्सी है, दूसरी तरफ एक किंडर गार्टन स्कूल।"

बहुत खुश होकर भन्नन जी बोले—"हाँ-हाँ, यही-यही भाई! आपने बिल्कुल ठीक बता दिया। कितनी दूर है ?"

"जाओ तो सही जरा भी दूर नही है।"

भन्नन जी ने फिर चला हुआ रास्ता नापना शुरू किया अंत में एक पीला फाटक दिखाई दिया उन्हे । डरते-डरते उसके भीतर घुसे तो रग की एजेन्सी और किंडर गार्टन स्कूल दोनो नजर आए, लेकिन बेनू प्रोडक्शस का कही पता नही था ।

सामने बीच में एक दुमजिला इमारत दिखाई दी, पर उसमे कोई साइनबोर्ड न देखकर भन्नन जी जरा हिचके। उस इमारत मे ऊपर को जाने की सीढियो में नगे सिर घुटनो तक की स्कर्ट पहने एक लडकी एक कुत्ते के साथ खेल रही थी ।

भन्नन जी को सकोच में पडा देखकर वह कुत्ता भौकता हुआ उनकी तरफ दौड पडा । भन्नन जी चिल्लाए—"पकड लो, इसे पकड लो नही तो काट खाएगा ।"

हँसती हुई लडकी कुत्ते के पीछे दौडी—' भागो मत, वही खडे रहो काटेगा नही ।" लडकी ने कुत्ते को पकड लिया ।

भन्नन जी की साँस में साँस आई । लड़की ने पूछा—"किसे ढूँढ रहे हो ?"

"बेनू-प्रोडकशस का दफ्तर कहाँ है ?"

लडकी ने सिर से पैर तक देखा—"क्या काम है वहाँ ?"

"हरीश से मिलना है ।"

"दफ्तर तो आज बन्द है, लेकिन हरीश रहता यही है, उधर जाकर देखो ।"—लडकी ने उसी दुमजिला इमारत की तरफ इशारा किया और खुद भी उसी तरफ बढी ।

बरामदे में पहुँचकर लडकी ने बाईं तरफ के कमरे को बताया। भन्नन जी ने देखा एक आयताकार प्लास्टिक के चमकते हुए गहरे नीले प्लेट मे प्लास्टिक के ही छोटे-छोटे सफेद अग्रेजी हरुफ जडे थे—"बेनू प्रोडक्शस—ऑफिस ।"

भन्नन जी यह पढकर बहुत खुश हो गए । लडकी ने ऑफिस के बगल से जानेवाली एक गैलरी दिखाकर कहा—"उधर आखिरी कमरे में चले जाओ । शायद वहाँ कोई मिल जाय ।"

भन्नन जी दो कमरो को पार कर आखिर के तीसरे कमरे में जा पहुँचे, वहाँ उन्होने बाहर से द्वार खटखटाया ।

सात

तुरत ही द्वार खुला, उस अधखुली जगह मे एक अधखुली किताब के भीतर उँगली डाले एक नवयुवक ने दर्शन देकर पूछा—"किसे ढूंढते है आप ?"

"हरीश जी यही रहते है ?"

"हाँ यही रहते है ।"

"मैं उत्तर-प्रदेश से आया हूँ, अभी शाम की गाडी से ।"

नवयुवक ने किताब के भीतर से उँगली निकाल ली और किताब को सीधा कर अपने वक्षस्थल के पास पकड लिया—"आपका शुभनाम ?"

विचित्र सयोग ! भन्नन जी ने उस किताब की जिल्द पर लेखक के नाम को अपनी उँगली से दिखा दिया ।

नवयुवक के आश्चर्य का ठिकाना नही रहा, वह पढ उठा—"श्री भानुदेव शर्मा ! आप ही है श्री भानुदेव शर्मा ?" उसने बडे गौर से उस "टेढी दुम"—नामक सामाजिक उपन्यास के लेखक को देखा ।

"टेढी दुम—यह तो मेरा बहुत पुराना उपन्यास है, द्वितीय विश्वयुद्ध से पहले का, उसके बाद के उपन्यास आपने पढे होंगे । क्या बताया जाय कुछ ऐसा ही हो गया नही तो—"

नवयुवक उन्हे भीतर की ओर ले जाकर बोला—"अगर आप को कष्ट न हो तो आप कुछ देर बिराजें । मैं जल्दी से बाजार मे दूध लाकर आपके लिए चाय बना दूं ।"

भन्नन जी भीतर को बढते हुए बोले—"नही, नही, मैं अभी चाय पी कर आया हूँ कोई आवश्यकता नही है ।"

भन्नन जी ने देखा, एक छोटा-सा कमरा था । एक तरफ प्लाइउड ठोककर पार्टिशन कर रक्खा था, मालूम नही उसमें क्या था । उसकी बगल में एक मेज लगी थी, उसमें एक गैस का चूल्हा, एक कोयले की सिगडी और कुछ खाना पकाने के बर्तन थे । मेज के पास की दीवार में एक कबाट था, उसमे चाय-चीनी का सामान, कुछ घी-तेल, नमक-मसाले, प्याले-गिलास थे । मेज के नीचे एक लोहे का बिना मँजा तवा, सिल-बट्टा, एक मिट्टी तेल की बोतल, और एक कोयले का टीन था ।

मेज के सामने एक ईंट की चौडी दीवार थी । उसके उधर एक गुसलखाना था, उसमें पानी का नल था । गुसलखाने की दीवार मे भी एक अल्मारी थी । उसमें कुछ साबुन के केक, दनमजन और तेल की शीशियाँ थी, ईंट की दीवार पर कुछ बर्तन थे और एक ब्रॉस कॉक लगा हुआ मिट्टी का घडा । नल के सामने लोहे की छडो से जडी खिडकी थी । उस खाना पकाने की मेज और गुसलखाने की बगल मे कुछ काठ-कबाड-सा दिखाई दे रहा था । अच्छी तरह ध्यान से देखा नही भन्नन जी ने ।

पार्टिशन के इधर जहाँ भन्नन जी का स्वागत किया गया, वहाँ भी सामने एक लोहे की छडोवाली खिडकी थी । उसके दरवाजो मे काँच लगे थे । कुछ टूट गए थे, बाकी बहुत मैले थे । खिडकी के नीचे एक लोहे की पलग थी लोहे की पत्तियो से बुनी हुई, उस पर एक दो बिस्तर तह कर रक्खे हुए थे । पलग के पास एक अल्मारी थी उसमे कुछ

साधारण किताबें थी और कुछ गुजराती अखबारो के पुराने अक। लकड़ी के पार्टिशन मे कीले ठोंक दी गई थी और उन पर कुछ कपडे लटक रहे थे। एक छोटी सी टेबुल भी थी।

प्रवेश-द्वार से खाना बनाने की मेज तक इधर एक रस्सी बधी थी उस मे कुछ मैले कपडे थे, कुछ अडर वियर और तौलिए सुखाने को डाल दिए गए थे। लोहे की पलग के नीचे दो ट्रक थे, कुछ जूते और चप्पलों के जोडे। किताबो की अलमारी के ऊपर एक कॉच जडा महावीर जी का चित्र था, उसमे फूलो की माला थी। निकट ही एक धूपदान मे खोसी हुई प्राय जल-चुकी अगरबत्ती।

कमरे में तीन लोहे की कुरसियाँ थी। एक पर उस नवयुवक ने भन्नन जी को बिठा दिया था। उन्होंने उससे कहा—"आप भी बैठ जाइए न।"

"बैठ जाऊँगा। पहले आपके लिए चाय बना देता हूँ।"

"अभी पी है।"

"बम्बई मे जितनी भी बार पी जाय, कम है। पडित जी यहाँ की आबहवा माँगती है चाय। इस कमरे में तो दिन भर चाय बनती रहती है। आज कपनी के मालिक लोग कही गए है दावत मे, इसी से जरा चैन है।"

"थोडी देर मे सही। हरीश जी कहाँ है ?"

"वे मालिको के साथ ही गए है। मैं समझता हूँ अब आते ही होगे।"

"आप भी इसी कपनी में है ?"

"जी नही, मैं यहाँ एक सिंधी कपड़े के व्यापारी है। फोर्ट में उनका दफ्तर है। मैं उनके यहाँ नौकर हूँ।"

"क्लर्की करते है ?"

"ऐसा सौभाग्य कहाँ ? मैं चपरासी का काम करता हूँ। बाबू लोगो को चाय के टाइम चाय भी तैयार कर देता हूँ।" नवयुवक ने खिड़की की राह से एक विशाल इमारत दिखाकर कहा—"इसी कोठी में रहते

हैं वे। कभी-कभी मालिको के घर का सौदा-पत्ता भी ढोना पडता है। यहाँ आने-जाने से हरीश के साथ जान-पहचान हो गई। बडा अच्छा आदमी है। बबई में रहने का बड़ा कष्ट है। उसी ने मुझे यहाँ ठौर दे रखी है।"

"हाँ भाई, मेरा एक मित्र है गोपाल, उससे हरीश का पता पाकर उसकी ऐसी ही तारीफ सुनी थी।"

"और पडित जी मैं तो आपकी सज्जनता को देखकर दग रह गया हूँ। आप इतने बडे विद्वान, इतनी बडी-बडी किताबें आपने लिख दी है। घमड जरा भी नही छू गया है आपको। आपका कितना सादा वेश है। अपना सामान भी अपने ही हाथो ले आए है। धन्य है आपको। लेकिन आपका ट्रक और बिस्तर कहाँ है?"

"यही तो बात हो गई भाई। मुझे बिस्तर और कपडो के दिखावे की जरा भी परवा नही। एक ट्रंक लाया था मैं साथ। उसमें मेरी लिखी तमाम किताबें थी। राह मे आगरे तक आते-आते ही न जाने किसने साफ कर दिया!"

"हरे-हरे! यह तो बडी बुरी सुनाई आपने। पुलिस मे रिपोर्ट नही लिखाई आपने?"

"अजी मुझे यहाँ आने की जल्दी थी। कहाँ रास्ते में सकट मोल लेता? छपी हुई किताबो की तो कोई परवा नही, तीन मेरी हस्त-लिपियाँ थी उसमें। उनके खो जाने का बडा दुःख है, वह कमी कैसे पूरी होगी? खासकर मैं उन्हे यहाँ सिनेमावालो के हाथ बेचने आया था।"

"सिनेमावालो के हाथ?"—हर्ष से उछलकर वह नवयुवक बोला।

"हाँ उन्ही के हाथ, तभी तो मैंने यह उचित समझा हरीश जी से ही सबसे पहले मिलूँ।"

"जरूर पडित जी, बेनू प्रोडक्शंस का आफिस यही है और उसके मालिक लोग अपनी पहली पिक्चर के लिए अभी कहानी ढूंढ ही रहे है। सुबह से शाम तक यहाँ कई लोग आते है। आप यही रहिए। हरीश पर

कम्पनी के मालिक की बडी कृपा है । उसके मारफत आप उनसे एक दिन भेंट कीजिए ।"

"लेकिन कहानी तो चोरी चली गई।"

"मँगा लीजिए । यहाँ कालबा देवी मे कुछ किताबो की दुकानें हैं, वहाँ से मैं खरीद ला दूंगा ।"

"तुम बडे योग्य और उन्नतिशील नवयुवक जान पडते हो मुझे। क्या नाम है तुम्हारा ?"

"मेरा नाम कौशल है ।"

"वाह, नाम भी बहुत बढिया है ।"

"पडित जी, मैं अंग्रेजी भी सीखने लगा हूँ ।" अलमारी में से निकाल कर उसने एक प्राइमर निकाली और एक अग्रेजी के लेख की कापी । वह बोला—"मेरा मालिक बडा कजूस है, दफ्तर के टाइम के बाद भी काम करो कहता है । शाम को साग-सब्जी ढोनी पडती है और सुबह मोटर धोने का आर्डर रहता है । उसका लडका जरा अच्छा आदमी है । कभी-कभी चाय पीने को नकद पैसे भी दे देता है । बडी हमदर्दी से बातें सुनता है । अगर मुझे अग्रेजी के हरफो का पढना भी आ जाय तो दफ्तर की रेकार्ड-कीपरी दे देने को कहता है ।"

"भाई, नौकरी मे कठिनाई सभी जगह हैं । तुम नवयुवक हो तुम्हे कठिनाइयो का छाती खोलकर सामना करना चाहिए ।"

पडित जी आप मुझे अपने साथ रख लीजिए । मैं आपकी हर तरह से सेवा करूँगा । जब आपकी सिनेमावालो से जान पहचान हो जाय तो फिर मुझे वहाँ रखा दीजिए ।"

"कौशल जी, इस तरह से तुम्हे बहकना नही चाहिए । जहाँ जमे हो वही जमे रहने में लाभ है । बेनू प्रोडक्शस में नौकरी दिला देने को नही कहा तुमने हरीश से ?"

"अभी ठहर जाओ कहता है हरीश । जब कम्पनी की शूटिंग शुरू हो जाने पर काम बढेगा, तभी कुछ गुंजाइश होगी ।"

"तो देर क्यों हो रही है ?"—भन्नन जी ने कौशल को कुर्सी मे बिठा कर कहा।

"बाहर के दिखावे मे तो देर कहानी पर अटका दी गई है। सभी से यही कहा जा रहा है कि भाई अभी कहानी का सैलेक्शन नही हुआ है। लेकिन हरीश हमारे कानो मे कहता है, असली देर का सबब है पूजी की कमी।"

"मैं तो समझता था बेनू बाबू के पास अच्छा रुपया जमा होगा।"

"खर्च भी तो बहुत है, घर मे आधी गोरी मेम है इनके। बैरा, खानसामा, आया, ड्राइवर, मोटर, बगला, बाग-बगीचा, रेडियो, टेलीफोन, क्लब, पार्टियाँ, दोस्त, रिश्तेदार—सभी कुछ ठहरे।"

"तो रुपया कहाँ से आयेगा ? क्या मिल-जुलकर कपनी बनायेगे ?"

"नही, रुपया अपना ही लगावेगे। हाँ, दोस्तो की मेहनत जरूर लेगे उधार।"

"क्या मतलब ?"

"मतलब यही है—जितने इनके एक्टर-एक्ट्रेस मित्र है, उन सबने इनकी कम्पनी मे अभी बिना कुछ पेशगी लिए काम करने का वादा कर दिया है।"

"कौन-कौन है वे ?"

"चलिए दिखाऊँ अभी आपको। ऑफिस मे सबकी बडी-बडी फोटो टगी है। हरीश होते तो दफ्तर खोल भीतर ले जाकर सब एक-एक चीज दिखा और समझा देते। चलिए।" कौशल ने कुर्सी से उठते हुए कहा।

"हरीश को आ जाने दो तभी सही।" भन्नन जी ने फिर कौशल का हाथ पकड़ कर उसे बिठा दिया—"डायरेक्टर कौन है ?"

"कोई मशहूर तो नही एक नया नाम है, लेकिन अगर फिल्म चल पडी, मौका मिल गया तो मशहूर होने मे क्या देर लगेगी ? उनका नाम है मिस्टर रिम, वे बेनू साहब की घरवाली के बडे भाई है।"

"हिन्दुस्तानी भाषा जानते है।"

"हम से अच्छी ।"

"हीरो-हीरोइन कौन है ?"

"कई छाँट रखे है। कहानी के तय हो जाने पर उसका घुमाव देखकर उनको पसन्द कर लेगें । एक एक्ट्रेस तो यही ऊपर रहती है, उसका नाम है—सरिता ।"

भन्नन जी ने उस नाम पर कोई विशेष अभिरुचि न दिखाकर कहा—"मेरे एक दोस्त हैं यहाँ । कोमल जी उनका नाम है । वे कई बरसो से यहाँ रहते है, सिनेमा के ही फेर में आए थे, लेकिन सुना है अब बिजिनेस करते है अगर कही उनका पता लग जाता तो रहने की सुविधा हो जाती ।"

"पता है उनका आपके पास ?"

"पता तो नही है ।"

'फिर कैसे ढूँढ लेगे आप ? यहाँ तो कभी-कभी मकान मालूम होने पर भी आप अपने आदमी को नही पा सकते, आपको रहने की ऐसी क्या फिकर हो गई है । हरीश को आ जाने दीजिए । अगर आपको यह कमरा पसन्द है तो वह हरगिज कही आपको जाने न देगा ।"

खिडकी के सामने दूर तक खुली हुई जगह थी । इधर-उधर दो ऊँची-ऊँची इमारते थी । खुली हुई जगह मे बम्बई की लोकल रेलो का मार्ग था जिसमें थोडी-थोडी देर मे रेले बोरीबन्दर को और वहाँ से आ-जा रही थी । भन्नन जी को वह दृश्य बडा सुन्दर लग रहा था ।

खिडकी से हवा का एक अखण्ड प्रवाह जारी था, जो बडा सुखद जान पडता था । भन्नन जी ने कहा—"इस कमरे में यह हवा बडी प्यारी लग रही है । क्या रोज ही ऐसी हवा चलती है ?"

कौशल ने उत्तर दिया—"जी हाँ, बराबर, पखे की कमी पूरी कर रखी है इस हवा ने । नही तो हम लोगो की क्या औकात थी ?"

भन्नत जी ने कहा—"तडक-भडक, शोभा-सजावट, दरी-फरनीचर मैं इन चीजो को कोई मूल्य नही देता । आप लोगो की सच्ची प्रीति,

बहुत बडी चीज है, उसके सामने कमरे की अच्छाई-बुराई की कोई गिनती ही नही जान पडती।"

"अच्छा अब मै दूध ले आता हूँ यही पर है दुकान, आप तब तक बेखटके यहाँ बैठिए।"—कौशल एक गिलास लेकर वहाँ से चला गया।

भन्नन जी के दिमाग मे वह प्लाइउड से घिरी हुई जगह घूम रही थी। उसके भीतर क्या है ? इसे जानने की उत्सुकता से वे उठे। गुसलखाने की तरफ गए वहाँ जाकर उन्होने देखा, उस घिरी हुई जगह मे कुछ टूटा-फूटा फरनीचर था, कुछ बिजली के पुराने तार और प्लग थे, कुछ रद्दी कागजो का ढेर था, कुछ टिन और लोहे का टूटा-फूटा सामान।

वे सोचने लगे—"यह कबाड क्यो जमा कर रखा होगा ? बम्बई मे जहाँ जगह की इतनी कमी बताई जाती है, वहाँ इस तरह कूडा इकट्ठा कर उस स्थान से मनुष्य को विहीन कर देना—बडी अद्‌भुत बात जान पडती है।"

उस कबाड के भर जाने से वहाँ बडी धूल और गन्दगी जमा हो गई थी। बाहर किसी की आहट सुनकर भन्नन जी तुरन्त अपने स्थान पर आकर जम गए। दरवाजा खोलकर एक लकडी के हेडिल का थैला लिए एक नवयुवक चला आया वहाँ। भन्नन जी को देखकर जरा ठिठका वह।

फिर उनकी कुछ परवा न कर उसने सीटी मे कोई सिनेमा का टूटा-फूटा गीत बजाना शुरू किया। थैला खोलकर उसमें से उसने एक पीतल की खूँटी निकाली। कील ठोकने के लिए कोई चीज ढूँढने लगा। मेज के नीचे से सिल का बट्टा निकाल लाया और प्लाइउड के पार्टिशन पर के खम्भे पर उसे ठोकने लगा।

भन्नन जी चुपचाप बैठे यह सब कुछ देख रहे थे। एकाएक उनके मन मे यह सन्देह होने लगा, कही यही तो हरीश नही है ?

वे उससे कुछ कहने ही वाले थे कि दूध लेकर आ पहुँचा कौशल—"क्यो प्रेम, आते ही क्या शोर मचा दिया तू ने। छुट्टी होने पर भी दो मिनट चैन से नही बैठा जाता तुझ से ?"

"मेरे कोट-पैंट लटकाने के लिए कोई जगह ही नही थी यहाँ। कुछ पीतल झाड-झूडकर यह खूँटी ढाल लाया।"

"इतनी कीलें तो ठोक रखी हैं! चाय पिएगा?"

"जैसी मेहरबानी हो तुम्हारी। हरीश अभी नही आया?"

"नही।" स्टोव जलाते हुए कौशल ने कहा। स्टोव पर एक निपट काली-कलूटी केतली में पानी रख वह भन्नन जी के पास आया।

प्रेम लोहे की पलग मे बैठ गया था। कौशल ने पडित जी से कहा—"इसका नाम प्रेम है, यह भी हमारे ही साथ यहाँ रहता है। एक पारसी के कारखाने मे फिटर है। बडी-बडी चीजे बना देता है लोहे और पीतल की।"

भन्नन जी ने बडी प्रशसा के भाव से उसकी तरफ देखा, वह उठकर खडा हो गया।

भन्नन जी बोले—"बैठे रहो, बैठे रहो, उठने की क्या आवश्यकता है, हम सब बराबर हैं, लोहे का काम क्या कोई छोटा काम है? यह धरती पर की बडी भारी और सख्त चीज है। अभी एटम-युग के अच्छी तरह शुरू होने तक तो यही लौह-युग है।"

अपनी गुरुता की स्थापना से प्रेम प्रसन्न हो उठा। उसने इशारा कर यह जानना चाहा, बे आए हुए व्यक्ति कौन हे? इसी समय बाहर गैलरी से जोर-जोर से जूते बजाते और एक सिनेमा का चलता गीत गाते हुए कोई उधर आता हुआ जान पडा।

कौशल दौडकर बाहर हो रहा। कुछ भजिया और एक पाव रोटी बगल मे दबाए हरीश चला आ रहा था। कौशल ने होठों पर हाथ रख कर उसे चुप रहने का इशारा किया।

"बात क्या है?" हरीश ने धीरे-धीरे पूछा।

दोनो ने कमरे के भीतर प्रवेश किया। कौशल बोला—"ये श्रीमान भानुदेव जी शर्मा है, जिनकी किताब मै लाया हूँ। हमारी तकदीर खुली है जो इतने भारी विद्वान् हमारे यहाँ आए है।"

कौशल चाय ले आया। प्रेम बहाने-ही-बहाने से कही बाहर खिसक गया था।

भन्नन जी चाय पीते-पीते बोले—"भाई रहने को बिना माँगे तुमने मुझे जगह दी है यह क्या छोटी कृपा है।"

हरीश बोला—"बात ऐसी है पडित जी, जब किसी ने हम लोगो पर भी कृपा कर रहने को जगह दे दी है तो हम भी वैसा ही क्यो न करे।"

भन्नन जी ने पूछा—"मकान तो बेनू प्रोडक्शस ने दिया होगा।"

"नही, बेनू साहब को तो सिरे पर के सिर्फ दो ही कमरे दिए गए हैं। इधर के ये दो एक दूसरे सज्जन के नाम हैं।"—हरीश ने जवाब दिया।

चाय पीते-पीते भन्नन जी एक बार बाहर जाकर उन कमरो को देख आए। प्रेम बाहर उखडा-उखडा-सा खडा था प्रोडक्शस ऑफिस के पास। भन्नन जी उसे अपने साथ भीतर बुला लाए—"प्रेम को भी दो चाय।"

कौशल बोला—"हाँ सबके लिए बनाई गई है। आप पीजिए।"

"सभी साथ पिएँगे—यही मेज पर रखो सब की चाय।" थैले मे से कुछ बची पूरी-मिठाई निकालकर भन्नन जी ने थोडा-थोडा सब को दिया—"यहाँ हम लोग परदेश मे हैं। हमे आपस मे प्रेम से अपना बल बढाकर रखना उचित है।"

"हाँ पडित जी, आपके ऊँचे विचारो से हमारी तरक्की होगी। आप यही रहिए।"—कौशल बोला।

सब की चाय उसी मेज पर रखी गई। तीनो कुरसियो पर तीनो बैठ गए केवल प्रेम अपनी तश्तरी हाथ में लेकर भजिया और पडित जी की दी हुई पूरी-मिठाई खाने लगा बडे सकोच के साथ।

"तुम बडे सकोचशील जान पडते हो, पलँग पर बैठ जाओ न। लो अपनी चाय उठा लो।"—भन्नन जी ने प्रेम से कहा।

प्रेम ने बडे डरते-डरते चाय उठा ली। भन्नन जी ने पूछा—"तो यह मकान है किसका ?"

"मकान एक सेठ का है। यह नीचे का हिस्सा एक पारसी सज्जन के नाम है। उनकी बिजली के सामान की दूकान थी। दो लडके है उनके, एक लडकी और स्त्री। उनके मरने पर दूकान बेच दी गई। बडे लडके पलटन में हैं पूना में। माता और बहन उन्ही के साथ रहती हैं। छोटे भाई यहाँ एक मिल मे है, बडे अच्छे है। इसकी बगल मे जो यह कमरा है, उसी में वे रहते है। रात को आठ बजे तक लौटते हैं।"

"बडी देर में मिलती है छुट्टी।"—भन्नन जी ने पूछा।

"नही छुट्टी तो समय से मिल जाती है। होटल मे ही बाहर खाना खाकर आते हैं। कभी-कभी दोस्तो के साथ सिनेमा देखने चले जाते हैं। यहाँ के दिन भर काम करनेवालो के लिए घटे-दो घटे का दिल बहलाव बहुत जरूरी है। मन की थकान दूर कर ही तो दूसरे दिन फिर आदमी ताजा होगा। इसी से यहाँ सिनेमा का इतना चलन है।" हरीश ने कहा—"परसी है उनका नाम परसी घोडावाला। बेनू साहब को वे दोनो कमरे परसी साहब ने ही सब-लेट् कर रखे है। एक बाहरवाला उनका ऑफिस दूसरा कमरा रिटाईरिंग रूम है। उसमें वे कभी खाना खाते है, आराम करते हैं और कभी किसी से प्राइवेट बाते करनी होती है तो उसे भी करते हैं।"

है सब। दिन भर झूठी खुशामद करते हैं और बडी-बडी शेखी मारते हैं। कोई कहता है, मुझे कपनी में नौकरी दे दो, तो मैं थोडे ही पैसो मे सब कुछ कर दूं।"

हरीश कहने लगा—"बेनू साहब उनकी एक-एक नस को पहचानते है। उन्हें टाल-टूल बताकर यहाँ से खिसक जाते है। जो ज्यादे उनके मुँह लगे हुए है, वही वहाँ अपना घर समझ कर टस-से-मस नही होते।"

कौशल बोला—"और मुश्किल आकर सारी फूट पडती है बिचारे हरीश के सिर पर। सारा कमरा साफ करना हुआ, बखत-बेबखत बाजार से उनका सौदा-सुलफा ढोना हुआ। कोई कहता है—पानी, कोई चाय की रट लगाता है। उनके जूठे बर्तन भी धोने पडते हैं। बडा सीधा है यह हरीश। मैंने दस मरतबे इससे कह दिया है, जब मालिक यहाँ से चले जाते हैं, तो फौरन ही ऑफिस मे ताला दे दे।"

प्रेम तमाम जूठे गिलास-प्याले और तश्तरियो को उठाकर ले गया। हरीश उसके हाथ से छीनने लगा, उसने नही दिए।

हरीश बोला—"क्या करूँ पडित जी, यह तो ठीक बात नही जान पडती कि ऑफिस से द्वार ढक दिए जाँय। पब्लिक पर इस बात का बुरा असर पडता है। कभी कोई काम का आदमी बेनू साहब को ढूंढता हुआ चला आता है, कभी कोई जरूरी टेलीफोन की कॉल ही आ जाती है।"

कौशल ने कहा—"ऑफिस खुला ही रहे, रिटाइरिंग रूम में ताला दे दिया करो।"

हरीश ने जवाब दिया—'तो वे फिर ऑफिस की दुर्गति कर डालें।"

"जो कुछ भी है भाई हरीश, तुम्हारी सज्जनता देखकर हमें तुम्हारे लिए बडी श्रद्धा हो गई है।"—भन्नन जी ने कहा।

"मैं भी चाहता हूँ इसकी तरक्की हो, ऐसे जूठे प्याले-तश्तरियाँ धो कर और भजिया कबाब ढोकर कुछ होनेवाला नही है। मैं इससे बराबर खाली बखत में पढ़-लिखकर अपनी लियाकत और इज्जत बढा लेने को कहता हूँ। देखिए, मैं यह अंग्रेजी की प्राइमर खरीद भी लाया हूँ।'

कौशल ने चट इलमारी मे से प्राइमर निकालकर दिखा दी ।

उस किताब को देखकर भन्नन जी के मानो ज्वर चढ गया । वे मन-ही-मन कल्पना करने लगे—"आखिर को यह बेगार टूटनेवाली है मेरे सिर पर ! मुझे बेगारी की इतनी परवा नही है, जितनी लियाकत की पोल के खुल जाने की ।"

कौशल ने किताब हरीश के सामने रखकर कहा—"आज ही से शुरू कर दे साथ-साथ । भगवान ने इतने बडे विद्वान् पडित जी को हमारे पास इसीलिए भेज दिया है ।"

पडित जी का दम घुटने लगा—किस तरह यह आपदा टाली जा सकेगी ! लेकिन तुरत ही हरीश ने उन्हे सहारा दिया—"देखो कौशल, पढाई-लिखाई मे क्या रखा है ? एक बढिया सूट पहनने की तरह कॉलेज की डिग्री भी एक सजावट है । मुल्क मे लाखो ग्रेजुएट घूम रहे है बेकार और बेजार ! दर दर मारे-मारे फिरते है । एक जगह खाली होती है तो वहाँ ढेर लग जाते है एक हजार अर्जियो के । हमारे ये बेन् साहब क्या पढे लिखे है । अरे मुझे अच्छी तरह मालूम है, पहले-पहल बडी मुश्किल से दस्तखत कर सकते थे ।"

कौशल ने कहा—"हाँ यह बात तो ठीक है ।" उसने और भी दस बीस सिनेमा की एक्टरो और एक्ट्रसो के नाम गिना दिए, जिन्होने कभी नगरपालिका की प्राइमरी स्कूलो की शक्ल भी नही देखी थी ।

भन्नन जी ने अपने सिर का सकट टालने के लिए पूरी ताकत से हरीश का समर्थन किया ।

हरीश बोला—"मैं बेनू साहब की बुराई नही कर रहा हूँ । मेरे मालिक हैं। उनका नमक खाता हूँ । वे अपनी कोई भी कमजोरी किसी से छिपाते नही है ।"

भन्नन जी के मुँह से बीच ही मे निकल पडा—"यही तो महान् व्यक्ति की पहचान है, दुर्बलता प्रकट कर ही शक्ति में बदल जाती है ।"

'दस मर्तबा उन्होने यह बात मुझ पर खोली है । पिताजी के मर

जाने और माता जी के असहाय होने के सबब उनके स्कूली पढाई-लिखाई की सारी उमर गाँव मे बीती । फिर माता जी के चल बसने पर क्या करते बिचारे ? बबई आकर अपने दिन काटने लगे । एक ही गुण था, दिल से बडे साफ सच्चे और दूसरे की मदद के लिए अपना नुकसान उठा कर भी तैयार । धीरे-धीरे सिनेमा मे घुस पडे पेटिग डिपार्टमेन्ट मे, रग घोलते, बुरुश धोते, टाट और कैनवस की चोखटो मे जिक ह्वाईट पोतते। कुछ दिन बाद एक्टरी में घुस पडे और पहले ही चास पर चढ गए पब्लिक की नजरो पर । फिर क्या झक मार कर डायरेक्टरो को उन्हें बडे-बडे पार्ट देने पडे । आज कॉमिडी-किग की पदवी पाई है उन्होने ।" हरीश एक साँस मे कह गया ।

कौशल ने किताब को फिर इल्मारी की और किताबो के साथ ही खोस दिया—"लेकिन अब तो क्या फर्राटे की अग्रेजी झाड़ते है बेनू साहब ।"

"यह सब साथ-सगत का असर है । लाखो रुपया उन्होने कमाया है । बडे-से-बडा विद्वान उनके पास आकर घटो बातचीत करता है, बस आदत हो गई । भाई अग्रेजी बोलने की भी तो एक आदत ही है, जैसे सिगरेट् पीने की ।"—हरीश ने कहा ।

कौशल ने जवाब दिया—"तुम ठीक कह रहे हो । तुम्हारे ऑफिस मे वह एक मुशी जी आते है, गानो की किताब लिए । वे कह रहे थे— जितनी बढिया अग्रेजी शराब पी जायगी, उननी बढिया अंग्रेजी आ जाय आनन-फानन मे ।"

हरीश ने उसका हाथ पकड लिया—' बडे बदतमीज़ हो तुम ।"

इसी समय खिडकी के डडो के पार हाइड्रोजन भरा बैलून उडाता हुआ एक बालक पुकारता हुआ आया—"कौसल ! कौसल !"

"यह हमारे छोटे मालिक का लडका है, कोई आफत लेकर आ गए ये ।"—कौशल ने खिडकी का डडा पकडकर पूछा—"क्या है बेबी ।"

बलाती है, बाजार से सौदा लाने को, मैं भी चलूंगा ।" बेबी

बोला—"जल्दी आओ।" वह भीतर को चला गया।

"मिनट-मिनट में इनकी पुकार सुनकर यही जी करता है, जाकर दूर कोई डेरा ढूंढ लूं। लेकिन हरीश भाई का प्रेम, इन सब कठिनाइयो पर फूल सा छा जाता है । अच्छा पडित जी अब रात को ही दर्शन होगे।"—कौशल चला गया।

"बडा बढिया आदमी है यह कौशल, होशियार भी ।" भन्नन जी बोले।

"घर छोड दूर परदेस मे आने पर सब की अकल खुल जाती है पडित जी। आप कही घूमने जायेगे ?"—हरीश ने पूछा।

"हाँ जाना तो चाहिए लेकिन कोई साथ हो तभी तो।" भन्नन जी ने कहा।

प्रेम बोला—"मैं चलता आपके साथ लेकिन मुझे हमारे इजीनियर साहब ने बुलाया है, खराद की एक नई मशीन आई है उसे खोलना है।"

हरीश ने कहा—"और पडित जी, मुझे ब्रेनू साहब के आने का अंदेशा है। एक तरह से मेरी पूरे चौबीसो घटो की नौकरी है। आप ऐसा करें प्रेम आपको हिद माता पर ट्राम मे बिठा देगा टिकट लेकर सीधा बोरी बदर तक वहाँ से आप फिर हिंद माता का टिकट लेकर यहाँ उतर जाइएगा और कही इधर-उधर न जाइएगा। आप पहले-ही-पहल तो बंबई आए हैं न ?"

कुछ सकुचाकर भन्नन जी बोले—"नही, कही नही जाऊँगा।"

आठ

रात को भन्नन जी सकुशल लौट आए, कुछ देर जरूर हो गई थी उन्हे। हरीश डेरे पर अकेला, बडी चिन्ता से उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। उनके आते ही बोला—"कही राह तो नही भूले ?"

"नही तो, कार्ड-लिफाफे खरीदने चला गया था। कुछ जरूरी पत्र लिखने है। और लोग नही आए अभी ?"

"आते ही होगे।"—हरीश ने एक चीनी की प्लेट मे कुछ भुने आलू उनके सामने मेज पर रखे।

भन्नन जी के भूख तो लग रही थी, बोले—"यह क्या कष्ट किया तुमने ?"

"पडित जी, यह तो हो नही सकता आप भूखे ही हमारे यहाँ सोएँ, मैं अभी चाय बनाता हूँ।"

"लेकिन हरीश भाई, यह चीनी की प्लेट ?"

"यह बिल्कुल अशुद्ध नही है पडित जी।"

'यह सब तुम्हारा कहना ठीक है, लेकिन कभी व्यवहार में नही लाया हूँ मै ।"

"तो अल्यूमीनियम की तश्तरी मे रख कर ला दूँ ?"

"हाँ भाई, बडी कृपा होगी ।"

हरीश ने उन आलुओ को अल्यूमीनियम की तश्तरी को उलट कर भन्नन जी के सामने रख दिया—"लीजिये पडित जी, अब तो ठीक हो गया ?"

भन्नन जी ने मुख पर बडा सन्तोष दिखाया और हाथ-पैर धोकर तश्तरी के आलूओ पर चम्मच गडाने लगे ।

हरीश बोला—"एक बात है, आप सिनेमा के भीतर काम करने आए है, लेकिन यह जो धर्म के नाम पर बहुत-सी बाते आपके साथ है, ये ज्यादे दिन चलेगी नही । अगर आप इन्हे जबर्दस्ती चलाना चाहेगे तो कोई तरक्की कर न सकेगे इस लाइन पर ।"

"हाँ हरीश, यह बात कुछ और लोगो ने भी मुझ से कही है, पर तुम जानते हो पुराने विचार धीरे-धीरे ही छूट पाते है ।"

"पडित जी, आप बहुत बडे आदमी है मेरा आप से कुछ कहना समुद्र मे एक ककर नमक डालने के बराबर है । धर्म मे हमें अक्ल से काम लेना चाहिए । देखिए यह चीनी का बर्त्तन कितना शुद्ध है । इसकी कोई गन्दी बनावट नही । देखने मे साफ-सुन्दर, थोडी ही मेहनत और पानी से उजला हो जाता है । खट्टी मीठी कोई चीज रखिए, न इसमें दाग पडते है और न चीज ही खराब होती है ।"

"हरीश, तुम्हारी यह सब बातें ठीक है, सिर्फ एक ही कमी है इसमे, हाथ से पत्थर पर गिरा नही कि चकनाचूर !"

"हमारी लापरवाही पर भी तो इसका जिम्मा है ।"

भन्नन जी हँसे—"तुम्हारी जय हो हरीश, मैं सिनेमा के भीतर अपने अधविश्वासो को तोडने के लिए आया हूँ । लेकिन मैंने सुना है, यहाँ भी अधविश्वासो की कमी नही है ।"

"पुराने अंधविश्वासो से नए अंधविश्वास कही अच्छी चीज हैं।"

भन्नन जी ने हरीश का हाथ पकड लिया—"पढे-लिखे न होने पर भी मुझे तुम्हारे भीतर एक सस्कारी मानव दिखाई पड़ता है । लाओ वह चीनी की तश्तरी मुझे दो।"

हरीश ने तश्तरी दे दी। भन्नन जी ने बाकी आलू उस तश्तरी मे उलट लिए और उसी में से खाने लगे । इतने ही में ऊपरी मंजिल की फर्श नियमित यति से बजने लगी।

हरीश इस बार एक चीनी के प्याले मे ही उनके लिए चाय ले आया । भन्नन जी ने बिना किसी आपत्ति के वह प्याला उसके हाथ से ले लिया और चाय पीते-पीते पूछा—"यह ऊपर क्या हो रहा है ?"

हरीश कुछ हँसा—"ऊपर एक एक्ट्रेस रहती है। उसका नाम सरिता है। वह अपने सोने के कमरे में जड़े हुए लम्बे-चौडे आयने के सामने नाच रही है। अपनी तन्दुरुस्ती और खूबसूरती कायम रखने के लिए।"

"नाच के साथ इनका क्या सम्बन्ध है ? सिनेमा मे बडे अंधविश्वास हैं, जो मैंने ऐसा सुना था। यही होगे वे अंधविश्वास !"

"यहाँ तो खैर एक कसरत है, तन्दुरुस्ती के साथ इसके जोड हो सकते है। और सैकडो अजीब चीजे हैं, जिन्हे आप धीरे-धीरे ही जान पावेंगे।"

"अर्थात् ?"

"क्या बताऊँ ? कोई अपनी कुंडली दिखाते फिरता है, तो कोई हाथ की सरवटें। कोई अपनी एक चली हुई पिक्चर के नाम के पहले हरूफ पर ही अपनी दूसरी फिल्म शुरू करता है । कोई अपने नाम के हरूफों की गिनती ठीक कराने के लिए उन्हें अदलता-बदलता या कम-ज्यादे कराता रहता है। सभी मुहूरत कर देवी-देवताओं को मनाते हैं । देवी-देवता तो फिर भी कोई बात हुई । ये कैमरे और माइक की भी पूजा करते हैं । उन पर फूल-माला चढाते हैं, धूप-बत्ती दिखाते हैं । इनसे

अच्छे तो वे बे-पढे लोग है जो मील के पत्थर, पानी के बम्बे और लेटर-बक्स पर फूल-पानी चढाते है।"

"मूर्त्तिपूजा को ये अग्रेजी पढे बदनाम करते हैं। देखता हूँ यह जड-पूजा तो बिल्कुल इनके दिमागी दिवाले की सूचना है।"

"एक बात कह रहा हूँ आपसे । आप इस लाइन के भीतर घुसने आ रहे हैं । इन्हें बदनाम कर इन से दुश्मनी लेकर कोई फायदा न होगा।"

"हाँ भाई, मनुष्य में सर्वत्र ही ज्ञान के साथ-साथ अज्ञान भी है। कौन जानता है ये सब बातें स्थिति के अनुसार जरूरी ही हो । सिनेमा के भीतर जगह मिल जाने पर हम ही ये सब बाते करने लगे।" भन्नन जी के कान फिर ऊपर की ठीक-ठीक ताल पर चलनेवाली ध्वनि पर खिंच गये—"अभी और कितनी देर तक नाचती रहेगी ये ?"

"मन की तरग के हिसाब से। पडित जी थोडे आलू और लाऊँ ?"

भन्नन जी ने हाथ से मनाकर पूछा—"ये तुम्हारे फिल्म की हिरो-इन हैं ?"

"हीरोइन तो इन्हें बना दिया जाता, बेनू साहब को इनके आर्ट का विश्वास तो है लेकिन एक अडचन है । ये सुधीर के सिवा और किसी दूसरे एक्टर को हीरो बनाना ही नही चाहती। और सुधीर चला गया है पाकिस्तान।"

"सुधीर पाकिस्तान चला गया है । क्यो उसे ऐसी क्या जरूरत थी ?"—भन्नन जी के मुख पर एक पहेली अकित हुई।

"हाँ एक अंधविश्वास यह भी फैला है इस जगत में, नामो में हेर-फेर कर देना। एक बड़े भारी धुरधर डायरेक्टर ने ही सब से पहले यह पत्ता चलाया था।"

"अंधविश्वास तो नही कह सकते इसे।"

"तो फिर इश्तहारबाजी का स्टंट कहिए।"

भन्नन जी अपने जूठे बर्तन उठाकर गुसलखाने में रखने को चले—

"हरीश, देखता हूँ तुम्हारी समझ बडी पक्की है।"

हरीश ने उनके हाथ से बर्त्तन छीन लिए—"पडित जी, आप जैसे विद्वानो का जूठा साफ कर ही कुछ सीखा है। बिल्कुल उजड्ड एक्टरो के प्याले साफ करने पडते हैं आप तो अपने ही मुल्क के हैं।"

"मैं हाथ धोने तो जाऊँगा ही।"

"हाथ किस बात के धोएँगे आप ? चम्मच से उठाकर मुँह में रखा है। यहाँ बखत की बचत करना सीखिए, पानी की भी तो। जिस दिन रात को हम तमाम बर्त्तन, नल के चलने पर भर नही लेते तो दूसरे दिन खुश्की मे ही हमें नाव चलानी पड जाती है।"

भन्नन जी ने ताली पीटी—"यह खूब ! तुम तो मुझे एक साहित्य-कार भी जान पडते हो। क्यो नही, रात-दिन सिनेमा के एक्टर और एक्ट्रेसो के बीच मे रहते हो। सुधीर पाकिस्तान क्यो चला गया ?"

"कोई-कोई कहते हैं सरिता से किसी बात पर बिगडकर चल दिया।"

"सरिता क्यो नही किसी दूसरे एक्टर के साथ पार्ट करने को तैयार हो जाती ?"

"यही तो अधविश्वास है उसका। कहते हैं, वह उसपर दिल-जान से प्रेम करती है।"

"प्रेम ! हरीश, मैं समझता हूँ, सब से बड़े अंधविश्वास का नाम ही प्रेम है।"

"सरिता दिन-रात उसके लिए बेचैन रहती है। यह सुधीर से केवल उसका प्रेम चाहती है। धन-दौलत की इसे कोई परवा नही, लाखो रुपए अपने आर्ट से कमाकर यह उस पर निछावर करने को तैयार रहती है।"

"ऐसी प्रेमिका का तिरस्कार कर भला कहाँ ससार में उसे सुख मिलेगा ? यह चिट्ठी क्यो नही लिखती उसे ? स्वयम् ही क्यो नही जाकर बुला लाती ? सच्चे प्रेम में तो बड़ी शक्ति होती है।"

"ऐसा ही है सरिता का विश्वास। वह कहती है, सुधीर जरूर एक

दिन लौट आएगा, क्योकि उसने कभी उससे कोई झूठा वर्त्ताव नही किया है। चिट्ठी कहाँ लिखे ? जावे कहाँ ? उसका कोई पता ही नही है। कोई-कोई ऐसी भी उडा देते है कि उसे मार दिया गया और कोई कहते है वह वही किसी फिल्म को डायरेक्ट कर रहा है।"

"कब तक ऐसे चलेगा ?"

"बेनू साहब खुद वहाँ जाने की सोच रहे हैं। हमारे आफिस में सामने की दीवार पर सुधीर का एक बहुत बडा ऑइल पेंट टँगा है। कभी-कभी सरिता रात को उस चित्र के पास जाकर उसकी आरती करती है, उस पर फूल चढाती है और उसके पैरो पर सिर रखकर रोती और गाती है।"

"बडे पत्थर का बना हुआ यह उसका प्रेमी है, पत्थर भी तो एक दिन कुम्हला जाता ऐसी भक्ति पाकर। हरीश तुमने, मेरे भीतर एक कौतूहल पैंदा कर दिया। मैं ऐसे व्यक्ति को देखना चाहता हूँ। तुम्हारे पास चाबी है ऑफिस की ?"

"चलिए न अभी।"

दोनो ऑफ़िस की तरफ गए। हरीश ने ऑफिस खोला रिटाइरिंग रूम की तरफ से बिजली जलाई। सुन्दर सजा हुआ कमरा था। बीच मे बेनू साहब के बैठने की एक बढिया मेहगनी की पॉलिश की हुई मेज थी। उसके ऊपर एक उतना ही चौडा आधा इच मोटा काँच था। उसके ऊपर दवात-कलम, फाइलो की ट्रे, टेलीफोन, कुछ किताबे, सिगरेट का डिब्बा, दियासलाई और एश-ट्रे थे। चारो ओर भेट करनेवालो के लिए सोफा सेट, दो-तीन छोटी-छोटी मेजें। नीचे बढ़िया दरी-कालीन, डोर-मैट, द्वारों पर परदे।

चारो दीवालो पर एक्टर-एक्ट्रेसो के ऑइल पेंट और फोटो थे। भन्नन जी को सबसे पहले सुधीर का ही चित्र देखने की लालसा थी। सबसे पहले वे उसी के सामने खडे हुए।

देखा उन्होने उस चित्र को, देखते ही रह गए वे उसे, बोले—"हरीश,

ठीक ऐसा ही है वह एक्टर। चित्रकार ने अपनी ओर से तो कोई रंग ज्यादे या कम नही कर दिए है ?"

"बिल्कुल ऐसा ही है पडित जी। खूबसूरत है न ?"

"इसमें कोई सन्देह नही, अनुपम है। पर मैं इसके मुख पर की भावना मे इसकी आत्मा के रूप को देख रहा हूँ। इसके मुख पर इसके शील की छाप है। किसी से भी इसकी शत्रुता और द्वेष साधना सभव नहीं जान पडती, फिर उससे जो इसे प्यार करती हो—यह बात समझ मे नही आती। और इनमें सरिता कौन-सी है ?"

हरीश ने एक दूसरे चित्र पर सकेत किया—"इसको तो आप यहाँ जीता-जागता भी देख लेगे।"

"सुधीर पढा-लिखा भी है ?"

"खूब अच्छी तरह। अग्रेजी-हिंदुस्तानी की तो बात ही नही। वह अपने बगाली दोस्तो से बगला में, गुजराती और मराठियो से उनकी भाषा मे बडी आसानी से बातचीत करता है। दूर दक्खिन की भाषाएँ नही जानता बाकी किसी भी प्रान्त के लोगो के बीच में घुसकर उनकी जबान बोलकर उनका अपना हो जाता है।"

"इसके घर पर कौन-कौन है ?"

"यह नही जानता। कोई कहते है यह अच्छे घर का है, सिनेमा के शौक के लिए यह सब-कुछ छोडकर यहाँ आ गया। माता पिता चाहते थे यह कोई उच्च सरकारी नौकरी करे। इसे वह बात पसद न थी। कोई ऐसा भी कहते है, यह एक अनाथ है, इसके माता-पिता, घर-दर का कोई पता नही है। कोई इसे बगाली कहता है, कोई हिंदुस्तानी। बहुत से इसके मराठी या गुजराती होने का भी शक करते हैं।"

भन्नन जी ने उस कमरे मे से ऊपर को जाती हुई सीढियो को दिखाकर कहा—"ये कहाँ को गई है ?" बाहर उस मार्ग पर परदा पडा था।

"ऊपर सरिता के कमरे मे, इसी रास्ते वह इस चित्र की पूजा करने

आती है। एक अचरज की बात और है कुछ लोग समझते है सरिता यह सब कुछ सोती हुई हालत मे करती है।"

"बेनू साहब को भी मालूम है यह ?"

"सबसे पहले उन्हे ही तो इस बात का पता चला। एक दिन वे रात को किसी कागज की तलाश मे यहाँ आए थे, तभी सारा भेद खुल गया था।"

"चलो चले।"

दोनो ऑफिस का बल्ब बुझाकर रिटाइरिंग रूम में आए। वह भी अच्छा सजा हुआ था। उसकी दीवारो पर सिनेमा की विविध भूमिकाएँ लिए हुए अभिनेताओ और अभिनेत्रियो के फोटो थे।

भन्नन जी ने पूछा —"ये कौन-कौन है ?"

हरीश बोला—"जान पडता है आप सिनेमा कम देखते है।"

"हाँ कुछ हद तक तुम्हारा कहना ठीक है।"

"जब आप इस लाइन में घुसना चाहते है तो सिनेमा देखना ही पडेगा। ये चित्र सब बेनू साहब के तरह-तरह के पार्टों के है।"

भन्नन जी ने ध्यानपूर्वक एक-एक चित्र देखा। फिर दोनो बिजली बुझा बाहर से ताला दे अपने कमरे में लौट आए।

हरीश बोला—"पडित जी आप हारे-थके है सो आइए आपके लिए इस लोहे की खाट पर बिस्तर लगा देता हूँ।"

"नही, नही," बडे सकोच से भन्नन जी बोले—"मै किसी को कष्ट देने नही आया हूँ यहाँ। इस पर रोज कौन सोता है ?"

"बम्बई में पलँगो पर सोना कहाँ नसीब है ? सब जमीन पर सोते है।"

"तो मैं भी जमीन पर ही सो जाऊँगा।"

"आपके पास एक ऊनी चादर को छोडकर और कुछ बिस्तर है भी तो नही।"

भन्नन जी ने अपनी प्रतिष्ठा बनाने को झूठ बोला—'ट्रेन में दूब

के साथ बिस्तर भी तो चला गया। अब यहाँ बनवा लूँगा शीघ्र ही।"

"ऐसी कोई आवश्यकता नही। एक दरी चाहे तो खरीद लीजिए।"—हरीश लोहे की पलँग पर एक दरी बिछाता हुआ बोला।

"तुम कहाँ सोते हो ? कौशल और प्रेम कहाँ ?"

"रिटाइरिंग रूम में, कौशल इस मेज पर। प्रेम के पास काफी बिस्तर है, उसे जमीन ही अच्छी लगती है।"—हरीश दरी के ऊपर एक कबल बिछाने लगा।

"नही बस, यहाँ जाडा तो है नही।"—भन्नन जी ने उस कबल को बिस्तर पर से अलग कर लिया और अपनी ऊनी चादर लेकर उस लोहे की पलँग पर जा डटे।

हरीश ने उस पर जो तह किया हुआ बाकी बिस्तर था, वह सब उठा कर मेज पर रख दिया और बोला—"अच्छा पंडित जी, अब आप आराम करे। सिगडी सुलग रही है, मै दो-चार रोटियाँ पटका लेता हूँ, आलू बने रखे ही है आपने तो बहुत थोडे ही मे खाए।"

हरीश रोटी बनाने चला गया। भन्नन जी बिस्तर पर लम्बे हो गए। ऊपर सरिता की फर्श पर अब वे नृत्य के ठुमके विराम पा गए थे। उनकी पलको पर नीद बहुत भारी हो रही थी। उन्हे किरसन जी याद आए वे सोचने लगे—"मै इसे कहूँगा आदमी, इसने मेरे भीतर के कहानी लेखक को कैसा पहचान लिया ? सचमुच सच्ची कला को वेश बनाने की आवश्यकता ही क्या है ? छपी हुई किताबो के लिए सुबह उठते ही प्रकाशको को पत्र भेज दूँगा। कल सुबह पाँच-सात पेज की एक कहानी भी क्यो न गढ ली जाय, उन्हे सुनाने के लिए।"

इतने ही मे बडी जोर से जूते बजाता हुआ कौशल आ पहुँचा और पडित जी के सिरहाने फर्श पर लोहे की कुर्सी खीच उसमें बैठ जूता खोलते हुए बोला—"क्यो पडित जी, क्या सो गए ?"

"नही तो।"—नीद के नशे मे वे बोले।

"देखो पडित जी, अब आया हूँ मैं। ऐसी नौकरी है। कभी-कभी तो

सो जाने पर भी उठा दिया जाता हूँ।" कौशल ने अलमारी में से अंग्रेजी प्राइमर निकालकर पडित जी के हाथ में दी—"यह किताब ठीक है पडित जी ?"

उस किताब को देखते ही पडित जी की नींद ऐसी उड गई जैसे एक कंकर फेंक देने पर गौरैया उड जाती है। वे बोले—"हाँ ठीक है।"

हरीश ने डाँट बताकर कहा—"कौशल, दो-तीन दिन के जागे है पडित जी, कल सुबह न होगी क्या ? आओ रोटी खा लो।'

कौशल हरीश के पास चला गया। अब भन्नन जी को फिकर हो गई उस अंग्रेजी की किताब की—"बम्बई-प्रदेश पर क्या यह अंग्रेजी ही मेरी शत्रु होकर रहेगी ? मेरे भीतर के इतने बडे कहानीकार को कोई नही पूजेगा क्या ? अभी तो यह छोटी-सी प्राइमर है—इतना तो मुझे आता ही है। एक-दो महीने तक टाल दूँगा इसी में। फिर कह दूँगा मुझे नही आती।" फिर नीद के झोके मे आधे स्वप्न और आधी जागृति मे सोचने लगे—'यह कौशल तो वरदान होकर आया है, इसे पढाने की चिंता से मुझे जल्दी-जल्दी यह भाषा आती जायगी।"

फिर भन्नन जी स्वप्न मे देखने लगे—पहला गुरु वह बडे साहब का बैरा उनके सामने आकर बोला—"क्यो पडत, तुमने अभी तक धोती फेंक पैंट नही पहनी ?"

"कल को पहन लूँगा जरूर।"—स्वप्न मे भन्नन जी ने जवाब दिया।

फिर भन्नन जी कहानी की पाडुलिपि बगल में दबाए स्वप्न-राज्य मे किरसन जी के पीछे दौडने लगे। चिल्लाने लगे—"अजी किरसन जी, आपने कहानी माँगी थी मैं लिख लाया हूँ।"

"क्या अपना सिर लिख लाए हो ? मनुष्य की छुआछूत माननेवाले तुम कभी अपने विचारों की सकीर्णता का कारागार तोड नही सकते।"

"मैं तोड़ दूँगा।"

"क्या तोड दोगे तुम घास खानेवाले ?"

"मैं अडे खा लूंगा।"

"क्या अडे खा लोगे तुम, हरे शर्बत के साथ थोडे खाए जाते है वह।"

भन्नन जी ने फिर स्वप्न की भूमि मे प्रतिज्ञा की—"लाल शर्बत के साथ ही सही। लेकिन जब उतने पैसे हो जायेगे।" वह किरसन जी को कहानी देने लगा।

"ऊँ हूँ, तुम्हारी कहानी में कोई जान नही हो सकती। हमें तो नौजवान का दिल खीचनेवाली कहानी चाहिए।"

हाथ जोड भूमि पर घुटने टेक गिडगिडाकर भन्नन जी ने पूछा—"फिर आप जैसा कहे, वैसा करूँ।"

"देखो, नौजवान प्रेम के लिए पैदा हुआ है। जब तक किसी कहानी में प्रेम नही होगा, वह उधर खिच नही सकता। और कहानी में प्रेम कैसे होगा जानते हो?"

"नही, किरसन जी, बताइए मैं आपकी शरण हूँ ऐसे ही जैसे महाभारत की लडाई के मैदान मे अर्जुन आपकी शरण हुआ था।"

"देखो, जब तक लेखक प्रेम में डूबा न होगा, उसकी कहानी मे भी जान न पडेगी। इसलिए जाओ सबसे पहले किसी से प्रेम करो।"

"प्रेम? किससे करूँ? इस प्रदेश में?"

"बडे डरपोक हो, बस इसी बूते पर चले आए बबई, कलम हाथ मे लें कहानी लिखने को? अरे, किसी एक्ट्रेस से करो प्रेम।"

"एक्ट्रेस से?" —डरते हुए भन्नन जी बोले।

"क्यो, डरते क्यो हो? शुद्ध प्रेम करो, शुद्ध प्रेम मे किसका डर? अगर एक्ट्रेस से प्रेम नही करते तो किसी एक्स्ट्रा के यहाँ अर्जी भेजो।"

भन्नन जी को कला-बाला याद आई, वे बोले—"अच्छी बात है आप कला-बाला से मेरा परिचय करा देंगे?"

"क्यो नही, जब कहोगे।"

फिर न जाने क्या हुआ। भन्नन जी की चेतना नीद के अधिक

गहरे और विस्मृति-भरे मडलो मे डूब गई ।

सुबह सबसे पहले उन्ही की नीद टूटी । उन्होंने सुनी, लोकल ट्रेनो की गडगडाहट रात का अधकार रहते ही शुरू हो गई थी, खिडकी पर बाहर मे किसी ने पुकारा—“बाबू लोगे ?”

भन्नन जी भीतर से बोले—“क्या है ?”

“पाव रोटी, अडे, मक्खन !”—फेरीवाला बोला ।

“नही, कुछ नही चाहिए ।”

फेरीवाला चला गया। भन्नन जी को अचानक रात का सपना याद आया और उन्होने मन में सोचा—“पाव रोटी मे क्या हानि है ?” चाय के साथ खा लेने में क्या हर्ज है ?”

वे बिस्तर पर उठकर बैठ गए। सारा मुहल्ला मुखिरत होने लगा था, अनेक कमरो में बिजला की बत्तियाँ जल उठी थी । उन्होने देखा, कौशल मेज पर सो रहा था और प्रेम फर्श पर ।

भन्नन जी को प्रेम की विनम्र स्थिति खटकने लगी । वे सोचने लगे—“क्या बात है, यह बिचारा इतना छोटा बनकर क्यो रहता है ? इन दोनो के ही समान पढा-लिखा है यह । वेतन इन दोनो से अधिक पाता होगा, क्योकि इसके कपडे और बिस्तर आदि इनसे कही अच्छे हैं ।”

भन्नन जी उठ गए । बिजली की बत्ती जलाई । कुछ भांग का चूरन फाँक पानी पिया । खैनी खाई फिर शौच स्नान आदि से निवृत्त होकर सध्या पूजा का नियम पूरा करने की सोचने लगे । लेकिन स्थान कहाँ ? रसोई और गुसलखाने की तरफ कही जगह नही । उस कमरे मे एक तरफ मेज पर कौशल सो रहा था और दूसरी ओर फर्श पर प्रेम । उधर रास्ता ही था ।

अपने छोटे से पचपात्र मे नल पर से पानी लाकर उसने खिडकी पर रख दिया और लोहे की पलग पर बैठकर ही पूजा-पाठ शुरू कर दिया । पूजा-पाठ का मौन उच्चारण था होठो पर और मानस में दूसरे ही चित्र नाच रह थे । भाँति-भाँति नए आदर्श उनके सामने आ रहे थे, नए क्षेत्र,

नए चरित्र-सब कुछ नया-ही-नया ।

घर पर पिछले कई वर्षों जिस पूजा-पाठ को वे नियमपूर्वक करते चले आ रहे थे, बम्बई की आबहवा मे आते ही उसके प्रति उनके मन में विद्रोह जाग उठा । वे सोचने लगे—"यह सध्या-पूजा एक कोरी बिना मतलब की कसरत है । साहित्य और कला की साधना भी तो उपासना है ।"

उनके मन मे रात किरसन जी का सपना ताजा ही गडा था । वे सोचने लगे—"जल्दी-जल्दी पूजा समाप्त कर पाँच-सात पेज में किसी कहानी का कथानक लिखकर किरसन जी को भेट कर देखूँ तो सही किस रास्ते का फाटक खुलता है ?"

फिर उनके मन मे एक्ट्रेस के प्रेम का स्वप्न याद कर एक मीठी गुदगुदी उठी । उसके साथ ही उन्हे भग्गो जी दिखाई दी कल्पना मे और वे उन को चिट्ठी लिखने की जल्दी में मत्र-पाठ को वेग से दौडाने लगे ।

कुछ देर और लगी । मन मे अब तो भग की पत्ती चित्र-विचित्र रग-रेखाएँ उपजाने लगी थी । पूजा के पोथी-पत्रे लपेट उन्होने थैले मे भर दिए और दो पोस्टकार्ड लिए । पहला पत्नी को कुशलपूर्वक बम्बई पहुँच जाने का समाचार और दूसरा प्रकाशक, पुस्तक-विक्रेता को उनकी लिखी तमाम किताबो की एक-एक प्रति शीघ्र भेज देने के लिए ।

इसी समय कौशल जी उठ बैठे । उठते ही बीडी जलाकर बोले—"स्नान हो गए पडित जी ?"

"हाँ पूजा-पाठ भी हो गया और दो चिट्ठियाँ भी लिख डाली ।"

"बडी जल्दी उठ जाते हैं आप । सिनेमा की दुनिया मे तो सवेरा बहुत देर में होता है । हरीश आठ बजे से पहले कभी नही उठता और उसके मालिक साहब दस बजे से पहले नही। मुझे तो आठ बजे सेठजी की मोटर का मुँह धुलाने जाना पडता है, इसलिए उठना ही पडता है ।"—कौशल ने उठकर अपना बिस्तर लपेटा और लोहे की पलग पर एक तरफ रख दिया ।

मुँह-हाथ धोकर उसने गैस का चूल्हा जलाया, उसपर चाय की केतली रख दी और गिलास लेकर दूध लेने चला गया। चूल्हे की आवाज से प्रेम भी जाग पडा और बिस्तर लपेटकर इस दुविधा मे पड गया कि वह उसे रखे कहाँ ?

भन्नन जी बोले—"अपना बिस्तर रख दो न इसी पलग पर।"

बडी अनिच्छा मे उसने उसे पलग पर रख दिया।

भन्नन जी उसकी, सरलता और संकोच से उस पर बडा अनुग्रह करने लगे थे। उन्होने कहा—"प्रेम ! तुम्हे कितने बजे काम पर जाना होता है ?"

"नौ बजे।"

"कारखाना कितनी दूर है ? बस या ट्राम में जाना पडता है ?"

"नही पैदल ही पाँच मिनट का रास्ता है, परेल के पास ही।"

"बीडी नही पीते तुम ?"

प्रेम बगले झाकने लगा। 'जब पीते हो तो पियो। मेरे सामने न पीने की क्या बात है ? मैं यहाँ तुम्हारी किसी तरह की स्वतत्रता का हरण करने नही आया हूँ। बीडी पीने की अगर आदत है तो उसे निकालो और पियो जैस अभी कौशल ने पी। बीडी मे क्या किसी का मान अपमान टगा है ?"

प्रेम ने बीड़ी निकाली जेब से, पडित जी का प्रोत्साहन पाकर। वह उठा और बीडी सुलगाकर शौच के लिए चला गया। कौशल दूध लेकर आ पहुँचा साथ ही हरीश को उठा लाया उसके समय से पहले।

"क्यो पंडित जी अच्छी नीद आई ?"—हरीश ने पूछा।

"हाँ भाई।"

"खटमल तो नही लगे ?"

भन्नन जी ने कुंछ याद कर कहा—"नही तो।"

"भोजन क्या करेंगे आप इस समय ?" —हरीश ने पूछा।

आप लोगो ने मुझे यहाँ रहने को जगह दे दी है। भोजन का भा

भार आप लोगो पर डाल देना मै उचित नही समझता । अभी सारा दिन पडा है, कर लूँगा कुछ ।"

"जब तक आपका यहाँ कही कुछ ठौर-ठिकाना नही लग जाता आप हमारे मेहमान हैं । हमे आपको हमारा फर्ज़ अदा करने देना चाहिए । एक बात कहूँगा पडित जी, अपने देश का-सा भोजन का बधन आपको यहाँ रखना तो नही चाहिए । इससे यहाँ तरक्की में रुकावट पड जायगी।

कुछ ढीले पडे भन्नन जी—"आप लोग क्या खावेंगे ?"

"हम कभी दो-दो रोटी सेक लेते है । चाय या सब्जी के साथ खा लेते हैं । कभी खिचडी और चावल भी बना लेते है और कभी जल्दी होने पर बाजार से पाव लाकर वही खा लेते हैं । दिन में भूख लगी तो कभी केले, मूँगफली, छोले, मटर—भजिया, बीच-बीच में चाय । बस ऐसा ही है हमारा खाना ।" —हरीश ने कहा ।

भन्नन जी ने मन में जो उसकी बात विचारी तो सोचने लगे—"देसी रोटी से वह विलायती पाव रोटी अधिक पवित्रता से बनी है । उन्होने वहाँ पर रखे हुए तवे को देखा । शायद ही कभी महीने मे वह मला जाता होगा । पाव हजम होने में भी सुपच होगी और देखनें में भी सुंदर !" वे फिर मन-ही-मन पाव रोटी और देसी रोटी की तुलना करने लगे ।

फिर वह बम्बई के पहले प्रभात की पहली आवाज उनके कानो में प्रतिध्वनित हो उठी—"पाव रोटी ! अडे ! मक्खन !"

कौशल एक चीनी के प्याले में भन्नन जी के लिए चाय ले आया । वे बोले—"भाई, सबके लिए लाओ ऐसा नही हो सकता ।"

"लाता हूँ । लेकिन प्रेम तो अभी मुंह-हाथ धोने गया है । आप पीजिए चाय ठंडी हो जायगी ।"—कौशल ने कहा ।

हरीश बोला—"पडित जी, पाव रोटी मे क्या नुकसान है ? मेरी समझ में जैसे आपने कल चीनी के बर्त्तन चला लिए आज पाव रोटी चला लीजिए । धीरे-धीरे एक-एक दिन में एक एक चीज ।"

"मेरे मन में भी यही बात आ रही है हरीश । लो ये पैसे हैं पाव रोटी

मंगा लो सब के लिए ।"—भन्नन जी उसे एक रुपए का नोट देने लगे।

"पैसे रहने दीजिए पडित जी । पाव रोटी यहाँ है। कौशल, एक तश्तरी में पाव रोटी लाओ पडित जी के लिए ।"—बडे उत्साह के स्वर में हरीश बोल उठा।

कौशल तीन तश्तरियो में पाव रोटी काटकर ले आया अपने और हरीश के हिस्से की चाय भी। तीनो चाय पीने लगे।

"प्रेम ने बडी देर लगा दी ।" भन्नन जी ने कहा—"उसके लिए जरा देर ठहर जाये ।"

'कोई जरूरत नही, वह तो नौ बजे जाता है। मुझे आठ ही मे जाना है ।"—कौशल ने कहा।

"और आज मुझे भी सेठ जी के यहाँ घर पर हाजिरी देनी है आठ ही बजे।"—हरीश ने कहा।

"सेठ जी कहाँ रहते है ?"

"यही माटुँगा के नजदीक ।" हरीश ने कहा—"पडित जी आपका क्या प्रोग्राम रहेगा ?"

"दो चिट्ठियाँ छोडनी हैं। आप लोग कहे तो मैं भी जाकर कही घूम आऊँ।"—भन्नन जी ने कहा।

"चिट्ठियाँ तो मैं छोड दूँगा। मेरे रास्ते में ही पोस्ट ऑफिस है। आप बिना साथ के अभी घूमने कैसे जावेगे ?"—हरीश ने पूछा।

"तो मैं यही बैठकर कुछ लेख-पढ कर लूँगा ।"—भन्नन जी उसे दोनो कार्ड देकर बोले।

लगा देता, चाय बना देता या बाजार का सौदा ला देता।

कुछ देर बाद हरीश माटुँगा चला गया बेनू साहब के पास और उसके कुछ देर बाद प्रेम ने भी अपने कारखाने की राह ली।

भन्नन जी उस कमरे में अकेले ही रह गए। सामने खुली हुई खिडकी के इधर-उधर दो विशाल अट्टालिकाएँ थी। उनमें धनी व्यापारी शरणार्थियो के कुटुब रहते थे। आँगन मे उनके बच्चे खेल रहे थे। एक ओर से उगते हुए सूर्य की तिरछी किरणो ने आँगन में कर्णाकार घनी छाया उत्पन्न कर रखी थी। दूर पर बिजली की रेलगाडियो के आने-जाने की घडघडाहट थोडी-थोडी देर पर जारी थी।

यद्यपि दादर मेन रोड पर ट्रामें नही चलती थी फिर भी उसके समानातर चलनेवाली परेल की सडक पर तो उनकी काफी दौड थी। ट्राम, बस, रेल, मोटरकार, ठेले, गाडी आदि की तुमुल ध्वनि—सबका सम्मिश्रण होकर जो एक आवाज पैदा हो रही थी, वह भन्नन जी को बडी प्रीतिकर जान पडी।

उस नई परिस्थिति मे बैठकर कुछ लिखना शुरू किया उन्होने। जो कुछ लिखा उसे काट दिया। फिर यह निश्चय किया—"चचलमति होना ठीक नही। एक विचार पर जमने से ही उसमें आगे की शाखाएँ फूट निकलती हैं।"

इस बार वे स्थिर होकर लिखने लगे। आधा पेज लिख चुके होंगे कि दरवाजा खुला। एक सज्जन हाथ मे भरा हुआ झोला और दूसरे मे एक टिफन कैरियर लेकर बेधडक उस कमरे मे आ पहुँचे। हाथ की दोनों चीजें ले जाकर उन्होने खाना पकाने की मेज पर रख दी।

भन्नन जी ने अधिक ध्यान नही दिया उन पर। ढीली बाँह का कुरता, सफेद पाजामा और एक पुल ओवर पहने थे। बाल आधे से ज्यादा सफेद हो चुके थे। दाढी का भी यही हाल था। भन्नन जी के साथ कोई बातचीत न कर वे दरवाजा खोलकर बाहर चले गए। भन्नन जी ने भी अपने मन में सोचा—"कोई फिल्म कम्पनी का ही चाकर होगा।" उन्होंने भी उसके साथ कोई बातचीत नही की।

नौ

कुछ और लिखा, फिर भन्नन जी ने उसे भी काट दिया। किसी प्रकार मन किसी बिंदु पर ठहरता ही न था। कल्पना के भवन में कोई द्वार खुला नही। भंग का नशा पूरी गोलाई से मन मे उठा नही था। फिर थोडा-सा चूरन फाँक कर पानी पी लेने की ठानी। कुछ याद आते ही फिर रुक गए। एक पुडिया मे कुछ बनी हुई तमाखू रखी थी, उसी की एक चुटकी होठ के नीचे दबाकर सतुष्ट रह गए।

इतने मे फिर दरवाजा खुला। वही दाढीवाले सज्जन आ पहुँचे और खाना पकाने की मेज पर खटर-पटर करने लगे। थैले में लाया हुआ सामान कबाट के डिब्बो में रखा फिर बीड़ी जलाई और उसी दियासलाई से स्टोव पर रखी बत्ती जला दी।

स्टोव के गरम होने तक उन्होने जेब से एक पुडिया खोलकर पान मुँह मे रखा। खाली कागज मोडकर गुसलखाने की खिड़की की राह बाहर फेंक दिया। कुछ देर बीडी चूसते हुए मानसिक गहराई में गोते

लगाते रहे। जब चूल्हा गरम हो गया तो उसमें पप कर चाय की केतली रख दी।

उधर भन्नन जी सोचने लगे—"क्या लिखूं ? कोई लिखने का मतलब होना चाहिए। क्यों न रूढि के ध्वस पर लिखा जाय ? लिखने का विषय भी अवश्य होना चाहिए। केवल जनता के भीतर पशु-वृत्तियो का जागरण या उनकी तुच्छ पिपासा की तृप्ति कदापि ऊँचे साहित्य और कला का लक्ष्य नहीं है। ससार आगे बढ रहा है और हमारा राष्ट्र अधी रूढियो का ही गुलाम रह जाय, यह बड़ी लज्जा की बात है।"

उधर चाय का स्टोव भबक उठा था। उसकी आवाज मे भन्नन जी का मन एकाग्र होने लगा। फिर लेखनी हाथ में लेकर सोचने लगे—"वे कौन सी अधी रूढियाँ हैं जो हमारी राष्ट्रीयता की नबर एक की शत्रु हैं ?—जाति-भेद ही हमारा सबसे भयानक रिपु है। इसी ने हमे खड-खड कर विभाजित कर रखा है।"

फिर वे विचारने लगे—"यह प्रचारात्मक तो न हो जायगा ? अगर पब्लिक ने यह समझ लिया तो कौन उपदेश सुनने के लिए उस फिल्म को देखने आयेगा ? कोई लोकोपकारिणी सस्था फिल्म नही बना रही है कि घाटा सहन करे। बिना पब्लिक के दिमाग मे कोई बोझ रखे केवल मनोरजन ही क्या फिल्म का उद्देश्य नही हो सकता ? दिन-भर काम से थके लोग वहाँ अपनी श्रान्ति भुलाने जाते हैं न कि घर के लिए कोई बोझा ढोकर माथा भारी करने ?"

"मनोरजन के साथ-साथ अगर हम जनता की कोई भलाई कर सकें तो क्या हानि है ? कोरी कुनाइन की गोली निगलने में उसे आपत्ति है, तो चीनी लपेट कर हम उसका और अपना दोनो का मतलब साध सकते हैं।···लेकिन अगर कही निगलने से पहले उसने गोली दो दाँतो के बीच में रखकर चबा ली तो फिर सारी पोल खुल जायगी। वह हमारे ऊपर थूक, मुँह बिगाड उठकर चल देगा।"

उस बात को वही छोडकर भन्नन जी ने कागज का एक साफ पृष्ठ

सामने रखा—"सबसे पहले मुझे फिल्म का नाम सोचना चाहिए। क्योकि जनता का अधिकाश नाम पर आकृष्ट होता है। फिल्म के निर्माता और निर्देशक भी बढिया नाम पर रीझकर ही कहानी के भीतर घुसते है। छोटा-सा नाम हो। एकदम छोटे-बडे सबके मुँह लग जाय। सुनाई देने में सुमधुर और लेख मे आने पर सुदर्शनीय हो? एकाएक थोडी देर में सोचा जा सकेगा क्या वह? भग के नशे की किसी ऊँची उडान मे जरूर टपक पडेगा आकाश-मार्ग से कल्पवृक्ष के पके फल की तरह! नही जी, कला को इस तरह नशे की वशवर्त्तिनी समझना भारी मूर्खता है।"

भन्नन जी ने कहानी का टायटिल लिखा—'छुआछूत।" लिखते ही वे उसे मिटाने लगे—"लोग कहेगे यह प्रोपगैडा पिक्चर है!" लेकिन हाथ रोक लिया उन्होने—"अभी यह कच्चा टायटिल ही चलने दूँ। कहानी तो लिख लूँ पहले। जब कहानी लिख ली जायगी तो ठीक-ठीक नाम अपने-आप ही खुल पडेगा दिमाग मे। कहानी लिखने से पहले कैरेक्टर सोच लेने चाहिएँ। जब छुआछूत' सबजेक्ट है तो हीरो या हीरोइन दोनो में से एक का अछूत होना जरूरी है।"

उन्होने हीरोइन का नाम रखा—'दमती!"

इसी समय दाढीवाले सज्जन ने एक काँच के गिलास मे खूब बढिया चाय बनाकर उनके सामने मेज पर रख दी—"तुम सुबह से लिख रहे हो, लो चाय पियो।"

भन्नन जी ने बिना परिचय के ही ऐसी कृपा दिखानेवाले सत्पुरुष को हाथ जोडकर धन्यवाद प्रदर्शित किया। वे गिलास वहाँ रखकर बाहर जाकर कुछ देख आए आफिस की तरफ फिर खाना बनाने की मेज पर आकर एक दूसरे गिलास मे चाय बना खुद पीने लगे।

भन्नन जी ने चाय की जो एक घूँट पी तो उन्हे बडी स्वादिष्ट लगी—"कौन है यह व्यक्ति? कितनी बढिया चाय बनाकर पिला गया। कुछ भूख भी लगी थी मुझे और कुछ प्यास भी। चाय दोनो को मिटा देगी। लिखने के लिए जिस स्फूर्ति की आवश्यकता थी, वह भी अनायास

ही मिल जायगी। लेखक महोदय ने उस चाय-दाता की जय-जयकार करते हुए एक-एक घूंट में गिलास रीता कर दिया। झट से गुसलखाने में गए और उसे धोकर भी रख दिया।

दाढ़ीवाला उस समय फिर एक पान की पुडिया खोल रहा था, बोला—"धुल जाता गिलास क्यो नाहक मे तुमने तकलीफ की ?"

"नही कोई बात नही।"—भन्नन जी ने मेज पर गिलास उलटकर रख दिया। सुबह से आज उन्होने पान नही खाया था। केवल अकेली सुरती ही होठ के नीचे दबाते चले जा रहे थे। चुम्बक जैसे लोहे पर खिच जाता है, ऐसे ही भन्नन जी की दोनो आँखे कत्थे के दाग से संयुक्त उस दैनिक पत्र की पुडिया पर जा लगी।

और वह उदार व्यक्ति बोला, फिर अपनी पुडिया खोलकर—"पान लोगे ?"

"है इसमे ?"

'न भी हो तो क्या है, बाजार तो है।" उसने पुडिया खोल उसमे बचा हुआ पान उन्हे दे दिया—"तमाखू भी लोगे ?"

उस व्यक्ति ने एक जरी से जडे बटुए के डोरे सरकाकर उन्हे कुछ तमाखू देते हुए पूछा—"सुपारी भी ?"

"थोडी-सी।"

और सुपारी भी लेकर वे अपनी मेज पर आ गए उसकी उदारता से विमोहित होकर। सुरती खाने से उनके भग के नशे मे एक लहर और जोर की उठी। वे सोचने लगे—"बडो अजीब भूमि है यह सिनेमा की। प्रत्येक धर्मवाले ने इसमे आकर अपनी सारी रूढियाँ समाप्त कर दी है। देखता हूँ, इसके भीतर एक नए ही विश्व-धर्म का उद्भव हो रहा है। ये सरदार जी, यहाँ तमाखू खाने लगे और दूसरे तो जरूर सिगरेट भी पीते होगे। लेकिन मुझे इनकी उदारता से मतलब है। पान के लिए मेरे मन मे कैसी चाहना उत्पन्न हो रही थी। बिना मेरे माँगे खुद पूछकर इन्होने अपने लिए रखा हुआ शेष पान मुझे दे दिया। धन्य हो !

हे भगवान् ! ऐसी उदारता क्या तू मेरे भीतर पैदा नही करेगा ?"

इधर-उधर की बाते छोडकर भन्नन जी अपने कथानक पर आए—"कैसे आरम्भ करूँ कहानी ? हीरो एक सपत्तिवान् व्यक्ति का लडका होना चाहिए। दोनो अगर अछूत और गरीब घरो से लिए जावेगे तो कोई तुलना न होगी और चित्र मे उभार पैदा न होगा। इसलिए हीरो का नाम दिनेश—एक मिल मालिक का लडका। दिनेश-दमती—दोनो का नाम एक साथ लेने पर कुछ मीठा भी सुनाई देना चाहिए, लगता तो है। लेखक महोदय ने अपने ही मुख से अपने गुण गाए।

वे बीडी सुलगाते हुए बोले—"बीडी पिओगे ?"

भन्नन जी मन मे सोचने लगे—"है ! ये सरदार जी तो बीडी भी पीते है ! हानि क्या है ?" प्रकट मे वे बोले—"नही बडी नही पीता।"

"तुम खरे हो हमने तो दुनिया भर के अमल किए इस सिनेमा की दुनिया मे। कुछ कर के छोड दिए। कुछ छूटते ही नही। कहते हैं—हम तो साथ ही चलेगे।"—उन्होने एक दियासलाई की तीली बीच से फाडकर दाँतो में फँसी हुई सुपारी की कनी जीभ पर लेकर जमीन मे थूकी।

भन्नन जी ने देखा उनके दाँत बिलकुल काले थे मानो सगमूसा की कारीगरी हो। भन्नन जी ने अपने दाँतो की सफाई का घमड किया। उन्होने एक कुर्सी पास खिसकाकर कहा—"बैठ जाइए।"

वे कुर्सी की पीठ पकडे हुए ही बोले—"क्या बैठूँ ? मुझे भी काम है, तुम भी लिख रहे हो ? क्या लिख रहे हो ?"

"मैं स्टोरी लिख रहा हूँ।"

"अच्छा, स्टोरी लिखते हो ? मैं समझा था तुम बेनू प्रोडक्शन की नौकरी के लिए अर्जी लिख रहे हो। कभी पहले भी कोई स्टोरी लिखी ?"

"किताबे तो दर्जनो लिखकर छपाई है।"

"अजी मैं पूछता हूँ फिल्म की स्टोरी। फिल्म की स्टोरी कुछ दूसरी

ही चीज है।''

"आप क्या काम करते है ?"

"मैं ? मैंने सारी उम्र इसी फिल्म की दुनिया में खर्च की है। पहले मैं ठेठर मे था। ये जो रुस्तम जी आज सिनेमा के इतने बडे प्रोड्यूसर, डायरेक्टर और पूँजीवाले हैं ये भी पहले एक ठेठर की कम्पनी में थे। ये मुँह मे चूना पोत, विग और साडी पहनकर सहेलियो में शामिल हो ड्राप उठने पर हम्दे खुदा गाते थे। मैने उन्हे ऐसा करते देखा है अपनी आँखो से। मेरी मशा उनकी बुराई करने से नहीं है। मै तुमसे सच कहता हूँ। इस लाइन के भीतर सैकडो-हजारो एक्टर-एक्ट्रेसें, कैमरामैन साउंड इजीनियर, डायरेक्टर, म्युजिक डायरेक्टर और पेंटर है जो उनके तरह-तरह के एहसानो से दबे हुए है। बडे भले आदमी है। घमड उन्हे छू भी नही गया। गुन की कदर करनेवाला एक ही शख्श है।"

"आप क्या एक्टर हैं ?"

"अजी एक्टरी भी की थी मैने। बाद को छोड दी, जी नही लगा। बेनू बाबू ने एक फिल्म कम्पनी मे होटल का ठेका दिला दिया था मुझे। मैं हरएक सिनेमा के एक्टर-एक्ट्रेसो की हिस्ट्री जानता हूँ। कौन क्या था ? किस हैसियत से सिनेमा के भीतर घुमा और कैसे क्या हो गया ? कुछ को मैंने कुछ न होते हुए भी आनन-फ़ानन में एक मामूली चाकर से प्रोड्यूसर होते हुए देखा है और कुछ को बहुत-कुछ होते हुए भी जहाँ-का-तहाँ पडा हुआ पाया है। सब लक है—तकदीर का खेल है।"—उन्होने अपने माथे पर हाथ लगाकर कहा।

भन्नन जी ने पूछा—"मैं भी बडी दूर से आया हूँ यहाँ।"

"अजी सब दूर-ही-दूर से आए है। कौन है यहाँ का ? थोडे-से मछुवे, उनकी भी जात और फैशन सबका-सब बदल गया है अब।"

"कुछ हो जायगा मेरा ?"

"क्या मालूम तुम्हारी कलम मे ताकत कितनी है। लेकिन एक बात है कलम की ताकत के सिवा तुम्हारी जुबान मे तेजी होनी चाहिए।

लिखे हुए को पढने के लिए किस डायरेक्टर के फुर्सत है ? अगर तुम्हारी ज़ुबान नई कैंची की तरह खटाखट चलती होगी तो तुम प्रोड्यूसर को अपनी बातो मे लपेट लोगे, अगर तुम उसके ऊपर छा गए तो बस मामला रैडी—और तुम्हारी कहानी पास ! फिर तो भाई उस कहानी मे सभी कम्पनी के छोटे-बडे नौकर-चाकर अपनी-अपनी कौडी और हीरे-मोती जडते चले जाते हैं। अगर ज्यादे गडबड नही हुई तो फिल्म पास हो ही जाती है।"

"मैं सुनाऊँगा आपको अपनी कहानी।"

"कितने गाने रखे हैं आपने ?"

"गाने ?" चौककर भन्नन जी ने पूछा—"पहले गाने या पहले कहानी ?"

"पहले गाने मिस्टर ! मुझे क्या कम तजरबा है इस लाइन का ? रुस्तम जी के साथ तकदीर थी इसी से वे इतने बडे आदमी हो गए। मैं अकेला होने की वजह से ऐसा ही रह गया। कहानी तो मेरे दिमाग में भी एक-से-एक आला भरी पडी हैं। सिनेमा के भीतर ही एक्टर-एक्ट्रेसो की हजारो कहानियाँ मेरी आँखो से गुजरी है। मैंने अँधेरी गली से निकलकर मामूली छोकरियो को आसमान मे सितारो-सी चमकते देखा है। मैंने बडी-से-बडी एक्ट्रेसो का उरूज भी देखा है, जब उनकी रोशनी हिन्दुस्तान के तमाम लोगो के दिल मे चमकती थी, जब उनके पोस्टरों से शहरो की तमाम दीवारे रग जाती थी और हर घर का कमरा सज जाता था। मैंने उनके अँधेरे दिन भी देखे है, जब फिर वे स्टूडियो की लिस्टो से खारिज कर दी गईं। उन्हे कट्रेक्ट देने के लिए कोई तैयार न रहा। पब्लिक का दिल उनसे भर गया—जरा भी चाह न रही उनकी। फिर उनके नामो के ऊपर दूसरे नाम छप गए और उनके पोस्टरो के ऊपर दूसरी तस्वीरे। उनके पार्ट दूसरो को दे दिए गए, कोई उनका पुरसा हाल न रहा।"

भन्नन जी बोले—"हर चीज का एक समय है।'

"तब उन्हें पता चला उनकी जवानी उधार की थी, धोका देकर न जाने किस रास्ते कहाँ को चली गई। फिर मेक-अप से क्या होता ? अरे जब ठठरी ही बाँकी हो गई, नसें सूख गईं तो किस पर कपडे ठहरते और किस पर जेवर ? कुछ ही दिन मे उनके चाहनेवालो ने उन्हें पहचानने मे इन्कार कर दिया। मैं तुमसे सच कहता हूँ मैंने बाँदरा और साताक्रुज़ के रेलवे पुलो के बाहर मशहूर एक्ट्रेसो को लोगो के आगे हाथ फैलाते देखा है।"—उन्होंने बटुवे के तागे सरकाकर कुछ तमाखू और एक दो ककर सुपारी के अपने मुख मे रखे।

"आदमी को जरूर सकट के समय की मदद के लिए कुछ-न-कुछ जमाकर रखना ही चाहिए।"

उन्होने फिर बटुवे के तागे खीचकर भन्नन जी के आगे बढाकर कहा—"लो तुम भी लोगे ?"

भन्नन जी ने हाथ जोडकर अनिच्छा प्रकट की।

"जमाकर रखने से भी क्या होना है ? जमा किए जानेवाले बर्तन में छेद नही होना चाहिए। हमारी-तुम्हारी इतनी अकल थोडे नही होती इनके। ये दुनिया मे भिखारी से लेकर भगवान तक का पार्ट करनेवाले, इन्हें क्या तुम मूरख समझते हो ?" सहसा उन्हे कुछ याद आई और कुछ खिसियाकर बोले—"मैने तुम्हारा टाइम ले लिया बहुत, इतनी देर में तुम स्टोरी लिखते।"

"आपके साथ बात करने से स्टोरी लिखने मे कम मदद नही मिलेगी मुझे। इतना बडा तजरबा है आपको फिल्म का।"

"अजी फिल्म का क्या मुझे फिल्म के बाप का भी तजरबा है।"

भन्नन जी हँसने लगे।

"हँसते क्या हो ? स्टेज—वह परदे—पखवाइयवे वाला स्टेज, साडी पहनाकर जहाँ लौडे औरतो में बदल दिए जाते थे, नीली साडियाँ हिला-कर जहाँ नदी का बहम पैदाकर दिया जाता था, पटाखे छोडकर जहाँ सीन ट्रासफर किए जाते थे और सारी मुश्किल भगवान् का दर्शन करा-

कर आसान कर ली जाती थी—वह स्टेज ही तो इस सिनेमा का बाप है। क्या जमाना था ! कैसी भोली-भाली पब्लिक थी ! टीन के बक्स मे कुछ ककर-पत्थर घुमाकर बजा दिए तो बिजली और बारिश का यकीन कर लेती थी। जो कुछ मुझे आता है मैं बता दूँगा। नज़्म लिखनी नही आती मुझे इसी से स्टोरी रह गई। तुम कहते हो पहले स्टोरी—मै कहता हूँ पहले गाने।"

"हाँ, यही एक बात मेरी समझ मे नही आ रही है—यह घोडे के आगे गाडी कैसी ?"—भन्नन जी ने पूछा !

"यह बिजली का जमाना है, कहाँ गाडी-घोडे की बात करते हो ? यह सच है। शुरू-शुरू मे बम्बई मे ट्राम भी घोडो की ताकत से चलती थी लेकिन अब क्या आगे क्या पीछे ? जिधर डडा जोड दिया उधर से चलने लगी। भाई, करने को जो भी कर लो : एक बात रिवाज की है। पहले जवाहरात होने चाहिएँ, तभी तो अँगूठी बनेगी। जवाहरात ही तो गाने हैं। अगर एक फिल्म के दो गानो ने भी हॉल में पब्लिक के पैर बजा दिए तो मार लिया मैदान ! तसवीर ज़रूर सिलवर ज़ुबली तक दौड जायगी।"

भन्नन जी चुपचाप लेक्चर सुनते रहे। वह जारी था—"पहले गाने की बढिया सिचुएशन निकालो। जगह निकालो, कोई बढिया कोना निकालो। कौन है तुम्हारा हीरो, कौन है तुम्हारी हीरोइन ?"

"हीरो एक लखपति का लडका है और हीरोइन है उनके आँगन में एक झाडू देनेवाली।"

"हूँ, निकाल डालो फिर कोई सिचुएशन लेकिन वह होनी चाहिए बड़ी बढिया जो आज तक किसी ने सोची ही न हो। यह काम सोचकर करने का है। सोचो, चाय तो नही पिओगे ?"

"नही, मैं तो बहुत थोडी चाय पीता हूँ।"

"लेकिन यहाँ बढानी पडेगी।"

"मैं नही बढाऊँगा।"

"फैशन या अमल के लिए नही, यहाँ की आबहवा के साथ कदम मिलाकर चलने के लिए चाय जरूरी है और—" वाक्य अधूरा ही रख वे दाढीवाले सज्जन बाहर ऑफिस की तरफ चले गए।

भन्नन जी मन मे सोचने लगे—"बात कुछ गलत नही जान पडती, इस नुसखे के बारे मे सुना तो है। फिर रिवाज भी तो एक शक्तिशाली चीज़ है। गाने की सिचुएशन निकालकर तो देखूँ।"

भन्नन जी विचार के सागर मे कल्पना का जाल डालकर गाने की सिचुएशन निकालने लगे—"दमती दिनेश का आँगन भाडती हो नीचे और दिनेश जलती हुई सिगरेट् ऊपर से फेक देता है। सिगरेट् उसके सिर पर की ओढनी मे धुवाँ उठाकर फिर उसके बालो को जलाने लगती है तो वह चौककर सिर पर से ओढनी फेककर गाना आरम्भ कर दे?"

कुछ सशय मे पडकर भन्नन जी अपने मन से कहने लगे—"दो गाना हो तो अधिक आनन्द आवेगा पब्लिक को?"· ·लेकिन सुरुचिवाले इस बात को कभी पसद नही करेगे। वास्तविक जगत मे ऐसा कहाँ होता है? भाड़ू देनेवाली के साथ प्रेम हो जाने पर भी क्या ऐसे कोई गाना गाता है?"

भन्नन जी कुछ देर चुप रह गए फिर जो कुछ लिखा था, उस पर कलम फेरने को उद्यत हुए ही थे कि वह दाढीवाला द्वार खोलकर भीतर आ गया। उनका ध्यान बँट गया और दूसरी विचारधारा उनके मन में प्रवाहित होने लगी—"अगर हम बिल्कुल वास्तविकता की उँगली पकड कर चलें तो कौन हमारी कहानी देखना पसन्द करेगा? सरदार जी तो कहते हैं, सबसे पहले गानो की जगह निकालकर गाने लिखो। वास्तव-जगत में गीतो के ऐसे-अवसर कहाँ होते हैं जैसे सिनेमा मे?"

मेज पर स्टोव भबकने लगा था और उस पर केतली रख दी गई थी, भन्नन जी मन मे बोले—"दोनो का अलग-अलग दो-गाना चल सकता है। दमंती भाड़ू देते हुए अपना गीत अलग गाती रहेगी और कमरे में विशाल दर्पण में अपना मुँह देखते हुए दिनेश अलग। दोनों गीतो की

टयून, छद, तुक सब एक ही होगा । एकाध बार दर्पण के प्रतिबिब में दिनेश को अपनी छाया के बदले दमती दिखाई दे जाय तो दोनो अलग-अलग जगहो की सगति मिल जाय ।"

एकाएक सोचते-सोचते भन्नन जी मन में बोले—"अत में मै कहाँ पर आ गया ? मैं तो अपने को बडा भारी साहित्यिक सोचता था ? ·· वह एक झूठा आदर्शवादी था। उसे समाप्त हो जाने दो । ससार मे हम सब बराबर हैं । नीचे गिरे हुए को ऊपर उठाना है, यह सबका कर्त्तव्य है ।"

इतने मे उन्होने चाय बनाकर फिर भन्नन जी के सामने एक गिलास रख दिया—"लो पडित, पियो चाय । दिमाग ठीक-ठीक काम करेगा ।"

भन्नन जी ने बडी कृतज्ञता से उनकी तरफ देखा, कुछ झिझके भी वे ।"

"पियो, पियो—कोई खटका नही ।"—वह दो गिलासो मे और चाय लेकर बाहर की तरफ चला गया ।

भन्नन जी चाय पीने लगे—"बडा उदार व्यक्ति है यह । मेरी इस की कोई जान-पहचान नही। शाय वह चायद ऑफिस मे किसी के लिए ले गया है। होटल चलाया है इन्होने। यह उसी के अभ्यास की विवशता है। चाय तो बडी स्वादिष्ट बनाई है।" चाय पीते-पीते कथाकार महाशय अपनी स्टोरी भूलकर उस होटलवाले को ही सोचते रह गए ।

थोडी देर में आ पहुँचे वे और जो एक गिलास चाय अपने लिए रखी थी, उसे उठाकर पीने लगे—"बडे विचित्र स्वभाव का पाया मैंने उन्हे। मेरे बारे मे कुछ नही पूछा उन्होने, मुझे तो उनके बारे में जानने की बडी उतावली हो उठी है।"

भन्नन जी ने कहा—"बार-बार बडा कष्ट कर रहे है आप।"

"मेरे बाप का क्या जाता है ?"

"क्यो ?"

सब कम्पनी का माल है। इतने साले आकर फोकट मे पी जाते हैं,

तुम्हारे पीने से क्या कम हो जायगा ?"

"कुछ भी हो," भन्नन जी ने मन में सोचा—"इनकी उदारता की सराहना करनी ही पडेगी । संसार में इस तरह के लोग और कितने हैं ?"

चाय का गिलास खाली कर अपने-आप बोल उठे वे—"मैं किसी की खुशामद नही करता । किसी का नोकर हूँ क्या ? सब अपने-अपने घर के बडे है तो क्या मै किसी के दरवाजे पर भीख माँगने जाता हूँ ?"

भन्नन जी ने पूछा—"क्या बात हो गई ?"

"कुछ नही ।"

भन्नन जी ने फिर पूछा—"तो आप कम्पनी मे नौकर नही है ?"

"नही जी ।"

"फिर ?"

"बेनू बाबू से मेरी बडी पुरानी दोस्ती है। जब ये सनलाइट पिक्चर्स में सेट् पर इधर का सामान उधर करते थे, तो मेरा वहाँ होटल था। मैं इन्हे कभी उधार और कभी वैसे ही चाय-बिस्कुट खिला देता था । वह एहसान अभी तक नही भूले बेनू बाबू, इतने बडे आदमी हैं । बडी आसानी से मुँह फिराकर कल कह सकते थे—जाओ मै नही पहचानता तुम्हे । मैं कहता हूँ, इसलिए तो खुदा ने उन्हे इतना बडा आदमी बनाया है ।"

भन्नन जी बोले—"मै भी अपना सौभाग्य समझता हूँ जो ऐसे आदमी के निकट मुझे रहने को जगह मिली । इस समय आप चाय किस के लिए बना ले गए ? क्या बेनू बाबू आए है ?"

"सारी खुदाई एक तरफ—वो मिस्टर रिम आए थे बेनू बाबू के साले साहब, उन्ही के लिए ले गया चाय ।"

"चले गए क्या ?"

"दो-तीन जगह टेलीफोन के चक्कर घुमाकर बेनू बाबू को ढूंढ़ा, मगर कोई पता न चला तो मेरी ओर घूरकर चल दिए मोटर में, मानो

मैंने बेनू बाबू को जेब मे रख लिया है ।"

"कुछ तनखा तो मिलती होगी आपको ?"

"चाहिए क्या मुझको ? जोरू न जाता, फकत अल्ला मियाँ से नाता। चाय यही पीने को मिल जाती है, बाकी जो कुछ खर्चा होता है सब चल ही जाता है किसी तरह । अजी मेरा बडा भारी होटल था। अप-टू-डेट ! बडे-बडे एक्टर-एक्ट्रसे ही नही, उनके यार दोस्त भी तो । फर्स्ट क्लास क्राकरी, कटलरी, नौकर-चाकर एक-सा यूनिफार्म मे, खाने-पीने का सामान अव्वल दरजे का, चमकीला फरनीचर—नई इमारत ! ओफ ! लेकिन मुझे क्या कोई परवा है ! पैसा हाथ का मैल है, फिर जमा कर लूंगा ।"

भन्नन जी ने समवेदना के साथ पूछा—"वह सब क्या हुआ ?"

"क्या बताऊँ ? मैंने नौकरो-चाकरो का यकीन किया, वे खा गए और कुछ मार ले गए उधार के खानेवाले ।"

"मकान ?"

"मकान तो किराए का था ।"—हँसकर वे बोले ।

भन्नन जी ने पूछा—"फरनीचर और बर्तन भाडे ?"

"उन्हे मकान के बाकी रहे किराए मे काट लिया मकान मालिक ने । कोई और होता तो रातो-रात खिसका ले जाता, लकिन मुझे किसी से बेईमानी करनी नही है । ईमान कायम रहेगा तो पैसा फिर जुड जायगा । बेनू बाबू ने कह रखा है मुझसे । उनकी शूटिग शुरू नही हुई कि वे मुझे होटल खुलवा देगे एक छोटा-सा ।"

"उनकी शूटिंग कब शुरू होगी ?"

"कहानी छाँट रहे है अभी । उसी के लिए दौड-धूप हो रही है । मजनू साहब की स्टोरी पसद तो की है उन्होने, लेकिन दामो पर बात अटक गई है ।".

मुँह के भीतर-ही-भीतर भन्नन जी के लार टपक रही थी वे सोच रहे थे—"किसी तरह अगर बेनू साहब के साथ मेरा परिचय हो जाता और मुझे उन्हें अपनी कहानी सुनाने का मौका मिल जाता ।"

"अजी वैसे तो यहाँ दर्जनो स्टोरी रायटर आते हैं उनसे भेंट करने लेकिन किसी के पास कुछ मसाला हो भी तो।"

भन्नन जी के मन में हुई कि इस समय अच्छा मौका है उनसे यह कहने का कि बेनू बाबू से वे सिफारिश कर दें।

पर उनका उत्साह फौरन ही ठढा पड गया जब वे कहने लगे—"अजी आजकल तो जिसे देखो वही स्टोरी-रायटर बन गया है। दो-तीन आने की पूँजी मे दवात-कलम और कागज जोड लिया और दो-चार घटे लगाकर रग दिया कागज और बन गए स्टोरी-रायटर।"

इसी समय हरीश आ पहुँचे और बोले—"कोई डिस्ट्रीब्यूटर भी आया था आज नॉर्थ का?"

"मुझे क्या मालूम, ड्यटी तुम्हारी है।"

"ऑफिस तो खुला ही था।'

"बाहर मे भौंपू बजाकर चला गया होगा।"

हरीश कुछ बिगडकर बोला—"तुम्हे रोकना चाहिए था उसे।"

दाढीवाले सज्जन हँसकर बोले—"नही कोई नही आया। मैंने सरिता की नौकरानी से कह रखा है। रिम साहब आए थे।"

"उनके आने से क्या होता है?"

"बेनू साहब आए है क्या?"

"हाँ।"

"और कौन आया है?"

"मजनू साहब।"

"स्टोरी का कुछ तय हुआ है?"

"भगवान जाने।"

"चाय बनाऊँ?"

"पूछो शायद खाना माँगते हो।"

वे दफ्तर में बेनू साहब से पूछने गए। हरीश वही पर रह गया। उसने पूछा—"क्यो पंडित जी, चाय भी मिली या नही?"

"मिली, बडे उदार सज्जन है ये ।"

"हाँ बडे मौजी और मस्त है । सिनेमा मे ज्यादेतर ऐसे ही है । कोई तो खूब पैसा मिल जाने से मजा करते है और बाकी सेट् पर के झूठे सपनो को देख-देखकर ही खुश रह जाते है। पडित जी, आपने कभी कोई शूटिंग देखी या नही ?"

"अभी तो बम्बई आया हूँ, उधर अपने यहाँ अभी कहाँ ऐसा योग है ?"

"स्टोरी रायटर को तो जरूर ही शूटिग वगैरह देखना चाहिए तभी तो आप समझेंगे स्टोरी कैसे लिखी जानी चाहिए । बिना इस तजरबे के आपकी स्टोरी मे कैसे जान पडेगी ? छापे की किताब लिखना दूसरी बात है ।"

भन्नन जी ने इस तथ्य को बडी विनम्रता से स्वीकार किया—"हाँ हरीश भाई, सब तुम्हारी ही कृपा से होगा ।"

"हमारी क्या कृपा ? हमारी शूटिंग शुरू हो जाने दीजिए । फिर चलिएगा हमारे साथ ।"

"कोई रोकेगा तो नही ?"

"अजी रोक कौन सकता है ? पडित जी, मै समझता हूँ स्टोरी लिखने से पहले आपको जरूर शूटिंग देखनी चाहिए ।"

भन्नन जी चकराए । दाढीवाले सज्जन ने स्टोरी लिखने से पहले गाना लिखना जरूरी बताया था । हरीश कहता है शूटिग देखना । बेखटके उनका जो हाथ कहानी लिखने पर चल रहा था, उसके आगे एक दुर्लंघ्य पहाड आकर खडा हो गया । दमती और दिनेश का दो-गाना भूला गया उनसे । उन्होने पूछा—"मेरी चिट्ठियाँ छोड दी ।"

"सबसे पहले ।"

दाढीवाले सज्जन आ पहुँचे बोले—"बडी अलमारी खोलने को कहते । मैं बजार जाता हूँ ।"

हरीश बोला—"मजनू साहब आए है न ।"

हरीश जेब से चाबी निकाल और उसके साथी थैला हाथ मे ले चल दिए। भन्नन जी का मन फिर उस कहानी पर जमा नही, लेकिन वे किरसन जी के साथ खाली हाथ भेट कैसे करेगे ?

सोचते-सोचते एक बात याद आ गई उन्हे। एक उपन्यास तो उनका है ही वहाँ। बाकी बाजार मे ढूँढे जा सकते है।

ऐसा ही किया गया। शाम को कौशल को साथ लेकर भन्नन जी बाजार गए पैदल ही। भीड का समय था। उन्होने कौशल का हाथ पकड लिया।

कौशल ने पूछा—"कहानी कितनी लिखी ?"

"थोडी ही, अभी तो सोच रहा हूँ।"

'किस की ?"

"कहानी बखत की लिखनी चाहिए। यह बखत है अछूतोद्धार का। हिंदुओ ने बडे भारी अत्याचार किए है दलित जाति पर।'

कौशल बोला—"यह जो हमारा साथी प्रेम है यह भी हरिजन है।"

भन्नन जी आश्चर्य मे पडकर बोले—"तभी, मैं सोच तो रहा था उस बिचारे के सकोच को देखकर।"

"हमे पहले यह मालूम न था, लेकिन वह बडा अच्छा आदमी है।"

"मनुष्य की घृणा से हम कभी उन्नति नही कर सकते।"

"हाँ पडित जी, इस सध्या-पूजा के पाखड से कुछ नही होता।"

भन्नन जी ने घबराकर इस चोट को अपनी पूजा-पाठ पर लिया। वे सोचने लगे—"शायद आज तक की सचित तमाम रूढियो को समाप्त करने के लिए मै बम्बई आया हूँ। देखा जाय तो कुछ देर मत्रो का हल्ला कर देने से क्या हम भगवान के निकट हो सकते है ? होठो पर के उच्चारण से बलवान् हमारे विचार और हमारी भावना है।"

कौशल ने पूछा—"पडित जी, किताबो के सिवा और भी खरीद करनी है आपको ?"

उन्होने उत्तर दिया—"कौशल, तुम क्या समझते हो और क्या खरी-

दना जरूरी है ?" भन्नन जी कपडो के बारे में पूछते-पूछते रुक गए। कौशल के साथ जो और भी दो उसके साथी थे, वे सब कोट पतलून ही पहनते थे। भन्नन जी कौशल को उसके अग्रेजी-भाषा-प्रेम के लिए निरुत्साहित कर देना चाहते थे, तो फिर अग्रेजी कपडो के लिए कैसे अनुराग दिखाते ? वे चुप रह गए, वह समय उपयुक्त नही समझा उन्होने उसके लिए।

किताबवाले की दूकान पर पहुँचे। तीन किताबे वहाँ और मिल गई उनकी लिखी हुई। तीनो खरीद ली गईं।

कौशल ने पूछा—"छपी हुई किताबो पर से भी क्या सिनेमा बन सकता है ?"

"क्यो नही ?"

"तो इसका मतलब है अगर कोई आपकी किताब पसद करे तो वह आपको फिर इसका सिनेमा बनाने को रुपया देगा।"

"जरूर !"

दस

शाम को भन्नन जी के बाजार से लौटने पर ऑफिस बद था। हरीश कमरे मे अकेला था, उसने पूछा—"खाने-पीने का क्या होगा ?"

भन्नन जी बोले—"जब छुआछूत पर कहानी लिखनी है तो कच्चा-पक्का दाल-भात-रोटी सब चलेगा।"

चलाना क्या था ? अपने-आप यह बात चलनी आरम्भ हो गई थी।

कौशल बोला—"वाह पडित जी, अब आप बना लीजिए एक पतलून, एक बुशकोट। नाक के नीचे की यह कालिख उडा दीजिए क्लीन शेव कर और माथे पर यह चदन की टिकिया पौछ दीजिए उल्टे हाथ से।"

हरीश ने कहा—"बडा बदतमीज है तू।"

"ठीक ही तो कह रहा हूँ। फिर देखना कैसी स्टोरी चल पड़ती है पडित जी की।"

भन्नन जी बोले—"लेकिन भाई वह तो व्ययसाध्य है, इसीलिए अपना धोती-कुरते मे गुजर करता हूँ ।"

"आमदनी बढाने के लिए पैसा खर्च करने मे क्या नुकसान है ?"

भन्नन जी ने जवाब दिया—"देखो फिर जब आमदनी बढने का सिलसिला लगा तो सब-कुछ हो जायगा । एक बात बताओ, सरदार जी कहाँ गए ?"

माथे पर सरवटे इकट्ठा कर हरीश ' पूछा—"कौन सरदार जी ?"

कौशल मुसकराकर पूछा—"कौन सरदार जी जो यहाँ चाय बनाते है ?"

अचकाकर भन्नन जी बोले धीरे से—"हाँ ।"

"वे सरदार जी कहाँ है वे तो करीम चाचा है ।"—कौशल ने कहा ।

"करीम चाचा ?" मानो भन्नन जी पर आकाश टूट पडा ! वे उठकर खडे हो गए और गुसलखाने की तरफ देखने लगे ।

"क्यो पडित जी, बात क्या हो गई ? क्या उन्होने कोई बुरे लफ्ज़ कह दिए आप से ? आपका यह सीधा-सादा भेष शायद उनकी समझ मे न आया हो ।"

"नही बुरे लफ्ज़ तो कुछ नही कहे ।"

"फिर ?"

हरीश ने कहा—"तो क्या ऐसा तो नही कहते थे कि आप इस कमरे में क्यो ठहरे है ?"

"नही, वे तो बडे अच्छे आदमी जान पडे मुझे । बडे उदार और प्रेमी व्यक्ति, ऐसे मनुष्य बहुत कम है ।"

"अजी उन्होने अपनी जमी-जमाई बिजिनेस चौपट कर दी यार-दोस्ती में । बडे मौजी और मस्त है ।"—कौशल बोला ।

हरीश ने जवाब दिया—"सिर पर कोई जिम्मेवारी होती तो पता चलता ।"

भन्नन जी के मन मे दूसरी विचारधारा चल रही थी—"राम ! राम ! यहाँ कहाँ आ फँसा बम्बई में ?"

उनके इन विचारो की छाया पकड ली हरीश ने उनके मुख पर। वह बात समझ गया, बोला—"देखिए पडित जी, दूसरो को छोटा और अपने को बडा समझना इसानियत नही है। खान-पान या कुल-जाति से कोई छोटा-बड़ा नही होता। हम सबको भगवान ने नगा ही पैदा किया है और मरने पर हम सब एक ही सी मिट्टी बना देते है। फिर कैसी तू-तू मै-मैं ?"

"तुम्हारे बडे ऊँचे विचार है।"

"कुछ नही मै आपका एक छोटा-सा सेवक हूँ। लेकिन हमे मनुष्य का दिल देखना चाहिए उसकी जात से क्या होता है ? फिर हमारी जात बडी है, इसका क्या सबूत है ? अपनी जात तो सभी को बड़ी जँचती है।"

कौशल ने ताली बजाकर कहा—"हियर ! हियर !"

"तू बुद्धू क्या जाने।"—हरीश उसकी ओर घूँसा तानकर बढने लगा।

भन्नन जी ने उसका हाथ पकड लिया—"नही हरीश, बिल्कुल सही बात कर रहा है।"

"मैं क्या उसकी मजाक उडा रहा था ? उसका दिल बढाने को मैंने ताली बजाई जैसे लेक्चरो में होता है।"

"जात का बडा घमड है इसे पडित जी, तभी साले को मोटर धोने जाना पडता है और जिस दिन सेठानी इसे जूठी थाली मलने को दे देगी तो बस खतम, उसी दिन उसकी नौकरी पर लाल झडी दिखा दी जायगी। हमारा क्या हम तो यहाँ सभी काम करते है। बारहो जातें यहाँ आती हैं, हम सबका ही झूठा धोते हैं।"

कौशल बिगडकर बोला—"तो क्यो धोवे उनके बर्त्तन ? नौकरी चपरासीगिरी की कर रखी है या उनका जूठा धोने की ?"

हरीश उसे मुँह-तोड जवाब देना चाहता था कि कराहता हुआ प्रेम

आ पहुँचा और उदास मुख एक कुरसी पर बैठ गया।

सभी ने एक स्वर मे पूछा—"क्यो प्रेम, क्या बात है ?"

"कुछ नही कई दिन से बुखार आ रहा था, आज बर्दाश्त के बाहर हो गया।"

हरीश ने पूछा—"डॉक्टर के पास नही गए ?"

भन्नन जी ने उसका हाथ पकड उसे उठाते हुए कहा—"इस पलग मे लेट जाओ।"

"नही जमीन मे बिछा लूंगा।"

"सीमेट की फर्श है।"—भन्नन जी ने कहा।

"दो गद्दे है मेरे पास।"

हरीश ने प्रेम का बिस्तर जमीन मे बिछा दिया और वह जूता खोलकर सो गया।

"कौशल ने उसके माथे और नाडी पर हाथ रखकर कहा—"बुखार तो है। भूख लगी है ?"

"नही, जाडा लग रहा है।"

कौशल ने उसे अपना कबल ओढा दिया—"और कुछ ?"

"हो गया।"

भन्नन जी सोचने लगे—"इस पलग पर सोकर शायद मै इस गरीब हरिजन का अधिकार छीन रहा हूँ। ऐसी स्थिति मे मैं कदापि 'छुआछूत' की सही कहानी नही लिख सकता।"

उसी समय उन्होने आत्मा की उस आवाज पर परदा डाल दिया—"मैंने प्रेम से पलग मे सो जाने के लिए कहकर अपना कर्त्तव्य पूरा नही कर दिया क्या ?"

फिर वही आवाज उसके मुँह से निकल पडी—"इस पलंग में कौन सोता था ?"

हरीश बोला—"जब जिसके मन आई।"

"यह है किसकी ?"

हरीश ने उत्तर दिया—"हमारे परसी साहब की है। उनके कमरे मे खाली पडी थी, मैं माँग लाया।"

भन्नन जी ने उस आवाज को मन की अनत गहराई मे दबाकर मूक कर दिया। प्रेम भूमि पर पडा कराह रहा था और भन्नन जी का कलाकार अपने गौरव की रक्षा करने के लिए उम ऊँची पलग पर सोने का अपना सर्वोच्च अधिकार समझ रहा था।

हरीश ने भन्नन जी से पूछा—"भोजन ?"

भन्नन जी ने प्रेम से पूछा—"प्रेम, भूख लगी है कुछ ?"

"नही पडित जी, कुछ नही।"

'कुछ दूध ला देगे।"

"अभी कुछ नही।"

हरीश ने भन्नन जी से कहा—"दो रोटी पका देगे आपके लिए ?"

"अच्छी बात है।"

सब भोजन के लिए तैयार हुए लेकिन प्रेम ने दूध के लिए भी इच्छा नही प्रकट की।

भन्नन जी ने मन मे सोचा—"करीम चाचा ने अधी रूढियो के द्वार एक ही झटके में तोड दिए। अब किसका भय है ?"

हरीश ने उन्हे अटकता हुआ देखकर कहा—'शुरू कीजिए पडित जी, आप एक नई दुनियाँ के भीतर घुस रहे है। झूठे बडप्पन के अधे कुएँ से बाहर निकलने पर आप देखेंगे सारी दुनियाँ से भाई-चारा जोडने में जो सुख है, वह उस अंधेरी कैद में कहाँ ?"

"तुम ठीक कह रहे हो हरीश भाई, हिन्दू पहले ऐसे अनुदार नही थे, उनका जगत ऐसा सकुचित नही था। वे पहले धरती पर के समस्त प्राणियो को समान समझते थे, सब में भगवान का अंश भी। मालूम नही कब से उन्होने छुआछूत की विभक्ति रचकर अपने को ससार में सर्वश्रेष्ठ मान लिया। अहकार अपनी चरम सीमा मे अट्टहास्य करने लगा। संसार की जनसख्या मे रुपए में दो आने भर हम—बाकी चौदह आने

खोटे, तुच्छ और नगण्य !"—भन्नन जी ने इस वृक्तृता से जीवन में सबसे प्रथम बार कपडे पहनकर दाल मे रोटी के टुकडे की डुबकी लगाई।

हरीश ने पूछा—"क्यो पडित जी, पूरी कच्ची रहने पर भी पक्की रसोई कहलाती है और दाल अच्छी तरह घुल-मिलकर पक जाने पर भी कच्ची रसोई क्यो कहलाती है ?"

"मैं कुछ नही जानता भाई। जीवन मे आज पहली बार इस पोले दुर्ग को तोडकर आजाद हुआ हूँ।"

"फिर आज आपने धर्म को खतम कर दिया।"—कौशल बोला।

"धर्म को तो नही, पाखड और झूठे दिखावे को जरूर।"

जिस समय भन्नन जी इस प्रकार अधी रूढियो की दीवाल तोडकर बाहर आ रहे थे, उस समय वह ज्वर से कराहता हुआ हरिजन का बेटा भूमि पर पडा था। खा-पीकर भन्नन जी पलग पर, कौशल मेज पर और हरीश दफ्तर के सोफे पर सो जाने के सपने देखने लगे।

हरीश ने पूछा—"दूध ला दूं प्रेम !"

"नही।"

हरीश अपना कर्त्तव्य पूरा कर चल दिया।

कौशल ने पूछा—"क्यो प्रेम बुखार कैसा है ?"

कराहकर प्रेम ने कुछ व्यक्त किया, शायद वह भाषा की पहुँच से बडी अभिव्यक्ति थी।

कौशल ने धीरे-धीरे उसके ऊपर से अपना कबल उठा लिया—"अब तो नही लग रहा जाडा ?"

प्रेम ने फिर उसी मनुष्य की आदिभाषा में कुछ कहा और कौशल ने उसे समझकर भी न समझने का अभिनय किया।

"क्या करूँ फिर ?" कौशल ने भन्नन जी से अपनी विवशता कही—"मेरे पास ओढने को कुछ है ही नही ?" उसने मेज पर अपनी दरी बिछा दी, उसपर वह कबल डाल दिया। वह भन्नन जी का बिस्तर फैलाने को आगे बढा।

"रहने दो, मैं खुद बिछा लूँगा, कल को मैं एक कबल और एक दरी खरीद लाता हूँ। क्या बनाऊँ ? भला हो उस चोर का !"—भन्नन जी भी अपनी पलग पर जा डटे।

कौशल ने बीडी जलाई और प्रेम से कहने लगा—"क्यो भाई बीडी पीने को है तबीयत ?"

"ऊँ हूँ !"—प्रेम ने बडी कठिनाई से कहा।

भन्नन जी ने सोने समय की चुटकी दबाई अपने होठ के नीचे—"चूना-कत्था रख लूँगा अब।"

"करीम चाचा ने नही खिलाया पान ?"

कुछ रुककर पडित जी बोले—"हाँ खिलाया, इसी लिए और भी जल्दी पान का सामान जोड लेना चाहता हूँ।"

"क्यो आपकी पूजा-पाठ के अपवित्र हो जाने का खटका ?"

"नही भाई, करीम चाचा की उदारता से फायदा उठाना पाप है।"

"प्राइमर निकालूँ पडित जी ?" कौशल ने कहा—"थोड़ा-थोडा कर रोज बता देंगे तो इस गरीब की भी नाव पार लग जाय।

"नाव तो भाई मनुष्य की ईमानदारी से पार लगती है।"

"लेकिन पडित जी, मैं दिन भर मारा-मारा पैदल इधर से उधर फिरता हूँ। दफ्तर के कर्लक मुफ्त का मेरे उपर रोब जमाते है—क्यो ? इंसान हम सब बराबर है। कपडे जरूर वे मुझसे कही ज्यादा बढिया पहनते है। इसका कारण है उन्हे मुझमे कही ज्यादा तनखा मिलती है। तनखा ज्यादा मिलने का कारण ईमानदारी नही है पडित जी। मैंने सोचा, सोचा—बहुत सोचा तनखा ज्यादे मिलने का सबब यही अग्रेजी है। मैं क्यो नही सीख सकता अग्रेजी। मैं टाई-कोट उनके जैसा नही पहनता हूँ लेकिन दिल दिमाग तो वैसा ही रखता हूँ।"—कौशल ने अल्मारी में से अग्रेजी की प्राइमर निकाल ली।

भन्नन जी ने मन-ही-मन उसकी बात का समर्थन किया लेकिन प्रकट में बोले—"देखो भाई, आज हमारी एक राष्ट्रीयता बन गई है।

प्रत्येक राष्ट्र की एक आवाज़ होती है । यह जो तुम अग्रेजी का स्वर ऊँचा करना चाहते हो यह फिर वही पुरानी गुलामी की बात है । जब अग्रेज यहाँ से चले गए तो फिर अग्रेजी कैसी ?"

"अजी पडित जी, आप किसी गाँव मे ऐसा लैक्चर दे सकते हैं ।" यह बम्बई है बम्बई ! यह अग्रेजो का ही बसाया और बनाया हुआ है । अग्रेज चला गया तो क्या हुआ ? अग्रेजियत यहाँ से कभी जा नही सकती, जब आप घर से बाहर कदम निकालोगे तो आपको पता चलेगा, रेल मे जहाज में, बस मे, ट्राम में, दूकान-दफ्तर मे, सिनेमा-क्लब मे सब जगह अग्रेजी का बोलबाला है । अगर आपको अग्रेजी मालूम है तो आप क्यू में सबसे पिछडने पर भी सबसे आगे हो जावेगे । जेब मे पैसा न होने पर भी उधार मिल जायगा। बिना टिकट होनें पर भी छोड दिया जायगा आपको ।"

"कह तो तुम ठीक रहे हो । पर···"

कौशल ने उन्हे कहने नही दिया—"अग्रेजी मे अगर आप झूठ भी बोलेंगे तो सब उसका विश्वास करेंगे । एक 'सौरी' के लफ्ज़ मे आपके बड़े-बड़े कसूर माफ़ और एक 'थैंक्यू' की आवाज मे आप बडे-बडे एहसान का बदला दे सकते हैं । है आपकी राष्ट्र-भाषा मे ऐसी ताकत ?"

"कौशल जी, अगर नही है तो यह हमारा-आपका ही कसूर है । सभी इस बात पर ध्यान दे तो महीनो मे ही यह सिद्ध हो जाय ।"

"हम और आप ध्यान दे और दूसरे समझ से परे की भाषा में हमारा हिस्सा उडा जायँ ।"

"कोई किसी का हिस्सा नही उडा सकता । हम सबको हमारे पूर्व-जन्म के कर्मो के अनुसार मिलता है ।"

"यह भी आपका एक अंधविश्वास है । कच्ची रसोई की तरफ़ इसकी भी छूत छोड दीजिए । आप अंदाज कर लीजिए कल सुबह एक डायरेक्टर के साथ आप इसी भेस और इसी भाषा में जाकर मिलिएं, शाम को पतलून की जेब में हाथ ठूँसकर अंग्रेजी मे बोलिए । रात को जब आप

टोटल मिलावेंगे तो आपको पता चल जायगा तराजू का पलडा किधर झुका है।"—कौशल किताब खोलते हुए बोला।

पडित जी हँस पडे—"बडे बातून हो तुम।"

"हर तरह के लोगो से वास्ता पडता है पडित जी। ए बी सी डी तो मुझे पढनी-लिखनी दोनो आती है। चार-पॉच सबक भी याद है, आप पूछ लीजिए।"

भन्नन जी ने अपनी ऊनी चादर ओढते हुए कहा—"अभी दो-चार दिन ठहरो भाई। कुछ रहने का ठौर-ठिकाना कर लेने दो।"

"रहने का क्या है, यही रहिए, परसी साहब बडे अच्छे आदमी है। आपके यहाँ रहने मे उन्हे कोई उज्र न होगा।"

"खाना कहाँ से आवेगा ?"

"घर रोटी-दाल बनाने में कुछ ज्यादे नही लगता। महीने में जो भी खर्चा आता है हम बराबर तीनो बॉट लेते हैं।"

"वह भी कहाॅ से आवेगा ?"

"स्टोरी से पडित जी, स्टोरी से—छुआछूत की स्टोरी से जो आप लिख रहे है।"

और उस समय परदेस में वह हरिजन का बेटा ज्वर से पीडित कराह रहा था। वे अछूतोद्धार में कहानी लिखनेवाले उसकी जगह मे पडे-पडे अपनी महिमा बढा रहे थे।

भन्नन जी ने कहा—"कौशल, बत्ती बुझाकर सो जाना चाहिए अब। बिजली का खर्चा कौन देता है ?"

"परसी साहब के ही कमरे में है मीटर। बेनू साहब का मीटर अलग है उनके ऑफिस में।" कौशल ने किताब को बद करते हुए कहा—"बुझा दूँ फिर ?"

भन्नन जी ने पुकारा—"प्रेम ?"

"आँ।"—कराहा उसने।

"कैसी है तबियत ?"

"वैसी ही ।"

"कल तुम्हे डॉक्टर के पास ले चलूँगा ।"—भन्नन जी ने भी अपना कर्त्तव्य समाप्त कर तकिए मे सिर रख लिया ।

कौशल ने बिजली का स्विच खटकाकर कमरे मे अँधेरा कर दिया । खिडकी के बाहर शरणार्थियो की कोठियो से आँगन मे आडी-तिरछी कई तरह से बिजली की रोशनी प्रतिफलित थी और अभी स्थानीय रेडियो का प्रोग्राम भी जारी ही था ।

सुबह सबसे पहले खिडकी पर हामिद रोटीवाले ने आवाज दी—"बाबू चाहिए ?"

भन्नन जी ने नीद में चौककर कहा—"क्या ?"

"रोटी, अडे, मक्खन ।"

"एक पाव रोटी दे जाओ ।" उन्होने पैसे देकर रोटी ले ली । मन में बोले—"रोज इन्ही लोगो का खा जाऊँगा तो कब तक इन्हे सहन होगा ?"

भन्नन जी ने उठकर बत्ती जलाई। दूर पर लोकल ट्रेने चलने लगी थी। सडको पर दूध और अखबारवालो की चहल-पहल होने लगी थी । फर्श पर प्रभात की ठडी-ठडी हवा मे रात भर के बेचैन प्रेम की आँख लगी जान पडती थी और कौशल दिन भर की दौड-धूप से थका खर्राटे ले रहा था । पडित जी ने उठकर कुल्ला किया और भग का चूरन फाँक कर पानी पिया । इसके बाद उन्होने एक पुडिया मे से सुरती निकाली और उसे होठ के नीचे दबा शौच को चल दिए ।

नहा-धोकर फिर पलँग मे आकर विराजमान हो गए । पुरानी आदत ने जोर मारा, संध्या करने को पचपात्र में पानी लेकर बैठे । मन में तर्क जागा—"सध्या क्या है यह ? आत्मा के साथ परमात्मा का मेल ? यह पानी क्यो लिया जाता है साथ में ? क्या इससे वह योग किया जाता है ? सध्या एक मानसिक चीज है इस पानी की और इस पचपात्र की संगति एक आडम्बर ही है । क्या अर्थ है इसका ?"

कुछ ठहरकर भन्नन जी ने विचारा—"आचमनी से पानी लेकर मुँह मे डाला—ॐ ऋग्वेदाय स्वाहा, ॐ यजुर्वेदाय स्वाहा, ॐ सामवेदाय स्वाहा, याने इस पानी के अनुपान के साथ मैं तीनो वेदो को हजम कर गया ! बडा बढिया शार्टकट है ! परीक्षार्थी भी ऐसा ही करे—गणित स्वाहा, इतिहास स्वाहा, विज्ञान स्वाहा, राजनीति स्वाहा, नागरिक शास्त्र स्वाहा, साहित्य स्वाहा। विद्यार्थियो के श्रम की बचत और सरकार के लाखो रुपयो की।"

फिर दूसरी लहर आई उसके मन मे—"अरे भन्नन ! तेरी नाव डूब गई। तूने स्पर्शास्पर्श का विचार छोड दिया। जिसके हाथ का हुआ, जो मन आया, जहाँ पर भी हुआ तू खाने लगा, इसी से तेरी विचार-धारा कलुषित हो गई—तू पतित हो गया ! अब कुछ नही हो सकता तुझसे। तू नास्तिक हो गया।"

"क्यो नही हो सकता ? मै विश्व-मैत्री की तरफ पैर बढा रहा हूँ। मैं सारी मानवता की कल्याण-कामना की सध्या करूँगा। सध्या मन की है—इन पानी-पचपात्र, चुटिया-जनेऊ में क्या रखा है ? मैं नास्तिक नही हुआ हूँ। सध्या को बडी चीज़ समझता हूँ—वह सभी धर्मों में है। लेकिन मैं उसके साथ कोई पाखड बढाने के लिए तैयार नही हूँ।" भन्नन जी ने पचपात्र और पानी को सध्या के छिलके समझ उतारकर फेंक दिए। जल्दी-जल्दी जीवन की वह पहली सूखी पूजा समाप्त की। होठो पर सध्या के घिसे हुए मत्र जरूर थे पर मानस मे घूम रही थी वह एक्स्ट्रा सप्लायर किरसन जी की मूर्त्ति।

"बबई मे गाडी से उतरते ही सबसे पहले उसी ने मुझे पहचानकर कहा—तुम जरूर कहानी लिखकर लाए हो। मुझे उसी से मित्रता बढानी चाहिए। यही पर तो है वह। अभी उसके बारे मे इन लोगो से कुछ नही, जब काम बन जायगा तभी कहूँगा।"—भन्नन जी ने अपने चारो उपन्यासो को अपने थैले में रखा।

कौशल उठ बैठा—"बडी जल्दी उठ गए पंडित जी। नहा लिए ?"

"हाँ भाई।"

कौशल ने बीडी मुलगाई और बिस्तर लपेटकर लोहे की पलँग पर रख दिया। प्रेम के पास जाकर पूछा—"क्यो, कैसी तबीयत है ?"

प्रेम उठते हुए बोला—"ठीक है।" वह भी अपना बिस्तर लपेटने लगा।

"अर्जी लिख दो, छुट्टी ले लो एक-दो दिन का। मै दे आऊँगा तुम्हारे कारखाने मे जाकर।"

"नही, मै ठीक हूँ।"—प्रेम ने भी अपना बिस्तर लपेटकर उसी लोहे की पलँग पर रख दिया।

"खाना क्या खाओगे ?"

"दाल-रोटी। बडी जोर की प्यास लगी है।"

"मैं अभी चाय बनाता हूँ।"—कौशल ने स्टोव जलाकर उस पर केतली रख दी और स्वयम् लोटा लेकर शौच को चला गया।

प्रेम गुसलखाने में जाकर बीडी चूसने लगा और पडित जी कुरसी में बैठकर तमाखू और चूने का मेल मिलाने लगे।

कौशल गुसलखाने मे मुँह-हाथ धोने लगा—"यहाँ ठडे मे क्या कर रहे हो ? पीते क्यो नही उनके सामने बीडी ? बडे बढिया आदमी है।"

प्रेम भी शौच को चला गया, कौशल एक गिलास लेकर दूध को। मार्ग मे गिलास के किनारे से रिटाइरिग रूम के दरवाजे को बजाकर बोला—'हरीश, उठेगा नही आठ बजते है अब। चाय ठडी हो जायगी। उठ जा।" उसने फिर एक-दो बार और बजा दिया दरवाजा।

चारो साथी मेज पर चाय पीने बैठे। भन्नन जी ने पाव रोटी निकाली, एक पाव रोटी हरीश भी ले आया था। कौशल ने उन्हें बराबर टुकडो मे काटकर सबके सामने रख दिया।

पहले दिन कुछ मालूम नही था, आज जानबूझकर प्रेम के साथ भोजन करना पडित जी की परीक्षा थी। वे उसमे सफल हुए।

कौशल दाल-रोटी बनाने के उद्योग मे लगा। हरीश ने कहा—"प्रेम

चलो तुम्हे अस्पताल में दिखा लाता हूँ ।"

"नही अब बिलकुल ठीक हूँ मै ।"

"बीमारी को सिर उठते ही दबा देना चाहिए ।"

"काम पर देर हो जायगी । शाम को अगर जरूरत पडी तो चलेंगे ।"

भन्नन जी ने हाथ मे थैला उठाया और चप्पलो मे पैर खोसे, हरीश बोला—"क्यो पडित जी ?"

"धीरे-धीरे बबई से जान-पहचान बढानी चाहिए न ?"

"कही भटक गए तो ?"

"गिरकर ही तो चलना सीखा जाता है ।"

कौशल बोला—"आपकी रोटी ?"

"यही रख देना ।"

"करीम चाचा को दे जावेगे ?"

भन्नन जी सकट मे पडे-पडे कुछ सोचने लगे । हरीश बोला—"अरे पडितजी, फिर पाखड के दल-दल मे फँस गए ।"

"नही मै सोच, रहा हूँ दूसरी बात । अगर मैं जल्दी ही आ गया तो ?"

"तो गरम-गरम खाकर ही जाइए न ?"

"नही, मुझे इतनी जल्दी खाने की आदत नही है ।"

कौशल बोला—"यहाँ पर इस कबाट मे रख जावेगे इस टिफन कैरियर के डिब्बे मे ।"

भन्नन जी दादर मेन रोड पर आए और बाईं ओर मुडकर सीधे स्टेशन को चले । थोडी ही दूरी पर था वह स्टूडियो । भन्नन जी ने उस कमरे पर नजर डाली जहाँ उनकी किरसन जी से पहली भेंट हुई थी । वह चारपाई खाली थी । वे निराश नही हुए । स्टूडियो का दरवाजा खुला था । वे उधर चल दिए ।

आज उनकी चापो मे कोई झिझक नही थी । किरसन जी के नाम

की चाबी उनके हाथ लग गई थी । दरवाजे पर सिपाही ने पूछा—"कहाँ जाओगे ?"

"किरसन जी ने बुला रखा है, कहाँ हैं वे ?"—भन्नन जी ने बिना किसी दुविधा के कहा।

"मै क्या जानूँ कहाँ है ? यह थैला यही फाटक पर ही जमा कर जाओ।"

"क्यो ?"—अकडकर भन्नन जी बोले।

"क्या मालूम किसी फिलम की रील का डिब्बा गोलकर ले जाओ तुम इसमें।"

भन्नन जी का मुँह छोटा-सा हो गया । उन्होने सोचा—"ठीक ही कहता था कौशल अगर मेरे पतलून पहनी होती तो यह थैला हाथ मे न रहता । फिर क्या मजाल था इसकी जो मेरी बेइज्जती कर सकता।" वे सिपाही के पास गए।

सिपाही ने थैले को हाथ मे लेते हुआ—"क्या है इसमें ?"

"देखो सिपाही जी, बिना पहचाने ही मुँह से सडे-गले लफ्ज निकाल देना चतुराई नही है।"

जमीन पर सुरती की लकडियाँ थूककर सिपाही बोला—"हक-थू ! क्या कहूँ फिर मिस्टर ! 'दिलदार' फिलम के गानो की तीन रीले गायब हो गई यहाँ से। क्या चूहे घसीट ले गए या कबूतर उडा ले गए ? अरे यहाँ तो सब तुम्हारे ही जैसे जेंटलमैन ही जैंटलमैन तशरीफ लाते हैं। मालिक हम पर शक करते है। यहाँ पर बैठकर तमाखू का रस निगलते रहने की तनखा थोडे मिलती है हमे।"

भन्नन जी को इस बात का बडा धीरज हुआ आखिर एक तो मिला सिनेमा कपनी में उनकी तरह तमाखू खानेवाला । सुरती की पुडिया जेब से निकालकर उन्होने कहा—"लो पहले सुरती खा लो, ताजी बनी है अभी आज की।"

हँसकर सिपाही ने एक चुटकी सुरती लेकर मुँह मे रखी और

पूछा—"क्या मेक-अप मे काम करते हो तुम ?"

बडी घृणा से मुँह बनाकर भन्नन जी ने कहा—"मैं रायटर हूँ, स्टोरी रायटर ।" उन्होने थैले मे अपनी किताबे निकालकर उसके हाथ में रखी ।

"तो क्या मेक-अपवाला कोई छोटा आदमी है ? मैं कहता हूँ फिलम का सबसे बडा बादशाह वही है । मरद को औरत, औरत को मरद, बुड्ढे को जवान, जवान को बुड्ढा, गोरे को काला, काले को गोरा, बीमार को तदुरुस्त, तदुरुस्त को बीमार बना देनेवाला जादूगर वही है । बिना उसकी कारीगरी के कैमरा, साउड—डायरेक्टर-प्रोडयूसर सब ठप रह जाते हैं ।"—उसने उन किताबो को हटा दिया ।

भन्नन जी ने फिर वे किताबे उसकी तरफ बढाईं । वह बोला—"अरे भाई, रखो इन्हे । अगर ऐसे पढे-लिखे होते तो क्या इस फाटक पर अपनी कब्र बनाते । थैला यही रख दो, जाओ भीतर । किरसन जी लगा रहे होंगे मनका किसी प्रोड्यूसर या डायरेक्टर के । उनका और काम ही क्या है ?"

बहुत खुश होकर भन्नन जी आगे बढे और तुरत ही किरसन जी भी मिल गए उन्हे । उन्होने हाथ जोडे ।

किरसन जी ने दौडकर हाथ मिलाया—"आ गए आप ? मै याद ही कर रहा था आपको । क्या नाम बताया था आपने अपना ?"

"जी मेरा नाम है भानुदेव शर्मा ।"—उन्होने अपनी किताबे उनकी तरफ बढाई ।

किरसन जी भी उन्हे स्वीकार करने को तैयार नही हुए—"बात ऐसी है मुझे हिन्दी तो आती ही नही । इन्हे रखिए आपके स्टोरी रायटर होने में मुझे जरा भी शक नही है । मैंने तो पहले ही आपसे कह दिया है । आप जरूर कोई जबर्दस्त स्टोरी लिखकर लाए हैं । मै फिर कहूँगा बबईवालो के दिमाग का दिवाला निकल गया । वे अभी बीस साल तक कोई नई स्टोरी नही लिख सकते । जो लिखेगा, बाहरवाला

ही लिखेगा ।"

भन्नन जी के सिर से पैर तक बिजली सुरसुराने लगी—"किताब रख तो लीजिए किसी और को दे दीजिएगा ।"

"अभी रखिए मैं बताऊँगा आपको तरकीब । आठ दर्जन प्रोड्यूसरो को मैं जानता हूँ जिन्हे अच्छी स्टोरी की सख्त जरूरत है । वे अच्छा पैसा खर्च करने को तैयार है ।"

"मुझे मिला दीजिए उनसे ।"

सिर से पैर तक किरसन ने भानुदेव शर्मा को देखा और शायद उनके उस हुलिए का समर्थन नही किया उन्होने । वे बोले—"देखिए भानुदेव शर्मा जी, फिल्म की दुनिया पब्लिसिटी की बुनियाद पर ही खडी है । चीज कुछ न हो, उसका शोर मचा देने की जरूरत है । खूब शोर मचा दिया जाय तो फिर चीज मे भी बात पैदा हो जाती है । मेरा मतलब हरगिज़ ऐसा नही है कि आपके पास कमजोर चीज है । मुझे पहले आपकी पब्लिसिटी करनी है ।"

भन्नन जी ने बडी विनय से उन्हे हाथ जोडे ।

"पब्लिसिटी के लिए पैसा चाहिए । देखते नही आप, जितने रुपए मे फिल्म बनती है, उसका आधा तक पब्लिसिटी मे खर्च कर दिया जाता है । वह कही मिट्टी में नही मिल जाता—सब दूना-चौगुना होकर वापस आ जाता है ।"

"बिलकुल ठीक कह रहे हैं आप । जो जितना बढ-बढकर बाते कर सकता है, वही सफलता पाता है ।"

"कुछ आप यह अपनी फोटो ठीक करेगे ।" किरसन जी ने अपनी अँगुली से भन्नन जी के सिर से पैर तक एक रेखा खीचकर कहा—"और कुछ मैं इधर-उधर दौड-धूप करूँगा ।"

"हाँ मैं कोट-पतलून बनाने की सोच रहा हूँ ।"

"कोट की कोई जरूरत नही । दो पतलून और दो कमीज बना लीजिए । जो मैली हुई उसे लाड्री में डाल दिया । छै घटे मे भी आपके

अर्जेंट कपडे लाँड्री से साफ-चिट्टे होकर मिल जायेंगे ।"

"अच्छी बात है ।"

"लेकिन एक अडचन है । मेरे प्रोड्यूसर का रुपया आया नही है । आपकी पब्लिसिटी के लिए मुझे सभी जगह जाना पडेगा । स्टूडियो कोई बम्बई के इस सिरे पर है तो कोई उस सिरे पर । ट्राम और बस में जाकर नही होती पब्लिसिटी उसके लिए पहले अपनी मोटर चाहिए नही तो फिर हारे दरजे टैक्सी । आज ही जाकर मुझे कम-से-कम बीस प्रोड्यूसरो से यह कह देना चाहिए कि मशहूर स्टोरी राइटर श्री भानुदेव शर्मा बम्बई आए हैं । सबको दौड लगाकर उन्हे दबोच लेना चाहिए । जो पहले उन्हे साइन करा लेगा उसी पर सोना बरस जायेगा । और हाँ, अखबारो मे भी छपा दूंगा मैं कि आप यहाँ आए है कई अनोखी स्टोरियाँ लेकर लेकिन अभी आपने किसी प्रोड्यूसर से मिलने से इनकार किया है । आप यहाँ की इडस्ट्री की हालत की स्टडी कर रहे है ।"

भन्नन जी के मुख पर कुछ बेचैनी सी झलकी ।

किरसन जी ने उनकी छाती मे अँगुली लगाकर कहा—"पब्लिसिटी का स्टट है यह भी एक । अखबार के इश्तहार मे दो सौ रुपए चाहिए कम-से-कम । मैं फोकट मे एडीटर की तरफ से छपा दूंगा । सब एडीटर मेरे यार है । लेकिन भानुदेव जी टैक्सी के लिए कम-से-कम सौ रुपए का एक हरा नोट चाहिए ।"

भानुदेव जी घबराए उन्होने सोचा—"सौ रुपए तो यहाँ कुल जमा हैं । इन्हे दे दूँ तो फिर हुलिया कैसे ठीक होगा ।"

भानुदेव जी को चुप देख, उनकी गाडी अटकी समझ किरसन जी बोले—"देखिए साहब, रुपया खर्च कर ही तो कोई रुपया कमा सकता है । सौ न सही, कुछ दूर बस या ट्राम से ही सही लेकिन स्टूडियो के फाटक पर बिना टैक्सी से उतरे काम नही चलेगा । यहाँ तो बीडी-से-बीडी सुलगाकर बात कर लेंगे, वहाँ तो बढ़िया-से-बढिया सिगरेट जेब से निकालनी पड़ेगी ।"

"मै तो बीडी-सिगरेट कुछ नही पीता।"

"फिर क्या! कुछ तो करते ही होगे।"

"सुरती खाता हूँ।"

"खबरदार! यह चौकीदारो और चपरासियो का धदा मत करना किसी प्रोड्यूसर के सामने। यह जगह-जगह थूकने की बडी गदी आदत है। मैं कहता हूँ इस आदत को जल्दी से जल्दी आपको सिगरेट के धुएँ में बदल देना पडेगा।"

"पान की सुरती?"

"उससे सिगरेट क्या मँहगी रहेगी? अपना कोई सस्ता ब्राड पीना, देने को बढिया रख लेना। लेकिन असली बात तो रह गई भानुदेव जी, पचास रुपए निकालिए आप टैक्सी के लिए, आपके काम के लिए मैं अपनी जेब से खर्च नही कर सकता। उधार जरूर दे देता आपको लेकिन मजबूरी है।"

भन्नन जी ने कहा—"अभी पचास रुपए तो नहीं है मेरे पास।"

"कितने है फिर? मै सोच रहा था एक ही दिन में बम्बई की तमाम लम्बाई-चौडाई में आपका नाम गुँजा देता। थोडा-थोडा कर ही सही फिर। कितने रुपए दे सकते हैं आप इस वक्त?"

"बीस रुपए दे दूँगा।"

"तबीयत खट्टी कर न देना। न तो मैं उधार माँग रहा हूँ, न मुझे अपने काम को चाहिए। खुशी से दे रहे है न आप?"

"हाँ-हाँ लीजिए।"—भन्नन जी ने दो दस-दस के नोट निकालकर किरसन जी को दे दिए।

"चलिए चाय पिएँ।"

भन्नन जी ने कहा—"चाय की तो अभी कोई जरूरत नही है। जरा स्टूडियो के भीतर शूटिंग दिखा दीजिए।"

"शी' 'ट्!" दाँतो के नीचे जीभ दबाकर किरसन जी ने कहा—"इतने बडे स्टोरी राइटर आप, क्या छोटी-सी ख्वाहिश रखते हैं। शूटिंग

देखने के लिए ललचाई हुई आपकी नजर को देखकर लोग कहेंगे—यह किसी गाँव से भागकर बम्बई आया है। धीरज रखिए, शूटिंग देखेंगे आप। अपनी ही स्टोरी का देखेंगे, ऐसा क्यो नही सोचते ?"

"लेकिन कुछ लोग कहते हैं, शूटिंग देख लेने से स्टोरी की बनावट शीघ्र ही समझ मे आ जायगी।"

"कोई बेवकूफ ही कहेगा ऐसा ?"

भन्नन जी को हरीश की बात याद आई।

किरसन जी ने कहा—"अरे शेक्सपीयर के 'हैमलेट' की शूटिंग हुई, डिकेंस का 'ए टेल ऑफ टू सिटीज' का सिनेमा बना, टॉलसटॉय का 'एना कैरेनिना' सेलुलॉइड पर आया—क्या इन सबने शूटिंग देखी थी ?"

भन्नन जी इतने बडे-बडे नाम एक साथ ही सुनकर घबराए सम-झने लगे—'बडे पढे-लिखे जान पडते है ये।"

किरसन जी कहते जा रहे थे—"देखिए साहब, जब मास्टर माइड कहानी लिखता है तो उसी हिसाब से कैमरा फिट किया जाता है, वैसे ही माइक, उसी तरह सेट बनाया जाता है और वैसे ही एक्टर-एक्ट्रेसो को उठना, बैठना या सोना होता है। आप स्टोरी राइटर हैं—क्या देखेंगे शूटिंग मे, आपके दिमाग के हिसाब से ही शूटिंग एरेंज होगा।"

भन्नन जी का माथा ऊँचा हो उठा।

"देखिए समरसेट् माम या इब्सन कहता है—जब नकल का खातमा होता है तभी असली आर्ट शुरू होता है। आप असली आर्टिस्ट क्या शूटिंग मे नकल करेंगे ? चलिए, आज किसी की शूटिंग नही है। एक पार्टी के पास रॉ मैटीरियल नही है और दूसरी का पैसा आ रहा है।"—किरसन जी ने भन्नन जी के कधे पर हाथ रखा और दोनो बाहर को चले।

भन्नन जी बोले—"मैंने एक स्टोरी शुरू की है। आपने कहा था—" वे रुक गए।

भौंहे जोडकर किरसन जी बोले—"क्या कहा था मैंने ?"

"यही कि स्टोरी लिखने से पहले प्रेम करना होगा कि कहानी में

जान पड़े।"

"साफ-साफ कहिए न अपना मतलब।"

"आपने कहा था कला-बाला को हीरोइन बनाने लायक कोई स्टोरी लिखो। कलाबाला से मेरा परिचय करा दीजिए कि उन्हे ख्याल में रखकर स्टोरी लिखूं।"—भन्नन जी ने फाटक के सिपाही से अपना थैला ले लिया और किरसन जी के कदम से कदम मिला लिए।

किरसन जी का हँसना अभी जारी ही था—"देखिए भानुदेव जी शर्मा कही सस्ता प्रेम कीजिए एक्ट्रेस का प्रेम तो बडी मँहगी चीज है। आप मुझे अपना बैंक बैंलेस दिखा सकते हैं?"

भन्नन जी बगलें झाँकने लगे। फिर साहस कर बोले—"वे हीरोइन बन जायेंगी यह क्या घाटे की बात है?"

"हाँ भानुदेव जी मैंने मजाक की थी। लेकिन बात ऐसी है प्रोड्यूसर का रुपया अभी आया नही है और मोतीबाई को तो आपने देखा ही है, कैसी जालिम औरत हैं अरे बाप रे! बिना पैसा लिए उसने कलाबाला को स्टूडियो में भेजने से कतई इनकार किया है। कल तीन बार उसने मोटर लौटा दी। एक वक्त तो मै खुद गया था। मेरे ऊपर बिगड पडी बोली, खबरदार अगर फिर आए तो मै तुम्हारे ऊपर कत्थे की हँडिया उलट दूँगी।"

भन्नन जी धोती से मुँह ढक हँसने लगे।

"अगर आपके पास चार-पाँच सौ रुपए है तो लाइए मुझे उधार दे दीजिए एक आने के टिकट पर रुक्का लिखा लीजिए। मै आपके सामने मोतीबाई को देकर कलाबाला को ले आऊँ कि शूटिंग शुरू हो जाय।"

भन्नन जी सिर पर हाथ रख सोचने लगे।

"लाइए फिर—कलाबाला से भी आपका परिचय हो जायगा और शूटिंग भी फिर बडे रोब से आप डायरेक्टर के पास की कुरसी पर बैठ कर देख लेंगे। मेरी भी इज्जत रख लेगे आप और जरूर प्रोड्यूसर साहब की भी गुड बुक्स मे आपका नाम चढ़ जायेगा। अगर यह पिक्चर

पास हो गई तो वे जरूर एक स्टोरी का आपके साथ कट्राक्ट कर लेगे।" —किरसन जी बोले भन्नन जी के दोनो कधो पर हाथ रखकर।

"क्या बताऊँ किरसन जी, यहाँ परदेस में हूँ। घर की बात होती तो जरूर कुछ इन्तजाम कर लेता।"

"एक्सप्रेस टेलीग्राम भेज दो न।"

'नही किरसन जी, तार भेजने से कुछ न होगा।"—बडी निराशा के साथ भन्नन जी ने कहा।

ग्यारह

किरसन जी से विदा लेकर सीधे स्टेशन की ओर को चले भन्नन जी। मन मे सोचने लगे—"घर से कमाई करने की नियत से बम्बई आया था। किरसन जी सहायक होगे—समझा था। ये तो दूसरी ही बात कह रहे है। लेकिन कुछ तत्व तो इन्होने बहुत बढिया बताए है। मेरी समझ में वे सफलता के मत्र है। शूटिग देखकर क्या होगा ? असली कलकार तो स्रष्टा है। नकल तो स्कूल के विद्यार्थी करते है।"

यही सोचते-सोचते भन्नन जी दूसरी स्टूडियो की इमारत के पास पहुँचे। पहले दिन किस प्रकार उसने आकर्षित किया था। आज भन्नन जी अपने मे स्थिर रह गए—"नही, मेरे मस्तिष्क की कल्पना पर ही उस स्टूडियो के सारे व्यापार है। अब मैं किसी के आग्रह पर घुसूँगा उसके भीतर, इस तरह एक क्षुद्र कीडे की तरह नही।"

कलाकार जागा उनके भीतर—"मै लेखक हूँ, मेरे अन्दर अपनी कल्पना है। मैं नेता हूँ अनुसरण नही करता।"

वे उस स्टुडियो को मलबे के ढेर के समान तुच्छ समझ कर आगे बढ गए। रेल के पुल पर चढ सीधे उस पार उतर गए। तबीयत ने आगे घूमने के लिए जोर मारा। रास्ता अच्छी तरह याद करते हुए आगे बढे। एक छोटी-सी इमारत के द्वार पर लिखा देखा—"राग-रग प्रोड-क्शस ऑफिस।"

भन्नन जी रुक गए वहाँ पर। ग्राउड फ्लोर पर ही था ऑफिस, प्रवेश-द्वार पर एक नीले रग का परदा पडा था। भन्नन जी ने वहाँ जाकर द्वार पर अपनी अँगुलियाँ बजाई।

भीतर से आवाज आई—"आइए, कौन साहब हैं?"

भन्नन जी ने भीतर जाकर देखा। एक क्लीन शेव मोटे-ताजे सज्जन कुरसी मे बैठे मेज पर कुछ लिख रहे थे। चिकना माथा दूर चोटी तक फैल गया था। सफेद कमीज और धोती पहने हुए थे। उन्होने दोनो हाथ जोड दिए।

उत्तर देकर वे बोले—"कहाँ से आए है आप? क्या काम करते है?"

"मैं हिन्दी का एक कथाकार हूँ। भानुदेव शर्मा मेरा नाम है।"

एक कुरसी दिखाकर वे बोल—'हाँ, मुझे आपका नाम याद पडता है, एकाध किताब जरूर पढी है मैंने आपकी।"

"सिर्फ एकाध ही किताब?" बडे आश्चर्य के साथ कुर्सी पर बैठते हुए भन्नन जी बोले—"अजी मैं दर्जनो किताब लिख चुका हूँ।"

"लिख चुके होगे। हमे अपने काम से ही फुरसत कहाँ है।"

"आपका शुभ नाम?"

"मुझे टी० टी० शर्मन् कहते है। मै ही राग-रग प्रोडक्शस का प्रोड्यूसर हूँ।"

"ओहो! धन्य भाग्य!" भन्नन जी ने तपाक से उनसे हाथ मिला-कर कहा—"आपके और मेरे नाम में सिर्फ आध ही हरूफ का फर्क है। मैं उत्तर भारतीय हूँ, शायद आप भी वही के हैं।"

"हो सकता हूँ। कई पीढी पहले हमारे पूर्वज वहाँ से आए थे। अब

तो बम्बई ही मेरी जन्म-भूमि है।"

"मैं भी यहाँ सिनेमा में कहानी लिखने के लिए आया हूँ।"

नाक-भौह सिकोडकर शर्मन् जी बोले—"हिन्दी के एक लेखक यहाँ आए थे। बडी नैतिकता का ढोल पीटते थे वे अपने लेखो में।"

"अजी एकाध किसी छोटे-मोटे लेखक का नाम लेकर आप सारे हिंदी-साहित्य को बदनाम नही कर सकते।"

"अजी कुछ भी कहे आप। हिंदी-साहित्य के बडे लेखक भी आए यहाँ। सबके पैर उखड गए, कोई जम नही सका, सभी भाग खडे हुए।"

"इसका अर्थ उनकी अयोग्यता कदापि नही है। सिनेमावालो के आदर्श का पैमाना बहुत नीचा पाकर ही वे लौट गए होगे।"

"यह तो अगूर खट्टे होने की बात है। इडस्ट्री के भीतर कुछ पा न सके तो उसे बदनाम कर चल दिए। गुणी लोगो को सब जगह भलाई दिखाई देती है, लेकिन निर्गुणी सबको बदनाम करते फिरते हैं।"

"मेरे मान्य मित्र, मै जानता हूँ आपका हिंदी-साहित्य से कुछ विशेष परिचय नही है। आपकी जो यह आलोचना है, यह केवल सुनी-सुनाई बात पर ही आधारित है। हिन्दी-साहित्य अब तो सारे भारत की आत्मा है। उस राष्ट्रवाणी मे केवल उत्तरी भारतीय की ही आवाज नही है। उसमे पजाबी, बगाली, गुजराती, मराठी, द्रविड, पहाडी सभी देशवासियो की वाणी और भावना का योग-दान है।"

शर्मन् जी कुछ ढीले पडे। उन्होने सिगरेट निकालकर भन्नन जी की तरफ बढाई—"लीजिए, सिगरेट पीजिए।"

भन्नन जी ने हाथ जोड दिए। शर्मन् जी बोले—"चाय मँगाऊँ?"

उन्होने मेज पर रखी घटी बजाई। अलाउद्दीन के चिराग के जिन्न की तरह का एक लम्बा-चौडा मनुष्य, भारी साफा सिर पर लपेटे, चौडी आस्तीन का कुरता पहने सामने आ खडा हो गया।

शर्मन् जी ने कहा—"दो प्याले चाय।"

वह चला गया।

शर्मन् जी बोले—"देखिए साहब, आपके उत्साह को घटा देने की मेरी जरा भी मशा नही है। सिनेमा की कहानी लिखना हँसी-खेल नही है। इसके लिए दिल और दिमाग दोनो की जरूरत है।"

"पास मे पैसा भी हो और इडस्ट्री के भीतर रिश्तेदारी भी जरूरी।"

"नही इस बात को नही मानता मैं।" तुरन्त ही अपनी जबान बदल दी उन्होने—"हाँ कुछ पैसा भी चाहिए। तीन फिल्में बना चुका हूँ मैं। पहली फिल्म बड़ी बढिया बनी। क्या थीम, क्या स्टोरी, क्या एक्टरो का चुनाव, क्या गाने, क्या एक्टिंग, क्या डायलॉग, सब एक-से-एक बढिया। लेकिन क्या बताऊँ ? पैसा जो कुछ था, सब पिक्चर में ही लग गया। पब्लिसिटी के लिए कुछ भी न रहा, इसलिए वह न चल सकी। फिर भी अपना खर्चा ले ही आई।"

"दूसरी फिल्म तो चली होगी ?"

"अजी सेंसर ने उसका बडा जरूरी हिस्सा काटकर रख दिया।"

"नही चली वह भी ?"

"अजी जब दिल ही निकालकर अलग रख दिया तो फिर चलती क्या ?"

"तीसरी तसवीर ?"

"आधी बनकर डिब्बो मे बंद पड़ी है, यह देखिए अलमारी में सब वही है।"

भन्नन जी ने उधर देखकर कहा—"कब तक पूरी हो जायेगी यह ?"

"अभी कहाँ से ? रुपया खतम हो गया बीच ही में अब लिमिटेड कम्पनी बना रहा हूँ।"

सेवक ने दो प्याले चाय के लाकर रखे मेज पर। शर्मन् जी ने कहा—"देर लगा दी ?"

"होटलवाला कही चला गया था।"—बडी लापरवाही से कहकर वह विदा हो गया।

"कैसी स्टोरी लिखते है आप ?"

"सभी तरह की।"

"बात ऐसी है हिंदीवालो की न किसी कम्पनी मे आवाज है न पूंजी। न कोई हिदी की बड़ी एक्ट्रेस या एक्टर ही है, न कोई डायरेक्टर —फिर शर्माजी, हिदी चले भी तो कैसे ? कुछ धार्मिक फिल्मो में थोडी-सी हिंदी चलती है, पर वहाँ भी राम ही मालिक है। लेकिन आप धीरज रखे। साहस से काम करनेवाले के लिए कोई-न-कोई राह निकल ही आती है।"

भन्नन जी ने बहुत निराश होकर पूछा—"एक यहाँ कोमल जी नामक व्यक्ति थे। सिनेमा मे काम करते थे। आप को तो नही मालूम है उनका पता ?"

"अजी यहाँ सिनेमा के भीतर हजारो कोमल जी और कठोर जी है—जो दिन-रात दौड रहे है। इन हजारो दौडनेवालो मे सिर्फ पहला-दूसरा और तीसरा इन तीनो के ही नाम पब्लिक जानती है। बाकी सब नाई जैसे बाल काटकर कूडेदान मे डाल देता है, ऐसे ही समझो।"

"कोई उपाय बताइए फिर !"—भन्नन जी ने चाय का प्याला खाली कर दिया।

"क्या उपाय बताऊँ ? हम सब टटोल ही रहे है भाई। तकदीर ने कभी किसी के गले मे जयमाला पहना दी तो उसका नाम हो गया, उसी पर बरस पड़े फिर दाम भी।"—उन्होने भी प्याला मेज पर रख घंटी बजा दी।

नौकर आकर प्याले उठा ले गया।

"कभी-कभी दर्शन देते रहिएगा। दस बजे से तीन बजे तक मैं यहाँ मिलता हूँ।"

भन्नन जी को इन लफ्जो में उठकर चल देने की हरी झडी दिखाई दी। वे इच्छा न रहने पर भी उठे। अपने थैले में से उन्होने अपनी लिखी हुई किताबे निकालकर शर्मन् जी की मेज पर रखी—"ये है मेरी लिखी हुई किताबो में से दो-चार, बाकी मैने मँगा रखी है।" उन्होने

समझा था शायद शर्मन् जी कुछ आकृष्ट होकर बैठ जाने को कहेगे ।

लेकिन शर्मन् जी ने बिना उन किताबो पर कोई नजर डाले ही किताबे उनके झोले मे डालते हुए कहा—"शर्मा जी बडा अफसोस है मुझे, हिंदी बोल तो लेता हूँ मैं लेकिन पढ़ने की जरा भी प्रैक्टिस नही है।"

"कोई चिंता नही, अभी मेरे पास सिर्फ एक-ही-एक कापी है इनकी।"

शर्मन् जी उठकर उन्हे पहुँचाने दरवाजे तक आए—"लेकिन हिंदी आने पर भी कौन डायरेक्टर आपकी इन किताबो को पढने की तकलीफ करेगा ? यहाँ तो जबानी जमा खर्च चाहिए। कलम से नुकीली आपकी जुबान होनी चाहिए। उसी से किसी डायरेक्टर या प्रोड्यूसर पर आप काला कबल डाल सकेगे।'

"आपने बड अनुभव की बाते दी, धन्यवाद, नमस्ते।"

"ननस्ते।"

भन्नन जी शर्मन् के साथ की बातचीत मे कुछ पाकर चले या खोकर, तय नही कर सके। सडक पर आकर सीधे डेरे को कदम बढाए। भूख लग रही थी।

जाते-जाते कुछ दूर निकल गए। ऐसा जान पडा उन्हे कि रास्ता भूला गया। एक मनुष्य से उन्होने पूछा—"दादर रेल के स्टेशन को यही रास्ता है ?"

मनुष्य हँस कर बोला—"यह तो शिवा जी पार्क है। बिलकुल दूसरी दिशा में आ गए तुम। ऐसे सीधे चले जाओ।"

भन्नन जी उसके बताए हुए मार्ग पर चलने लगे।

पूछते-पूछते अत मे आ ही गए वे स्टेशन के पुल पर वहाँ से रास्ता साफ उत्तर गया था उनके मन मे। दादर मेन रोड पकड ली उन्होने और कुछ ही देर मे पहुँच गए वे नबर ३ पी में।

बेनू प्रोडक्शस का ऑफिस खुला हुआ था। हरीश टेलीफोन हाथ में लेकर किसी से कुछ कह रहा था। भन्नन जी ने उसके साथ कोई बात-

चीत करनी उचित नही समझी । रिटायरिंग रूम में बडा हो-हल्ला सुनाई दे रहा था । उन्होने उसके भीतर दृष्टि नही डाली । आवाजो से ही अंदाज लगाया । एक व्यक्ति कुछ सुना रहा था और शेष उसका आनद ले रहे थे । तीसरा कमरा बद था, बाहर से ताला पडा था ।

भानुदेव जी अपने कमरे मे आए तो देखा, मेज के सामने खडे होकर करीम चाचा स्टोव में पंप कर रहे थे । स्टोव अपनी पूरी ताकत से भबक रहा था ।

भन्नन जी बोले—"चाचा जी नमस्ते ।"

करीम चाचा ने उनकी तरफ मुँह कर जवाब दिया—"सलाम पडित, कहाँ रहे सुबह से ?"

"चला गया था चाचा जी, कुछ लोगो से मिलने ।"

"किन से ? नाम तो बताओ । मैं सबको जानता हूँ, सब की असलियत पहचानता हूँ ।"—करीम चाचा की चाय खौल गई थी, उन्होने उसमे पत्तियाँ डाल दी ।

भन्नन जी ने किरसन जी को तो गोल कर दिया और बोले—"कोमल जी का तो कही पता नही मिला । एक साहब मिले राग-रंग प्रोडक्शस के ऑफिस में, शर्मन् जी उन्होने अपना नाम बताया ।"

कुछ हँसकर चाचा जी चाय बनाने लगे—"मै जानता हूँ उन्हे। क्लैप स्टिक बजाते थे कई डायरेक्टरों के साथ, अब प्रोड्यूसर बन गए हैं ।"

"तीन फिल्में बना ली हैं ।"—बडे उत्साह के साथ भन्नन जी ने कहा ।

"डिब्बे बना लेने से क्या होता है ? पंडित अभी यहाँ रहो तो तुम्हें पता चलेगा । जैसे स्टोरी की किताब लिख लेने से कुछ नही होता, ऐसे ही डिब्बे भर लेने से भी कुछ नही मिलता । फिल्म तो उसे कहते हैं जो कम-से-कम दस हफ्तो तक तो चलती रहे, क्यू लग जायँ बॉक्स ऑफिसों में टिकट के लिए ।"

"एक फिल्म खर्चा वसूल कर लाई कहते थे।"

करीम चाचा ने चाय बनाई चार गिलासो मे—"अभी आता हूँ मैं।" एक ट्रे मे चारो गिलास रखकर ऑफिस मे ले गए।

हरीश ने आकर पूछा—"क्यो पडित जी, कही रास्ता तो नही भूले ?—कहाँ-कहाँ गए थे ?"

करीम चाचा ने आकर जवाब दिया—"ये गए थे उस बडल के यहाँ, वह राग-रग वाला जिसने उस मारवाड़ी की अच्छी-खासी रकम ऐंठ ली और डिब्बे बनाकर रख दिए।"

"अपने लौडे को हीरो बनाया था उन्होने ?"

"हाँ-हाँ, अगर उनके बहू होती तो वे उसे हीरोइन बना देते।"

"स्टोरी, गाने, डायलॉग, डायरेक्शन, एडिटिंग सब पर कब्जा अपना ही, किसी दूसरे बिचारे के लिए कुछ नही छोडा।"

"पैसा लगाने के लिए तो दूसरे पर रखा न ? तमाम रुपए तरह तरह के बहाने से हडप गए। अब लिमिटेड कपनी बनाने के फेर में है।"

"ऐसे बेवकूफ अब कहाँ से मिल जावेगे।"

करीम चाचा ने तीन गिलास चाय और तैयार कर ली। हरीश बोला—"पडित जी ने तो अभी खाना ही नही खाया है।"

करीम चाचा ने बुझे हुए स्टोव को फिर जल्दी से पप कर जलाने की कोशिश की। वह ठडा पड गया था, लेकिन तेल जलने लायक गर्मी थी उसमें। उन्होने थोडी सी हवा निकालकर शीघ्र ही उसमें से गैस निकाल ली—"लो पडित, एक चीज भी गरम हो तो कोई मलाल नही रहता। मैं दाल गरम कर देता हूँ।" उन्होने दाल का डिब्बा स्टोव पर जमा दिया और रोटी एक तश्तरी में रखकर उनके आगे बढा दी।

पडित जी के भीतर के पुराने अभ्यास ने उन्हे धिक्कारना आरभ किया। भन्नन जी ने उसे डाँट दिया—"चुप रह मूर्ख ! तू मेरी राह का रोडा है। तू मनुष्य के भीतर की जाति देखता है, उसकी उदारता और प्रेम पर तेरी दृष्टि नही। अरे ! केवल एक ही जोड़े से सारी सृष्टि

पर की मानवता फैली है । जाति क्या है ? देश और जल-वायु की विभिन्नता से हम सब एक-दूसरे मे रग, आचार-विचार, भाषा-वेश और बोलचाल में विलग हुए हैं ।"

करीम चाचा ने अपना टिफिन कैरियर खोलकर कहा—"तरकारी लोगे पडित ? एक होटल से खरीद लाया था बेनू बाबू के लिए । वे आज घर से ही खाकर आ गए थे, सब-की-सब बची है ।"

भन्नन जी ने हरीश की तरफ देखकर कहा—"चाचा जी, दाल तो काफी है ।"

"हाथ लौटाने को एक दूसरी चीज तो चाहिए ही । कुछ न हुआ तो मैं एक नमक की ककर रख लेता हूँ । हाथ का एगल बदलने के लिए ।"

"वाह ! चाचा, क्या एंगल कहा आपने ?"—हरीश उनकी पीठ में हाथ मारकर बोला ।

"सिनेमा की दुनिया में है न ! एक ही फोटो को एक ही एगल से लेने मे कुछ मजा नही आता । कई एगलो से वही एक फोटो कई रंग दे देती है । एक दाल से रोटी खाना क्या है ? सिर्फ एक एगल ! लेकिन पडित, मिर्चा ज्यादे मालूम देता है इसमें । मिर्चा तो खाते हो न ?"

"हाँ खाता ही हूँ ।"—तरकारी की रगत देखकर भन्नन जी के मुँह में पानी भर आया । उन्होने रोटी का टुकडा तोड लिया पहले ही ।

लेकिन चाचा जी ने तरकारी उनकी तरफ बढाते-बढाते हाथ रोक लिया—"और प्याज खाते हो ?"

भन्नन जी हाथ से मना करते हुए बोले—'नही चाचा जी प्याज नही खाता ।"

"हाँ, अभी नए-ही-नए आए हो न बबई मे, इसी से पूछ लिया मैने । लेकिन बंबई में दो चीजे जरूरी है, होने को तो एक और भी है पर वह महँगी पडेगी ।"—करीम चाचा ने दाल का डिब्बा सडसी से उठाकर भन्नन जी के आगे रख दिया ।

भन्नन जी ने वह तरकारी में डुबाने को तोड़ा हुआ रोटी का टुकडा

दाल में छोडकर पूछा—"वे दो चीजे कौन चाचा ?"

"चाय और काँदा।"

'काँदा क्या हुआ ?"—भन्नन जी ने पूछा।

"काँदा यही प्याज और क्या ? दोनो तदुरुस्ती के लिए जरूरी है।"

हरीश ने कहा—"पडित जी कल आपने भजिया तो खाई थी। उनमें था प्याज।"

भन्नन जी ने मन मे सोचा—"सिरे का कही कोई पता नही है। आरभ न जाने कहाँ से हो रहा है। मैं कर्त्ता नही हूँ, केवल निमित्त मात्र हूँ।"

चाचा जी ने तरकारी का बर्तन जलते हुए स्टोव में रख दिया था।

भन्नन जी बोले—"गोश्त नही पडा होगा न इसमें ?"

"नही पडित, गोश्त नही।"—करीम चाचा ने वह तरकारी का डिब्बा भी उनके आगे रख दिया।

भानुदेव शर्मा के मन में कोई कह रहा था—"घृणा मास से होनी चाहिए, वह घोर हिंसा है। मनुष्य से क्या घृणा ? शाकाहार से क्या घृणा ? प्याज से क्या घृणा ? वह भी तो एक शाक ही है। घृणा करने को पहले टिमाटर भी नबर एक का पापी ठहराया गया था। लेकिन कुछ अपने रग से कुछ अपने स्वाद से और कुछ डॉक्टरो के बताए हुए विटामिन से वह पुण्यात्माओ की बिरादरी मे शामिल हो ही गया।"

करीम चाचा ने दो गिलास चाय को तीन गिलासो में बराबर बाँटा। हरीश बोला—"चाचा, मैंने अभी पी रखी है चाय। पडित जी को दीजिए।"

"तुम भी लो उन्हें भी दूँगा।"

"बाय कसम मैंने पी रखी है।"

जबर्दस्ती करीम ने चाय का गिलास हरीश को दे ही दिया—'पी रखी है तो क्या हुआ ? चाय के लिए भी क्या पेट में जगह की जाती है।"

चाय पीते-पीते हरीश ने पूछा—"क्यो पडित जी तरकारी में मजा

आ रहा है न ?"

भन्नन जी की आँखों में आँसू भर गए थे—"हाँ खूब चटपटी है।"

करीम चाचा ने चाय का गिलास सामने रख दिया—"लो बहुत तेज है तो इसकी घूंट से बराबर कर लो । नही तो चीनी दे दूँ उसकी फकी मार लो।"

"नही कोई जरूरत नही।"

"खाली हल्ला मचाते है ये मुशी जी।"—हरीश ने चाय पीते हुए कहा।

"कौन मुशी जी है ?" भन्नन जी ने पूछा।

"मुशी दिलतोड जी।" करीम चाचा ने जवाब दिया।

"क्या करते है ये ?"—पडित जी ने फिर पूछा।

"अजी ये सब-कुछ करते है। शुरू मे गाने लिखते थे, गाने चल पडे, पब्लिक ने उठा लिए। फिर कहानी लिखने लगे मय डायलॉग के, गानो के सहारे पहली कहानी भी पास हो गई । फिर क्या था हौसला बढ़ गया—आनन-फानन में एक दूसरी कहानी ठोक दी । हाथो-हाथ बिक गई, देखते-देखते बन भी गई और चल भी पड़ी।"—करीम चाचा ने कहा।

"चार-पाँच ढोलक बजानेवाले रखते थे ये शुरू-शुरू मे, जब पब्लिक इनके पीछे नही लगी थी। बडे उस्ताद हैं। दुनिया भी तो ऐसी ही है। अपनी अकल काम में नही लाती।"—हरीश बोला।

भन्नन जी ने पूछा—"कैसी ढोलक बजानेवाले ?"

"ताली बजाकर तारीफ करनेवाले और कैसे ? दो-चार भाड़े के वाह-वाह करनेवाले अपने साथ ले जाते जहाँ गाने सुनाने जाते । गाना सुनाया नही कि वें ताली बजाकर उछल पड़ते और जमीन से आसमान तक तारीफो के पुल जोड़ देते। शुरू-शुरू मे ऐसे ही राग जमाया दिलतोड जी ने। भेडियाधसान ठहरी, अब तो सारी पब्लिक उनके साथ है।"—हरीश ने कहा।

"आए थे बेनू बाबू को स्टोरी सुनाने। बेनू बाबू तो कतराकर चल दिए और जमे बैठे है यहाँ, मिनट-मिनट मे चाय की फरमायश करने को। मैं इनके बाप का नौकर हूँ क्या ? हरीश, कह देना अगर अब चाय माँगे तो। कह देना करीम अपने घर चला गया।"

"करीम चला गया तो क्या चाय-चीनी और स्टोव भी रख ले गया जेब मे ? अरे चाचा वे स्टोरी रायटर हैं और दो ही चार महीने की देर है डायरेक्टर या प्रोड्यूसर भी बन जायेंगे । क्या बिगाड करे उनसे ? मुमकिन है शायद वे ही दे दे चास।"—हरीश ने कहा।

"अरे किस बात का चास ?" करीम चाचा ने कहा—"मर गए ऐसा चांस देनेवाले। यहाँ घर ही में साले-बहनोई, भाई-भतीजो के क्यू लगे है एक-एक फर्लांग तक। अरे पहले उनका नबर है या तुम्हारा ?"—करीम बोला।

भन्नन जी ने दाल-रोटी, तरकारी सब साफ कर दी। हरीश बोला—"पडित जी रोटी कम तो नही पड गई ?"

"नही।"—भन्नन जी ने पूर्ण तृप्ति प्रकट कर कहा। वे जूठे बर्तन उठा कर जाने लगे।

"पडित जी, बर्तन यही रख दो नही तो झगडा हो जायेगा।"—हरीश ने बलपूर्वक उनके हाथ मे बर्तन छीन लिए। वह उन्हे गुसलखाने में रख आया।

करीम ने बीडी का नया बडल निकालकर छीला। एक बीडी अपने होठो से दबाई और एक हरीश को देकर कहा—"दिया सलाई निकालो।"

हरीश ने एक दियासलाई जलाकर बीच मे रखी दोनो ने अपनी-अपनी बीडियाँ सुलगा ली। भन्नन जी ने अपनी जेब मे हाथ डालकर अपनी सुरती की पुडिया टटोली।

बाहर ऑफिस की तरफ मोटर का भोपू बजा। हरीश ने जल्दी से दीवाल पर जलती हुई बीडी का सिरा घिस दिया और वह बुझी हुई बीडी उँगली से टहोलकर जेब में रख ली। वह ऑफिस की तरफ भागा।

"अरे ऐसी भी क्या नौकरी ?"—करीम चाचा बीड़ी का धुवाँ आसमान की तरफ छोडकर बोले ।

"क्यो क्या बात हो गई ?"—भन्नन जी ने पूछा ।

"बेनू बाबू की मोटर की आवाज सुनकर भागा । अरे भले आदमी, बीडी पी रहा था, पीकर जाता । न तो बेनू बाबू कहीं सूली पर लटकने जा रहे है, न तुझे ही फाँसी पर लटका देगे ।"

हरीश चारो जूठे गिलास उठाकर ले आया वहाँ से और हँसता हुआ बोला—"मैं समझा सेठ जी की मोटर है ।"

"सेठ न हुए अफलातून हो गए ! तुम तो यार उनसे ऐसा डरते हो जैसे चुहिया म्याऊँ से ।" करीम ने हरीश की तरफ अपनी जली हुई बीडी दिखाकर कहा—"लो बीडी सुलगा लो ।"

हरीश ने बीडी निकालकर सुलगाते हुए कहा—"चाचा, तुम तो एक तरह से उनके दोस्त हो, तुमने उनको शुरू से बनते हुए देखा है, जब वे पैदल चलते थे । मैंने तो उन्हे मोटर पर ही देखा है ।"

"अरे क्या मोटर पर देखा है तुमने ? जब मैंने बीस बार तुम्हे कानो के रास्ते उनकी ऐसी तसवीर दिखाई है जैसी तुम्हारी, फिर भी तुम्हारे कोई भरोसा पैदा नही होता ? तुम्हारे फायदे की बात कह रहा हूँ यह । मेरा क्या ? आधी-पौनी सब बीत गई, आधी-चौथाई भी कट ही जायेगी । तुम नौजवान हो ।" करीम चाचा ने जरा स्वर नीचाकर कहना शुरू किया—"हरीश, बेनू बाबू को जब मैं कभी रात को अपना होटल बद करते वक्त बचा हुआ खाना खिला देता था तो वे तमाम देग और तश्तरियो को अपने हाथ से धो देते थे ।"

भन्नन जी ने आश्चर्य के साथ कहा—"यह उनके बडे होने की सूचना थी ।"

'तुम्हे यह मालिक की बगावत नही सिखा रहा हूँ. । बता रहा हूँ, बडे आदमी अपनी छोटी हालत में कैसे होते है । यह जो चांस-चास के पीछे दौड रहे हो तुम, यह चास तो अपनी ही मुट्ठी के भीतर है ।"

खो जाओगे ।"

पंडित चले बाहर को । स्टेशन का मार्ग छोडकर दूसरी दिशा की तरफ चले । उन्होने निश्चय किया—"सीधे एक ही तरफ को जाऊँगा । कही इधर-उधर गलियो मे नही मुडूँगा तो कैसे बहक जाऊँगा ?"

सीधे-सीधे फुटपाथ पर ही बढने चले गए । कुछ दूर जाकर उन्होने एक आदमी से पूछा—"क्यो भाई, मैं कहाँ पर आ गया यहाँ ?"

आदमी हँसकर बोला—"जाना कहाँ है तुम्हे ?"

एक नाम याद था उन्हे । चट से अपनी बुद्धिमानी स्थापित करने के लिए बोल उठे—"गिरगाँव जाना है ।"

"तो वह ट्राम जा रही है, उसमे बैठ जाओ ।"

"यह कौन मुहल्ला है ?"

"यह परेल है ।"

ट्राम मे बैठने की हिम्मत नही हुई उन्हे, न-जाने वह कहाँ ले जाकर छोड दे ? अगर रात को डेरे पर न पहुँच सके तो बडी बदनामी की बात हो जायेगी । यही सोचते-विचारते चले जा रहे थे ।

जेब मे हाथ पड गया फिर । भग के चूरन की पुडिया बाहर निकालकर खोली, उसमें एक खुराक से भी बहुत कम थी । रास्ता चलते हुए एक आदमी से पूछा—"भाई, यहाँ भग की दूकान कहाँ पर है ?"

उस आदमी ने कहा—"गाँजे से तुम्हारा मतलब है ?"

"मतलब तो भाँग से ही है, लेकिन जहाँ गाँजा मिलेगा, वही वह भी मिल जायेगी ।"

"देखो भाई, गाँजा-वाँजा तो हम कुछ पीता नही है । इस गली से सीधे चले जाओ । दो गली छोडकर तीसरी के सिरे पर एक तरफ एक बिजली की चक्की है, दूसरी तरफ एक दूधवाला बैठता है । वही बीच में है एक दूकान ऐसा याद पडता है ।"

भन्नन जी घबराए । वह किसी गली के भीतर न घुसने का निश्चय कर चुके थे । यहाँ दो-दो, तीन-तीन गलियो के फेर सुनकर चकराए ।

लेकिन वह विजया का चक्कर था, बिना उसके कैसे दिन आरंभ होता ? कैसे लेखनी कागज पर दौडती ?

गली के नुक्कड की दूकानो के साइन-बोर्डो को अच्छी तरह याद कर भन्नन जी घुसे गली के भीतर। बडी बारीक नजर से भग की हरियाली को ढूँढते हुए चले । एक गली पार की, दूसरी गली भी गई। तीसरी गली आई, एक तरफ चक्की थी लेकिन दूधवाला नदारद ! उसकी जगह एक चायवाला था। उन्होंने मन मे सोचा—"दूध-चाय में क्या फरक है ?"

बीच मे एक पनसारी था। उससे पूछने लगे—"भाँग क्या भाव दी ?"

उसने पूछा—"भाँग क्या चीज ?"

"भग ! भग ! भग की पत्ती, जिसे घोटकर पीते है।"

दूकानदार ने इन्हे गौर से देखकर कहा—"भग यहाँ नही मिलती।"

"फिर कहाँ मिलेगी ?"

भन्नन जी ने फिर और उसके साथ अधिक बाते करना ठीक नही समझा। वे गलियो के फेर से निकलकर फिर उसी सडक पर चले आए।

मन में सोचने लगे—'भग, ऐसी विश्व-विजयिनी—इतनी लबी-चौडी सडक, ऐसी ऊँची अट्टालिकाएँ छोडकर क्या आवश्यकता है उसे जो गलियो के भीतर घुसे ? शायद यह अंग्रेजो का बसाया शहर है, यहाँ उसका अधिक प्रचार न हो।'

फिर विचार किया उन्होने—'लेकिन हमारे देश के तमाम कुली-मजदूर तो यहाँ भरे पडे हैं।'

एक नल के पास आकर उन्होने पुडिया में जो-कुछ चूरन बचा था उसका आधा फाँक लिया और खूब पानी पीकर एक चुटकी सुरती की दबाई मुँह में। थोडी ही देर में नशे की बिजली दौड पडी नसो के तारो पर। नजर तीखी हो गई और कल्पना ठोस !

"अब तो धरती के भीतर भी भंग की दूकान होगी तो उसे मालूम कर लूँगा।"—इस विश्वास से भन्नन जी चले दूकानो पर दोनों आँखो

की दूरबीन लगाते हुए।

कोट की भीतरी जेब मे हाथ डालकर उन्होने बटुवा निकाला। एक बार इधर-उधर देखकर सफाई से अपनी पूँजी गिन ली। छोटा नोट कोई था नही, इसलिए पाँच रुपए का निकालकर कोट की बगलवाली जेबो मे से एक मे रख लिया।

अपने अनुसधान में आगे बढते गए। एक दूकान पर थाली मे हरा, चूरन-सा पिसा रखा दिखाई दिया। खुश हो गए—"पीसने की मेहनत भी नही करनी पडेगी। वाह रे बबई! यहाँ कोई मेहनत करने को तैयार ही नही है। चने मूँगफली छिली-छिलाई यही बिकती है, अखरोट और बादाम भी तो।"

नशा तेजी पर आ गया था—"और कपडे भी सिले-सिलाए, खाना भी पका-पकाया, होटलो में मकान भी मय बिस्तर के! वाह रे बबई।"

दूकान मे और कुछ नही देखा उन्होने, बस अपने मतलब की हरियाली पर ही नजर अटकी रह गई, बोले—"हाँ साहब, चूरन तो आपने बनाकर रख दिया है, भाव क्या है इसका?"

दूकानदार कुछ हँसकर बोला—"कैसा चूरन?"

"यह जो पब्लिक की तकलीफ बचाने को बना रखा है।"

"यह चूरन नही, यह रग है।"

भन्नन जी फिर एक क्षण नही रुके वहाँ प्रर। आगे को चलते ही गए—"बडा आश्चर्य है! इतना बडा नगर! विजया की ऐसी उपेक्षा कर रहा है। नही मेरी ही भूल हो सकती है। ये आलू को बटाटा, प्याज को काँदा और मक्खन को मसका कहनेवाले जरूर उसे किसी और नाम से पुकारते होंगे। कहाँ तक छिपा रहेगा? किसी-न-किसी दिन परदा खुल ही जायेगा!"

भायखाला का पुल पारकर आगे बढे और आगे बढे तो कई रास्ते दिखाई दिए, हिम्मत न हुई उधर जाने की, लौट आए। अब इस बार लौटकर सडक की दूसरी तरफ से जाना निश्चय किया।

लोहे के सीखचों से घिरा हुआ एक बाग देखा । उसके फाटकों से लोग आ-जा रहे थे । एक से पूछा उन्होने—"यहाँ क्या है ?"

"रानी का बाग ।"

फिर दूसरे से पूछा । उसने जवाब दिया—"विक्टोरिया गार्डन ।"

नशे की झोक में उन्होने फिर तीसरे से पूछा । उसने कहा—"यह चिडियाघर है ।"

मन मे भन्नन जी कहने लगे—"जितने आदमी उतनी बातें, कोई कुछ कहता है, कोई कुछ । सभी आ-जा रहे है । बिना अपने मरे स्वर्ग नही देखा जाता । जाकर देखूं तो सही ।"

भन्नन जी भीतर धंस गए । वहाँ फूल-पत्तियो और हरी दूब के मैदानो में जगली जानवरो के पिंजरे तथा गुफाओ को देखकर उनका मन अत्यत प्रसन्न हो गया । वहाँ घूमने-फिरने में कुछ देर तक तो उन्हे भग का अभाव भी कुछ नही खटका । वे उन जानवरो के बीच में भूले रह गए ।

सूर्य अस्ताचल में ढले तो उन्हें घर लौटने की फिकर पडी । जेब की पुडिया देखी, कुछ भरोसा हुआ ।

शेर के पिजरे के पास जाकर हाथ जोड बोले—"हे जगल के राजा, हे देवी चडी के वाहन । घर छोडकर तुम यहाँ बबई मे कैद हो । ऐसी ही मेरी भी दशा है । घबराने की कोई बात नही । सुदिन-कुदिन दोनो ही अपने आप कट जाते हैं । अच्छा अब मैंने तुम्हारा घर देख लिया है, फिर कभी आकर भेंट करूँगा । इस समय जाता हूँ । नमस्ते ।"

भन्नन जी लौट गए घर को । रास्ते भर फिर भंग की तलाश करते रहे । कही कुछ नही दिखाई दिया । ठीक शब्द मालूम न होने से किसी से कुछ पूछा नही ।

एक जगह मार्ग मे शक हो जाने से उन्होने एक मनुष्य से कहा—"दादर मेन रोड को यही रास्ता है ?"

"ट्राम में क्यों नही बैठ जाते ? हिंदमाता सिनेमा पर उतर जाना ।"

ऐसा ही किया उन्होने । घर पहुँचते-पहुँचते शाम हो गई । करीम चाचा चल दिए थे । हरीश ऑफिस बद कर रहे थे । बोले—"कहिए पंडित जी, कहाँ-कहाँ घूम आए ?"

"विक्टोरिया गार्डन तक, बडी बढिया जगह है । लिखने-पढने की अच्छी जगह है ।"

"इसमें क्या शक ?" हरीश ने स्टोव जलाते हुए कहा—चाय पी या नही ?"

"पी तो नही, लेकिन उसकी जरूरत क्या है ?"

"हम सभी पिएँगे ।"

इतने में बिगडते हुए कौशल आ पहुँचा । उसने अपने हाथ की अँग्रेजी की प्राइमर मेज पर पटक दी—"क्या मालूम न-जाने आज सुबह-सुबह किस साले का मुँह देखा ?"

भन्नन जी ने घबराकर अपना मुँह फेर लिया और याद करने लगे कही उसने उनका मुँह तो नही देखा था ।

हरीश बोला—"बात तो बता भाई, क्या हो गया ?"

"क्या बताऊँ किसी ने मेरी पतलून की हिप-पॉकेट में से मेरा रेल का सीजन पास उडा दिया ।"

"मालिको से कहना, फिर बनवा देंगे ।"—हरीश ने कहा ।

"अरे क्या बना देगे ? तीन-तीन टिफिन कैरियरो से लाद देते है मुझे । इसी वजह से तो किसी पॉकेटमार का दाँव चल गया । हाथ खाली होते तो मैं साले की गर्दन दबोच लेता ।"

भन्नन जी ने पूछा—"कहाँ का पास था ?"

"बोरीबदर का । वही फोर्ट में है हमारा ऑफिस ।"

"टिफिन कैरियर किसके थे ?"—फिर पूछा उन्होने ।

"मालिक के और उनके जवाँई के । जवाँई ऑफिस के बड़े मैनेजर हैं । उनका लंच ले जाना पडता है मुझे रोज । क्या कहूँ पंडित जी आप से मैं अपनी मुसीबतें । अगर मेरी साँस दिखाई देनेवाली चीज होती

उसके हाथ-पैर होते, तो ये लोग कोई काम करने के लिए उसपर भी कुछ लाद देते। तकदीर की बात है उसी पास की किताब में मैंने पाँच रुपए का एक नोट रख रखा था, वह भी गया।"

भन्नन जी का माथा ठनका। पाँच रुपए के नोट से उन्हे अपने पाँच रुपए का नोट याद आया। उन्होने अपनी जेब मे हाथ डाला तो सारा हाथ बाहर निकल आया।

कौशल यह देखकर चिल्लाया—"क्यो पंडित जी, आपका तो खीसा ही गायब ! कुछ था तो नही इसमें ?"

"पाँच रुपए का एक नोट मेरा भी था।"

"मालूम नही आपने भी किस मनहूस का मुँह देखा सुबह।"

हरीश ने स्टोव पर केतली रख दी। वह हँसता हुआ दोनो के पास आकर बोला—'पडित जी, आपने देखा कौशल का मँह, कौशल ने आपका। कौन अच्छा, कौन बुरा ? पाँच आपके गए, पाँच इसके बराबरी हो गई।"

"आप कहाँ गए थे पडित जी !" हरीश ने पूछा—"आपके पास कोई बोझ तो न था ?"

"नही जी।"

"फिर कुछ भग-वग तो नही पी रखी थी ?"

भन्नन जी टाल गए बोले—"भग को क्या कहते हैं यहाँ ?"

"कैसा क्या ?"

"जैसा जेब को खीसा।"

कौशल हँस पडा। अपना ही सा एक समान दुखी पाकर उसके दुख का कुछ अश बंट गया।

बारह

दूसरे दिन भन्नन जी ने जो सुबह चूरन की पुडिया फाकी तो शक उसी समय हो गया था कि आज नशे की चरम सीमा प्राप्त न होगी । आज मूड न बनेगा, जब मूड ही नही बना तो फिर दिन क्या बनेगा ?

हमारा सारा जगत हमारे मन की रचना है, नशा भी तो हमारे विचारो की उपज है । साहित्य, कला या और किसी मानसिक व्यापार में नशे की कुछ उपयोगिता नही है । लोगो ने केवल ऐसा मान लिया है । मानने ही से वह बन गया है ।

और उसी दिन फिर उनको एकाग्रता न मिलेगी, ऐसा विचार बनने लगा । सुबह से ही उनका मन उखड गया । भूमि पर देखा उन्होने प्रेम सो रहा था, रात भी उसे बुखार आ गया था । वे सोचने लगे—"मैं तो अब उठ ही गया हूँ, इसे सुला दूं पलंग में ।"

इसी समय एक विचार ने जोर मारा—"इस समय इसे पक्की नीद

आ रही है। क्यो उसे तोडकर उसके आराम में बाधक होते हो ?"

शौच-स्नान कर भन्नन जी पूजा मे बैठे। अडेवाले ने बाहर आवाज लगाई। उन्होने कोई जवाब नही दिया। पाँच रुपए के नोट का खो जाना बहुत बडी बात थी, खासकर परदेस में जब कि उनकी आमदनी की अभी तक कोई राह नही खुली थी। उन्होने विचारा—"पाव रोटी मे देसी रोटी सस्ती रहेगी। जब उसे मैंने चला लिया है तो फिर क्यों ैसे फेंकूं ?"

सध्या करने लगे ध्यान उखड-उखड जाने लगा। क्योकि सुबह ही भग की मात्रा अपर्याप्त समझ ली गइ थी। मन बहक रहा था। कभी किरसन जी याद आ रहे थे—"बीस रुपए उन्होने ठग लिए। प्रचार कुछ नही करेगे वे।"—ऐसा विश्वास होने लगा। फिर सोचने लगे—"विना सबूत पाए किसी के विरुद्ध कुछ कह देना पाप है।"

फिर शर्मन् जी याद आए—'हिन्दीवालो के लिए यहाँ कोई आशा नही है, इसीलिए कोई नही जम सका यहाँ।" फिर वह कटी हुई जेव याद आई और चारो ओर अँधेरा ही अँधेरा दिखाई दिया।

जरा लबा प्राणायाम खीचा उन्होने। गायत्री का मत्र जपा। किसी से कुछ नही हुआ। मन मे सोचने लगे—"ताकत न मत्र में है, न आसन में, न मुद्रा मे, न प्राणायाम में। ध्यान किसी प्रकार नही जम रहा है, तो क्या सारा रहस्य भग की बूटी के ही हाथ में है ? आश्चर्य की बात जडता चेतना से आगे बढ गई, बूटी प्राणो पर चढ गई।"

लेकिन यह उनका एक क्षणिक विचार था। पुराना अभ्यास बडा बलवान् होता है। वे फिर भग के अभाव के लिए तरसने लगे और आज किसी प्रकार कही से भी उसे प्राप्त कर ले आने की सोचने लगे।

सध्या मे कुछ और सशोधन दृष्टि आए। पानी तो यात्रा में ही छूट गया था। जनेऊ को हाथ में लपेटने की बात पर ध्यान गया—"सध्या विचारमई है, एक सूक्ष्म वस्तु, उसका स्थूल से क्या मतलब हो सकता है ? हाथ को जनेऊ से बाँधकर रख देने से क्या मन वश में हो

जायेगा ? नही कोई जरूरत नही है, जनेऊ को बाहर निकालकर प्रदर्शन करने की । साथियो में से कोई भी ऐसे पाखड नही रचता और फिर करीम चाचा देखेगे तो मित्रता मे अतर पड जायेगा ।

फिर मन उखडकर स्वार्थ की भावना से 'पर' की भावना पर जा बैठा—"यह बिचारा प्रेम, परदेस मे है । बीमार है, कारखानेवालो में हमदर्दी कहाँ ? उन्हे अपने काम से मतलब है और हम साथी लोग सब को अपनी-अपनी ही पडी है । मै आज जरूर इसे अपने साथ अस्पताल ले जाऊँगा ।"

फिर उड गया मन ! जाकर भंग के पौधे पर जा बैठा—"लेकिन आज पहले बूटी का इतजाम कर लूँ वह भी जरूरी चीज है । कल को सही । पर एक बात तो आज कर ही लूँगा अपना बिस्तर जमीन पर और पलँग प्रेम के लिए छोड दूँगा । अगर ऐसी मनुष्यता मेरे भीतर न रही तो धिक्कार है मेरे लेखक और साहित्यकार होने पर । अपने साथियो के साथ ऐसा व्यवहार करने पर क्या सहृदयता जागेगी मेरे ? सहृदयता-हीन लेखक के लेख में क्या सजीवता होगी ?"

कौशल जी जागे—"वाह पडित जी आप तो बडी सध्या-पूजा करते हैं, कुछ हमें भी बताइए ।"

"क्या बताऊँ भाई ?"

कौशल ने बीडी सुलगाई और तकिए के नीचे से अग्रेजी की प्राइमर निकाली ।

"यह अग्रेजी की प्राइमर तो है ।"—भन्नन जी ने मुसका कर चुटकी ली ।

कौशल ने कुछ लजाकर पुस्तक बद कर दी और उठ गया । बिस्तर लपेटते हुए कहने लगा—"यह दुनिया की सफलता के लिए है । मै कुछ दूसरी दुनिया की बात कहता था ।"

"एकहि साधे सब सधे, कौशल भाई । इस दुनिया की सिद्धि पर ही दूसरी दुनिया ठहरी हुई है ।"

"आप क्यो कर रहे हैं ?"

"धीरे-धीरे यह मत्र छोडता जा रहा हूँ। व्यवहारिक जगत मे आने के लिए छोडना ही पडेगा।"

"अच्छी बात है, अग्रेजी ही पढा दीजिए। मै मुँह हाथ धोकर आपके लिए चाय बनाता हूँ।'

"प्रेम को रात मे भी बुखार था। मै इसे अस्पताल ले जाने का विचार कर रहा हूँ।"—भन्नन जी ने कहा।

"वह क्या परदेसी है ? पाँच साल हो गए इसे यहाँ रहते-रहते।"—कौशल भन्नन जी की पलँग मे अपना बिस्तर रख चला गया।

प्रेम भी उठ बैठा। भन्नन जी बोले—"प्रेम, तुम्हे रात मे फिर ज्वर हो गया। सो रहो अभी क्यो उठते हो ?"

"अब ठीक हूँ पडित जी।"

"छुट्टी ले लो।"

"पद्रह दिन से ज्यादह छुट्टी नही मिलती। वह मैने घर जाने के लिए रख छोडी है।"

"दो घटे की छुट्टी ले लो। तुम्हे अस्पताल दिखा लाऊँगा।"

"नही पडित जी, दो घन्टे का पैसा कट जायेगा।"

"क्यो उनके दया नही है ? या उनपर बीमारी अपना प्रभाव नही दिखाती ?"

"पडित जी, वे ओवरटाइम का पैसा देते है घडी देखकर इसी से गैरहाजिरी के मिनटो का भी लेखा रख लेते है।"—प्रेम भी मुँह-हाथ धोने चला गया।

पडित जी ने पूजा की किताब समय से पहले बद कर दी और कौशल की अग्रेजी की प्राइमर हाथ मे लेकर देखने लगे। उसके पेज लौटाते हुए विचारा उन्होने—"असली सध्या-पूजा अग्रेजी ही में है। इतने वर्षों से इन मत्रो की आवृत्ति कर रहा हूँ। इधर ये होठ घिस गए और उधर वे मत्र—क्या हुआ ? देखता हूँ हाथ कुछ भी नही लगा। साहस रखने

से धीरे-धीरे सब-कुछ हो सकता है। यहाँ सिनेमा के जगत में हिंदी की कोई पूछ नही है। अगर अग्रेजी का सहारा मिल जायेगा तो जरूर उसे कही-न-कही अपने साथ घसीट ले चलूँगा।"

कौशल स्टोव सुलगाकर पडित जी के पास आया—"क्यो पडित जी, पूजा हो गई ?"

"अब तो अग्रेजी में ही होगी।"

"बहुत बढिया बात।"

'कौशल, असलियत है, मैं अग्रेजी का पडित तो हूँ नही। हिंदी में ही मैंने किताबे लिखी है।"

"मुझे पढाने लायक तो आपको काफी आती होगी।"

"भाई, जो कुछ पढा-लिखा था वह सब भूल गया। लेकिन थोडा अभ्यास कर लेने पर सब मस्तिष्क मे फिर ताजा हो जायेगा। एक काम करो तुम अग्रेजी-हिंदी की डिक्शनरी ले आओ। मै स्वयम् भी पढता जाऊँगा और तुम्हे भी बताता जाऊँगा।"—भन्नन जी ने सत्य का सहारा लिया।

"हाँ पडित जी। जैसे बिना पति के नारी के लिए सारी दुनिया सूनी है ऐसे ही बिना अग्रेजी के पुरुष के लिए सारा जगत उजाड है। कोई उसकी बात नही सुनता। सब उसके ऊपर पैर रखकर आगे को बढ जाते है। देख रहे है न आप, अभी आठ बजे मोटर धोने जाऊँगा फिर नौ-साढे नौ बजे से तीन-तीन टिफिन कैरियर लाद कर यहाँ से फोर्ट। किसी दिन गाडी के डडे पकड लटक कर जाता हूँ। जेब कटाकर पाँच-दस रुपए जो गँवाए, वह कोई बात नही है अगर किसी दिन गाडी के नीचे आ गए तो मरे या सड़को पर हाथ-पैर कटा भीख माँगने के लिए जिंदा रह गए।"

"फिर ऐसा क्यों करते हो भाई ?"

"ऐसा क्यो न करें ? गाडी भरी हुई होती है, दूसरी का इंतजार करें तो ऑफिस का टाइमकीपर लाल रोशनाई से देरी लिखकर रजि-

स्टर मालिक के सामने रख देता है । यहाँ तो दो-धारी तलवार पर चलना है, जिधर से चलो उधर ही खतरा । अगर अंग्रेजी आ जायेगी तो क्लर्क बनकर कुरसी पर डट जाऊँगा फिर किस की मजाल है जो मेरे हाथ में झाड़ू देकर ऑफिस साफ करने को कह सकेगा ? और किसकी हिम्मत होगी जो मेरे सिर पर बोझ रख सकेगा ?"

"तुम ठीक कह रहे हो कौशल । घर से पैर निकालते ही मैं पग-पग पर इसी तथ्य पर पहुँच रहा हूँ । लेकिन डिक्शनरी ऐसी लाना जिसमे अंग्रेजी का उच्चारण भी लिखा हो ।"

"जरूर पडित जी, अगली पहली तारीख को तनखा मिलते ही पहला काम यही होगा ।"—कौशल पडित जी की इन सहमति को पाकर फूल उठा ।

बड़े उत्साह के साथ वह बाजार दौडा गया । दूध के साथ एक पाव रोटी भी खरीद लाया । उसके आठ टुकडे कर जरा वनस्पति की हवा दिखाकर तवे पर सेक डाले ।

चारो मित्र मेज पर चाय पीने बैठे । हरीश ने पूछा—"क्यो प्रेम खाना क्या खाओगे ?"

"आज तो चावल खाने की तबीयत है ।"

"नही चावल नही ।"—कौशल ने डॉट दिया ।

भन्नन जी बोले—"चलो, तुम्हे मैं अस्पताल मे दिखा लाता हूँ । खाने से दवा जरूरी है ।"

"आज तो ठीक हूँ मैं । अस्पताल मे क्या देखते है ? वहाँ भी जान-पहचान ही चलती है । एक शीशी मे कोई रगीन पानी दे देगे ।"

"पडित जी, वहाँ भी अंग्रेजी चलती है अगर आप अंग्रेजी जाननेवाले होगे तो बडा डाक्टर आपकी नब्ज पकडेगा नही तो छोटे-मोटे कपाउडर सिर्फ आपका नाम सुनकर ही आपका कागज लिख देगे ।"

अत में रोटी पकाने की ही ठहरी । कौशल अंग्रेजी की प्राइमर जेब में रख मोटर धोने को चल दिया । हरीश चक्की पर गेहूँ पिसाने चला

गया। प्रेम घर ही पर रहा। पडित जी घूमने को चल दिए।

बाहर सडक पर आकर सोचने लगे—"किधर जाऊँ? किरसन जी के पास? नही अभी एक ही दिन में क्या प्रचार कर लिया होगा उन्होने? फिर मेरे पास कोई स्टोरी भी तैयार नही है।"

फिर विचार किया—"तबीयत उखडी-उखडी फिर रही है सबसे पहले बूटी लाने का उद्योग होना चाहिए। लेकिन अभी तो नौ भी नही बजे है। हमारे देश मे तो भाँग के ठेके बारह बजे से पहले नही खुलते। कौन जाने यहाँ का कानून क्या है?"

"विक्टोरिया गार्डन तक तो कल ढूँढ ही लिया है। आज बादके बादशाहो की सडको पर जरूर मिल जायेगी। पैदल चलकर क्यो समय नष्ट करूँ?"—भन्नन जी हिंदमाता सिनेमा के ट्राम स्टैड पर उधर जाती हुई एक ट्राम पर जा डटे।

कडक्टर टिकट बाँटता हुआ चला आया। उनकी बगल मे एक यात्री ने गिरगाँव का टिकट लिया। यह नाम याद था भन्नन जी को। कभी कोमल जी की चिट्ठियाँ इसी पते से आती थी।

कडक्टर अपना टिकट छेदने का पच भन्नन जी के सिर पर कटकटाता हुआ बोला—"किडर जायेगा?"

भन्नन जी के मुख से निकल ही तो पडा—"गिरगाँव।" गिरगाँव का टिकट हाथ में दबा कोट के भीतर के बटुए को सँभालते हुए चले पडित जी।

गिरगाँव कभी देखा था नही इसलिए बराबर उस गिरगाँव को जाने-वाले व्यक्ति के कधे पर पडे हुए लाल अगोछे पर दृष्टि गडाए रहे।

उसके साथ ही अपने भी उतर गए और एक परचूनवाले की दूकान पर जाकर पूछने लगे—"क्यो साहब, यहाँ भग कहाँ मिल जायेगी?"

दूकानदार ने आँखे तरेरकर पूछा—"कैसी भंग?"

"जो पी जाती है।"

"जिससे नशा करते है?"

"हाँ वही ।"—खुश होकर भन्नन जी ने मन में सोचा वही लफ्ज है जो अपने यहाँ काम मे आता है दूसरा नही ।

दूकानदार ने एक पुलिसवाले की तरफ इशारा कर दिया जो एक चौराहे पर भीड का सचालन कर रहा था ।

भन्नन जी उसके पास जा पहुँचे और बोले—"सिपाही जी, भग की दूकान कहाँ पर है ?"

"जेल जाने की मशा है क्या ?"

"क्यो ?" चौंके पडित जी—"भंग तो शिवजी की बूटी है ।"

"कहाँ है तुम्हारा मकान ? कितने दिन हो गए यहाँ आए ?"

"बहुत दूर का हूँ सिपाही जी । अभी तो दो ही दिन हुए हैं यहाँ आए ।"

'इसीलिए छोड देता हूँ, चले जाओ । फिर मत लेना गाँजा, भग, चरस, अफीम-शराब का नाम । इन सबका बिकना यहाँ कानूनन मना है ।"

"फिर कैसे काम चलता है ?"

सिपाही आँखे दिखाकर बोला—"काम ? काम चलता है ठडी कोठरी मे बदकर ।"

'सिपाही साहब, आप तो नाराज हो गए । मेरा मतलब है जो लोग दवा के तौर पर उन चीजो का इस्तेमाल करते हैं उनके लिए तो कोई छूट होगी, नहीं तो मर जायेगे बिचारे ।"

"उसके लिए डॉक्टर से पूछो ।"—झिडक दिया सिपाही ने ।

भन्नन जी सोचने लगे—"कहाँ आ फँसा इस बबई में ? अब साहित्य की चेतना कैसे जागेगी ? कहाँ से उठेगी कल्पना की लहर ? ताडी-शराब बद करते । अफीम-गाँजे पर लगा देते प्रतिबध । बिचारी भाँग ने किसी का क्या बिगाडा, कितना सीधा-सादा सात्विक नशा है । शराब पीकर आदमी मरने-मारने को उतारू हो जाता है । भग के नशे मे भगवान् का ध्यान करता है, काव्य-साहित्य की प्रेरणा मिलती है । चित्र-कला की ओर प्रवृत्ति होती है और गीत की धुन जाग उठती है ।"

'ऐसा पवित्र नशा ! मैंने तो सुना है गानेवाले बिना नशे के न स्वर में जमे रह सकते हैं न ताल में चिपके । फिर यह सिनेमा के भीतर का सगीत कैसे उपजती है ? जरूर कोई रहस्य है, जरूर कोई चाल या चालाकी है । धीरे-धीरे मालूम हो जायगी, लेकिन तब तक क्या होगा ?"

माधवबाग का नाम याद कर लिया था । पूछते-पूछते चले उधर ही को । किसी ने कह दिया था उनसे भाँग माधवबाग मे मिलेगी ।

माधवबाग के निकट एक फुटपाथ पर दीवाल के सहारे जटा-भस्म-मडित एक सत-मडली को बैठे देखा । बडे ग्रानद मे गाँजे की दम लगा रहे थे । भन्नन जी भी वहाँ जाकर एक किनारे से बैठ गए । कौन पहचान का था वहाँ जो झिझकते ?

धीरे-धीरे एक बाबा से पूछने लगे—"क्या गाँजा पी रहे हो ?"

बाबा ऊँची आवाज मे बोला—"जोर से कहो भगत, अपनी तबीयत का हाल । तुम भी लगाओगे एक दम ?"

"पुलिसवाला ?"—भन्नन जी ने इतना ही कहा ।

"अरे पुलिसवाला क्या ? यह शिवजी की बूटी है । वह भी लगा लेगा एक दम तो उतर जायगा भौसागर के पार ! बोलो जल्दी से लोगे ?'

बडी सकुचाहट से भन्नन जी ने कहा—"लेकिन मुझे तो पीसकर पीने की आदत है ।"

दूसरा सत बोला—"तुम्हारे पास घोटाई के लिए मुफ्त का बखत होगा । पिसा-पिसाया आटा होगा और पकी-पकाई रोटी । भाई, हमें तो एक-एक दरवाजे से एक-एक चुटकी इकट्ठी करनी होती है । सारा दिन भाँग के धोने और घोटने में लगा देंगे तो खावेंगे क्या ?"

"माधवबाग यही है ? यहाँ किसी ने कहा था भाँग मिल जायगी ।"

"इस रास्ते भीतर जाओ । वहाँ मदिर के पास एक घोटता है कुछ हरा-हरा ।"—एक साधू ने कहा ।

इस समय तक पस्त पड़े हुए पंडित जी के एक नई ही स्फूर्ति आ

गई नाडी-नसो मे। वे तुरत ही खडे हो गए और भीतर जाती हुई भीड के साथ माधवबाग के भीतर प्रविष्ट हो गए।

मदिर के सामने जाकर लोगो की देखा-देखी अपने भी हाथ जोडने लगे—"हे देवता, धन-सपत्ति, यश-मान कुछ नही चाहता, तुम्हारा ही ध्यान जमाने को भॉग की बूटी चाहिए, वह मिल जानी चाहिए।"

इधर-उधर देखने लगे। कही कोई दूकान नजर नही आई। मन में विचारा—'साधु-सत को झूठ बोलने की क्या पडी है। फिर नशे मे तो आदमी शायद ही झूठ बोलता हो।"

दूसरी गली से बाहर सडक पर आए। एक परिक्रमा और की फिर बाहर निकल आए। जब कही कुछ नही दिखाई दिया तो एक केले के ठेलेवाले से पूछा—"क्यो भाई, यहाँ भग कहाँ बिकती है ?"

उसने सामने एक कोने की तरफ उँगली उठाकर दिखा दी। भन्नन जी ने देखा, सचमुच मे एक व्यक्ति सिलपर बूटी घोट रहा था और दो आदमी उसकी दूकान पर अशत ओट मे बैठे कुछ पी रहे थे।

पडित जी जाकर उसकी दूकान के आगे खडे हो गए। बोले—"क्या है यह ?"

'ठडाई।" उसने पूछा—"पियोगे ?"

"भग भी है इसमे ?"

"क्यो नही ?"—पीसनेवाले ने उत्तर दिया।

भन्नन जी ने देखा, उस व्यक्ति की एक आँख जड से गायब थी। मन में सोचने लगे—"यह काना कही अपना उल्लू तो सीधा नही कर रहा है ?"

भीतर बैठे हुए भाँग ही पी रहे थे, ऐसा विश्वास जमा उनके। एक एक व्यक्ति और वहाँ जाकर बैठ गया। उसने भी आर्डर दिया—"एक गिलास।"

काना उसके लिए भंग छानते हुए बोला—"तुम्हे कितनी ?"

"एक गिलास कितने की ?"

"चार आने ।"

"बादाम भी है ?"

"बादाम-गोल मिरच सभी कुछ ।"

"घर को ले जाऊँगा ।"

"पत्तो के दोने मे बाँध दूंगा ।"

"दे दो चार गोले ।"

काने ने चारो गोले एक पत्ते में लपेटकर फिर एक पत्ते मे लपेटे और फिर अत मे एक दोने मे डोरे से लपेट दिए ।

भन्नन जी ने पाँच रुपए का नोट उसके हाथ में रखकर पूछा—"यहाँ भग का बेचना कानूनन मना है । ऐसे खुले हुए बैठकर बेच रहे हो, पुलिस तुमसे कुछ नही कहती ?"

"बाबू, भगवान् सबका काम चला देते है । अमल बुरी चीज है। इसके बिना कभी-कभी आदमी के प्राण सकट मे पड जाते है ।"

"अच्छा, अच्छा । एक गिलास छानकर भी दे दो ।"

भन्नन जी ने ललककर पी डाली प्रायः एक ही साँस मे । रग में हरियाली पूरी थी, लेकिन स्वाद मे बहुत कसर पाई उन्होने । किसी प्रकार मन को समझाकर तीन रुपए बारह आने और वह भग के गोलो का दोना जेब मे सँभाल चल पडे ।

कभी मन को समझाते—"काना है तो क्या हुआ ? ऐसे कोई भी हरी पत्ती घोटकर नही बेच सकता । मदिर के निकट ऐसी बेईमानी करने का साहस नही हो सकता किसी को । फिर एक ही मै परदेसी रह गया था क्या ठगने को ? बराबर उसकी दूकान मे गाहक आ-जा रहे थे । उतनी भाँग पीस रहा था वह शाम तक न-जाने और कितने लोग आवेगे ।"

और कभी मन उन्हे समझाता—"गाहक को बुद्धू बनाने के लिए उसने कोई हरी पत्ती धो-धाकर बादाम, मिर्च और चीनी मिलाकर छान दी । जब पुलिस आकर उसकी गर्दन दबोचती होगी तो वह उसे पत्ती की असलियत बता देता होगा । उसे चखा भी देता होगा । भाँग घोटकर

बेचना कानूनन मना है। जब कोई किसी और पत्ती को ठडाई के नाम से बेचता है तो कौन रोक सकता है ?"

फिर वे मन से कहते—"तो वे जो उसके गाहक है वे भी क्या बुद्धू है ?"

मन कहता—"उन्हे शायद छिपाकर असली पिसी पत्ती पिलाता होगा। काले मे सफेद, सफेद में काला ऐसे ही मौका पाकर मिलाते रहने से काले बाजारी चलती है।"

फिर मन को समझाया—"नही जी, मेरे सामने एक मनुष्य को छानकर दी। ऐसा अधेर नही हो सकता।"

ऐसे ही मन के संकल्प-विकल्पो में डूबते-उतराते भन्नन जी कही पर अपनी याद से और कही पूछताछ कर फिर गिरगाँव आ पहुँचे वहाँ प्रार्थना-समाज के पास से ट्राम मे बैठ गए और हिंदमाता सिनेमा के निकट उतर कर अपने डेरे मे पहुँच गए।

नशा कभी जमता हुआ जान पडता और कभी उखडता हुआ। ऑफिस मे कुछ लोग बैठे हुए थे और दूसरे कमरे मे भी कुछ आवाजे आ रही थी। भन्नन जी सीधे अपने कमरे मे जा पहुँचे। करीम चाचा चाय बनाने में व्यस्त थे दरवाजे की तरफ पीठ किए हुए।

पडित जी की आहट पहचानकर बिना मुडे हुए ही बोले—"कहो पंडित आ पहुँचे। कहाँ-कहाँ के चक्कर लगा आए ?"

भन्नन जी जल्दी मे भग की तलाश पर परदा डालने को ढूंढने लगे। कुछ न मिला तो उनके मुँह से निकल गया—"गया था किरसन जी से मिलने।"

"अरे किरसन जी से मिलने ? उस चार सौ बीस मे किसने तुम्हारी जान-पहचान करा दी ?"

"किसी ने नही कराई अपने-आप हो गई। वह तो बडे ठाट-बाट से रहता है। कहता था उसकी तमाम सिनेमा के प्रोड्यूसरो से जान-पहचान है।"

"लो चाय पियो। ठीक बखत से आए तुम।" करीम चाचा ने एक गिलास भन्नन जी के सामने रख दिया एक खुद पीने लगे—"वह नबरी लोफर, क्या ठाठ से रहता है ? वह साला मिरासी—कभी किसी की सूट चुरा लाता है, कभी किसी की माँग लाता है। जिसका उधार लेगा, कभी लौटाने का नाम नही लेना । जिससे दोस्ती करेगा, उसी की जड़ काटेगा।"

'बातचीत तो बडे सभ्य और पढे-लिखो की सी करता था ।"—भन्नन जी ने कुछ उदासी के साथ कहा।

"अरे उसकी न कहो, धडाके से गुजराती वह बोलता, मराठी जबान उसे आती है, अग्रेजी में भी नही हिचकता, उर्दू-हिन्दी तो भला क्या बात है। किसी से कहता है मै पारसी हूँ, किसी को बताता है महाराष्ट्र और किसी को यू० पी० का रहनेवाला।"

"असल मे है कौन ?"

"असल मे मिरासी है जात का एकस्ट्रा सप्लायर !"

हरीश भी आ पहुँचा था। कहने लगा किरसन की तारीफ हो रही है क्या ?"

चाचा बोले—"हाँ, यहाँ आते-ही-आते इनकी लग गई उसके साथ यारी।"

"उसकी न कहो ।" हरीश बोला—"कभी म्यूजिक डायरेक्टर बन जाता है, कभी डास मास्टर। कभी कैंची और सीमेंट लेकर एडीटर बन जाता है कभी कलम-कागज लेकर स्टोरी रायटर।"

भन्नन जी सोचने लगे—"जरूर बीस रुपए वह भी नदी मे बह गए।"

"फिल्म की बिजिनेस के लिए जो भी नया आदमी यहाँ आया यह उसके पास जा पहुँचता है। बिना पर की उडाता है। हर मशहूर पिक्चर में अपना नाम जोडकर कहता है, फलाँ पिक्चर की कहानी मैंने लिखी, फलाँ का डास म्यूजिक मैंने कपोज किया। फलाँ की एडिटिंग कर मैंने तमाम घास-कूडा छाँटकर फूल-ही-फूल खिला दिए।"

"आदमी बहुत होशियार है अगर कुछ लतें न होती, झूठ न बोलता ईमानदार होता तो आज इडस्ट्री में जरूर उसकी भी अपनी एक जगह बन गई होती।"—चाचा बोले,

"एक दाँव जरूर चल जाता है उसका—पहला दाँव। जो भी यहाँ आता है उससे हजार-बारह सौ, सौ-पचास, दस-बीस जैसी भी पार्टी हुई —यह ले ही मरता है। फिर दूसरा दाँव नही चल सकता क्योकि पहली ही बार सारी पोल इसकी खुल जाती है। भगवान् बचावे इससे तो।" चाचा ने दोनो कान पकडे।

हरीश ने पूछा—"क्यो पडित जी, आप अपनी तो कहिए। कोई हरियाली उसने आपको तो नही दिखाई?"

हरियाली के नाम पर भन्नन जी का माथा घ्रम गया, उन्हे वह भग याद आ गई। उन्होंने आकर अपना कोट लोहे की कुर्सी पर रख दिया था। उनकी सारी चेतना किरसन जी के शभ नाम की परिक्रमा करने लगी थी। हरीश आकर उस कुरसी पर बैठ गया और वह भग का दोना पिचक गया था। सभी बाना मे डूब गए थे।

भन्नन जी उठकर बोले—"हरियाली कैसी?"

"सबज़ बाग मे मतलब होगा।"—चाचा बोले।

"अजी क्या हरियाली?" कुर्सी पर से अपना कोट खीचते हुए पडित जी ने कहा—"मेरा कोट है यहाँ?"

"अरे!"—खेद के साथ हरीश ने कहा।

भन्नन जी ने कोट की जेब के बाहर भग के रग फूटे देखकर जल्दी से कोट की तह कर अपने बिस्तर मे छिपा दिया।

"कोई स्टोरी तो नही फँसा आए तुम उसके जाल में। वह साला हडप कर कह देगा—मेरी लिखी है।"—करीम चाचा बोले।

"नही चाचा जी, लिखी हुई स्टोरी अभी कोई है ही नही मेरे पास।" हरीश ने कहा—"रोटी खा लो पडित जी।"

पंडित जी के दिमाग में वही किरसन जी घूमने लगे—"रुपए के

रुपए गए और आगे को जो बबई में फैल जाने की आशा बँधी थी वह चकनाचूर हो गई ।"

दूसरी तरफ उनके मन मे वह भग की दुर्दशा हो गई । एक तो वैसे ही बदरग थी, दूसरे हरीश ने उसके साथ उनके कोट को भी लपेट लिया । कोट पहनने की ऐसी जरूरत कुछ थी नही, लेकिन उसकी भीतरी जेब मे उनको बटुवा छिपाने की सहूलियत थी ।

दो-तीन विचारो की गहराई मे खो जाने से उन्होने ऐसे भोजन किया मानो किसी दूसरे के हाथो से कोई दूसरा ही खा रहा है । खा-पी कर कहानी लिखने बैठे, लेकिन मन मे कोई उमग पैदा नही हुई । कमरे के साथियो से कट कर मेज मे बैठ गए और कागज पर लिखने का नाटक रचने लगे ।

थोडी देर मे जब हरीश और करीम चाचा आफिस की तरफ चले गए तो भन्नन जी उठे, झट से अपने विस्तर में से अपना कोट निकाला और भग के पिचके दोने को सँभाल कर पत्ते मे रख एक अखबार में लपेटकर फिर वही छिपा दिया । कोट का बटुवा निकालकर कमीज की जेब में रख लिया ।

कोट को गुसलखाने में ले गए । साबुन-पानी वहाँ था ही । लगे रगड-रगड कर धोने और उसका मैल छुटाने । इतने ही मे दौडा-दौडा आ पहुँचा हरीश । उसकी आहट पर भन्नन जी अपना कोट गुसलखाने ही मे छोड कुरसी पर आ धमके ।

हरीश आते ही लौटकर बोला—"देखिए पडित जी, यह मेरी पतलून में किस चीज का दाग लग गया ?"

"क्या मालूम कुछ हरा-हरा-सा ।"

"अपना कोट तो देखिए शायद उसकी जेब में कुछ·· "

भन्नन जी ने समझा, अब इस बात को झूठे परदे में छिपाकर रखना बुद्धिमानी की बात न होगी । जब इनके साथ रात-दिन का रहना है तो इन्हे कब तक धोका दिया जा सकेगा ?

"कोट ! ठीक है, उसी से लग गया ! तुम बैठे थे न मेरे कोट के ऊपर ? उतार दो यह पतलून, बदल दो। मैं अपना कोट धो रहा हूँ इस का भी रग निकाल दूँगा।"

'हाँ सब लोग मेरी मजाक उडा रहे है। कैसा बुरा दिखाई दे रहा है यह। लेकिन आप क्यो धोने लगे ? मैं धो दूँगा आपका कोट भी कहाँ है वह ?"

"गुसलखाने मे रख दिया है।"

"जेब मे क्या रख दिया यह आपने ? बातो-ही-बातो में मेरा ध्यान उधर गया ही नही।"

"बाजार गया था, विजया की गोली ले आया था।"

"विजया क्या ?"

"भग।"

"कहाँ से ले आए ? यहाँ तो सब बद है। ब्लैक से लाए क्या ?"

"नही तो एक दूकान मे लाया।"

हरीश हँसने लगा—"क्या पडित जी, भग का नशा भी कोई नशा हुआ ? यह तो इसान को बडा दब्बू और डरपोक बना देता है।"

"भाई, तुमसे झूठ बोलना तो है नही। लिखना बडा पित्तमार काम है, कुछ सहारा चाहिए उसकी एकाग्रता बनाए रखने को।"

"यह तो ठीक है, लेकिन सिनेमा के भीतर गाँजा-भाँग साधारण कुली-मजदूर ही पीते हैं।"

"मेरी भी उन्ही में गिनती समझो।"

"नही पडित जी, हम तो ऐसा कभी नही समझेंगे।"

"सिनेमा मे फिर किस चीज की मदद ली जाती है ?"

"बढिया विलायती मदद पडित जी।" हरीश ने पतलून बदल ली और पंडित जी के हाथ से उनका कोट भी छीनकर धोने लगा।

एक बार साबुन घिसने से जब रग नही गया तो बोला—पडित जी ह्वाइट में ब्लैक की चीज ठीक नही मिल सकती और न ब्लैक में

ह्वाइट की ।"

पडित जी की शका पर हरीश ने एक और अस्तर चढा दिया, उन्होने पूछा—"हरीश लेकिन ये लोग कहाँ से ले आते है ?"

"कई रास्तो से, कुछ सीधे रास्ते भी है, कुछ टेढे भी है । कुछ को दवा के तौर पर मिल जाती है, कुछ को जिन्दगी की पुरानी आदत होने के सबब पास मिल जाता है, कुछ अकाल मौत से बचने को छूट पा जाते है । कुछ ब्लैक से लाते है, कुछ ह्वाइट से और कुछ दोनो ब्लैक एड ह्वाइट से ।"

"पुलिस पकडती नही उन्हे ?"

"क्यो नही ? रात-दिन चालान होते है जुरमाना होता रहता है । दूर जगलो मे भटि्ठ्याँ बनाते है, पुलिस ने छापा मारा तो भाग जाते हैं । उनके बडे-बडे बर्त्तन अक्सर थानो मे लाए जाते है ।"

"क्या होता है उनका ?"

"क्या होता है ? नीलाम हो जाता है उनका, कबाडी खरीद ले जाते है । फिर कबाडियो के यहाँ से वे पहुँच जाते हैं वही जगलो में । सारी सृष्टि चक्कर में है । सूरज-चन्द्रमा-तारे सब चक्कर काट रहे है । दुनियाँ भी गोल है, मनुष्य भी चक्कर मे है ।"

भन्नन जी बडी कठिनाई मे पड गए । ऐसा जान पडने लगा मानो बबई में उनके अधविश्वास ही नही विश्वास भी सब खटाई में पड जायेगे । वे कल्पना मे अपनी नई तस्वीर देखने लगे । भग के नशे मे गोल मुँह मे तमाखू की चुटकी दबाए, धोती-चादर पहने, सिर पर चदन और भस्म की रेखा खीचे, हाथ में जनेऊ लपेटे भन्नन उनकी चेतना में से तिरोहित हो चला ।

ताजी लाड्री से धुली शर्ट और पतलून पहने, पॉलिश से चमकता हुआ बूट पैर में सुशोभित, जेब मे कीमती फाउटेन पेन, कलई में सोने की घडी बाँधे श्री भानुदेव शर्मा चले आ रहे हैं । अनेक कंपनियो के डायरेक्टर और मालिको के टेलीफोन दिन भर उनके कमरे में टनटनाते रहते हैं ।

फाटक पर उनकी मोटरें घर्राती रहती हैं।

इस मे अधिक सहन न कर सके वे उस समय। हरीश ने उनका कोट और अपनी पतलून दोनो को भाग के दाग से मुक्त कर लिया था। वह परसी घोडावाला की बिजली की इस्त्री ले आया और मेज पर रख कर उसने दोनो को सुखा-सुखूकर ठीक कर दिया। वह उसी समय अपनी पतलून पहन चला गया। भन्नन जी भी अपना कोट पहन भाग के गोले सँभाल चल दिए। रास्ते मे करीम चाचा ने पूछा—"क्यो ?"

"हाँ चाचा, शाम होने को आई घूम आता हूँ जरा।"

भन्नन जी सीधे चले किरसन जी की शोध मे। उन्होने सोचा—"यह बात तो जरूर सच है यह आदमी ठीक नही है। इसमे सम्बध रखकर कोई काम नही बन सकता। जाकर अपने रुपए तो निकाल लाऊँ, बीस रुपए मे पूरा महीना चला लूंगा मै।"

सौभाग्य मे मिल गया वह होटल में एक के साथ चाय पी रहा था। भन्नन जी को दूर मे देखकर उसने सडक की तरफ पीठ फिरा ली, लेकिन वे होटल के भीतर ही घुस गए और उस की मेज पर जाकर खडे हो गए—"नमस्ते।"

बडी रुखाई से उसने कहा नमस्ते, बडी जल्दी आप आ गए। इतनी जल्दी तो टोस्ट भी नही सिकता।"

"आप से कुछ काम है।"

"मुझसे तो सारी इडस्ट्री के काम चलते हैं, आप जरा देर उस मेज पर बैठिए। मै इनके साथ एक जरूरी और प्राइवेट मामले मे मशवरा कर रहा हूँ।"

पडित जी अपना-सा मुँह लेकर एक दूसरी मेज पर बैठ गए। होटल के बॉय ने उनके पास आकर पूछा—"बोलो।"

अनमने होकर भन्नन जी ने सिर हिला दिया और मूर्ख की तरह उस मेज पर बिना मतलब के बैठे रह गए।

उधर किरसन जी का साथी बोला—"कौन है यह ?"

"एक नया जानवर है। आया है बबई मे पिक्चर बनाने।"

"शकल-सूरत से तो जाहिर नही होता इसके पास पैसा होगा।"

"पैसेवाले ऐसे ही होते है।"

"लेकिन तुम्हे इसकी खातिर करनी चाहिए कि यह तुम्हारे जाल मे फँसे, नही तो कोई दूसरा भगा ले जाएगा तो टापते रहोगे।"

"किरसन को ऐसा बेवकूफ न समझो। बेगरज होने से ही इसकी तरफ मेरा खिचाव ज्यादे रहेगा। बहुत ज्यादे आम-भगत और बात-चीत करने से वैसी बात नही रहेगी।"

"कम-से-कम चाय-सिगरेट तो पिला दो।"

"ये धन के साँप, ये सूम अगर पैसा खर्च करे तो फिर जमा कैसे हो?"

साथी बड़ी दया के साथ हँसा—"अच्छा मैं पिला देता हूँ।"

"मेरे असामी को उडा लेना चाहते हो क्या तुम?"—किरसन ने उसका हाथ पकड लिया।

"ऐसे तुम्हारे बर्त्ताव से मैं नही तो दूसरा जरूर उडा ले जाएगा इसे।"

"मैंने इसके सिर में बडी जबर्दस्त हड्डी फिराई है, कही नही जा सकता। सिगरेट-चाय का आदी नही है। लेकिन कहाँ जायगा बचकर धीरे-धीरे सब सिखा दिया जायगा। अभी तो यह हथेली पर अँगूठा रखकर ही अपना अमल पूरा करता है।"

साथी हँसा बडी जोर से।

"हाँ, मैंने इसका हथेली और अँगूठा देखा। दोनों चूने के असर से फटे और सफेद थे।"

भन्नन जी को उस मेज पर अकेले बैठे-बैठे बडी बेचैनी हो रही थी।

किरसन का साथी एक एक्टर था। इधर-उधर बीस खुशामदे करता रहता था। डायरेक्टरो और प्रोड्यूसरो के पीछे-पीछे उनके पीक-दान राख-दान और पान-दान लिए-लिए घूमता था। कभी कोई छोटा-मोटा

पार्ट मिल भी जाता था। लेकिन ख्वाब सिनेमा की बडी-से-बडी नटियों के साथ हीरो बनने के ही देखा करता था।

उसने पूछा—"कैसी पिक्चर बनाने का इरादा है?"

किरसन जी बोला—"स्टट!"

"अरे क्या टेस्ट लेकर आया है, कहो न सोशल सबजेक्ट निकाले कोई। खर्चा कम और चल पडी तो सोना बरस जाय।"

"वाह! अच्छी अकल बता रहे हो।"

"मेरी सिफारिश कर सेकिड हीरो का पार्ट दिला दोगे तो इसके बाद की पिक्चर से फिर हीरो बन ही जाऊँगा कही-न-कही।"

"देखो मुझे इसके इटरेस्ट के खिलाफ उससे कुछ नही कहना है। अगर सोशल की तरफ ध्यान लगा दूंगा तो उसे बहका देनेवाले सैकड़ो मौजूद है। तुम जरा घर के भीतर कूद-फॉद दड-बैठक कर अपना साहस क्यो नही बढा लेते?"

"श्रीमती को तो मै समझा लूँगा, पडौसी न जाने क्या समझे।" कुछ निश्चय कर वह बोला—"अच्छी बात है, तुम्हारी राय मजूर है। लेकिन अगर तुम्हारी-इनकी पटरी बैठ गई तो हीरो के लिए तुम्हे मुझे ही साइन करना होगा, हाथ मिलाओ।"

किरसन जी ने उठते हुए साथी को हाथ पकडकर फिर बिठा दिया—"अभी तुमने सेकिड हीरो कहा, अभी हीरो कहने लगे? लेकिन कुछ-न-कुछ तुम्हारे लिए जरूर रिर्ज़व रख दिया जायगा। बैठो, अभी कहाँ जाते हो?"

"नही, तुम्हारा टाइम खराब हो रहा है। तुम्हे जल्दी-से-जल्दी इन के साथ किसी फैसले पर आ जाना जरूरी है।"

"इतजारी में बडा मजा है। अभी सौ-दो-सौ रुपए ही लेकर घर से चला है। मैं कह रहा हूँ यहाँ किसी बैक में हिसाब खोलो, रोज टाल रहा है। इसीलिए मैं भी…"

साथी ने पूछा—"हीरोइन किसे ले रहे हो? उसके साथ इंट्रोड्यूस

कराई या नही ?"

"जब तक यह पांच-छै फीगरो का बैक-बैलेंस नही दिखाता तब तक कौन ऐसा बेवकूफ है ?"

"अच्छा अब बहुत हो गया। जल्दी तय कर लो। देर करनी ठीक नही।"

दोनो मेज पर से उठ गए। साथी किरसन जी से हाथ मिलाकर चल दिया। भन्नन जी अपनी कुर्सी मे से उठ गए।

किरसन जी बोले—"आपको देर तो नही हुई ? एक प्रोडयूसर हैं ये। बहुत जल्दी कोई सोशल सबजैक्ट हाथ मे लेना चाहते है। मैंने आपका नाम बता दिया है इन्हे। अब एक दिन इनके ऑफिस मे ही आपको ले चलूँगा।"

"लेकिन—" भन्नन जी ने एक हाथ पर दूसरा हाथ फेर कर कहा।

"बहुत बडी पिक्चर बना रहे हैं। रुपए की कोई परवा नही है इन को। आँख बद कर खर्च करने को तैयार है। अभी मुझे बुला गए है। आप कोई स्टोरी सोचिए, खूब बढिया! जो आज तक किसी से सोची न गई हो। ग्रिप हो उसमे, ससपेंस हो! जबर्दस्त बॉक्स ऑफिस हिट हो! पब्लिक टूट पडे उस पर।"

भन्नन जी की लार टपकने लगी। करीम चाचा और हरीश ने जो किरसन की तसवीर उनके दिमाग में उतारी थी, उसका रग उडने लगा था। फिर उनके कानो में प्रतिध्वनि जाग उठी—"किरसन साला नबरी लोफर है।"

किरसन जी भन्नन से पीछा छुडाकर बाहर को जाने लगे। उन्होने जल्दी से उनकी राह रोककर कहा—"लेकिन आप मेरे बीस रुपए दे दीजिए।"

"तीन दिन से मैं तुम्हारे लिए टैक्सी में घूम रहा हूँ। तमाम प्रोड्यूसरो से मैंने तुम्हारे बाबत बातें की है। बीस रुपए मेरी गाँठ के और लग गए। बीस रुपए मैं दूँ या बीस रुपए आप निकालें। मैंने अभी

तक कहा नही । सोचा था, जब आपका काम बन जायगा तो लूँगा । भानुदेव जी आप तो मुझे बडे पक्के बिजिनस्मैन जान पडते है ।"

"मैं यहाँ परदेस मे हूँ । कल मेरी बाजार मे जेब काट कर किसी ने बटुवा निकाल लिया । मैं बडे कष्ट में पड गया ।"

"ह-ह-ह !" किरसन जी हँसता हुआ बोला—"बडी बात के लिए बडी सेक्रीफाइस की जरूरत है । भगवान् चाहेगे तो बहुत जल्दी आपका कुछ-न-कुछ तय हो जायगा । आप स्टोरी लिखकर लाइए, लिखी कोई ?"

"अभी तो नही लिखी ।"

"क्या कहूँ फिर ? मैं अभी आपको उनके आॅफिस मे ले जाकर सौ-पचास रुपए दिलवा देता । कल को लिखकर ला सकते है ?"

"इतनी जल्दी ?"

'सिनोपासिस ही तो । दो-चार घटे में लिखा जा सकता है । सिर्फ उन्हे दिखाने के लिए, बाकी बाते तो मैं खुद कर लूँगा ।"

भन्नन जी सोचने लगे—"भग के गोले तो है । चारो एक साथ खाकर सभव है कल्पना के भीतर कोई द्वार खुल जाय ।"

"मेरी समझ में चले जाइए और लिखना शुरू कर दीजिए, कल तक न सही परसो को सही ।"

"अच्छी बात है । कहाँ मिलेगे आप ? कल को ले आऊँगा लिखकर ।"

"मैं यही मिलूँगा बारह बजे तक ।"

"उसके बाद कहाँ मिलेंगे ?"

"फिर कोई ठीक नही ।"

भन्नन जी नमस्ते कह विदा हो गए ।

तेरह

घर आकर भन्नन जी ने दो गोले चढाकर लिखना शुरू किया । नशा कुछ हुआ या नही भगवान् जाने । प्लाट वही अछूतोद्धार का-लिया । किरसन जी का यह आश्वासन उनके दिमाग में घूम रहा था—"कुछ लिखकर ले आओ । बाकी बातचीत कर मैं काम बना लूंगा ।"

करीम चाचा घर को चल दिए थे । ऑफिस बद कर हरीश ने आकर पूछा—"क्यो पडित जी, आते ही क्या लिखने लगे ?"

"भाई लिखना एक तरह का पागलपन है । अवसर-अनवसर, रात-आधीरात, घर में, वन मे जहाँ भी सूझ पडा यह दिमाग की खाज है, बिना कलम की नोक से खुजाए चैन ही नही पडता ।"

"अच्छी बात है, तब आपको ज्यादे बातो में लगा देना ठीक नही । मैं भी जरा भायखला तक घूम आता हूँ, सब्जी खरीद लाता हूँ ।"—कहकर हरीश चला गया ।

भन्नन जी फिर लिखने लगे । कुछ देर में कौशल आ पहुँचा । उसकी

बगल में एक मोटी किताब थी। उसने उसे पंडित जी की मेज पर पटक-कर कहा—"लीजिए, ले आया मैं यह डिक्शनरी। ऑफिस में पड़ी थी एक। मैं बड़े बाबू से माँग लाया दस-पाँच दिन के लिए।"

"रख दो। मैं स्टोरी लिख रहा हूँ।"

"जरा देख लीजिए न पंडित जी। मैं कहता हूँ आप से, अंग्रेजी आ जायगी तो फिर आपकी स्टोरी टैकनीकलर हो जायगी आपने-आप।"

भन्नन जी ने डिक्शनरी खोलकर कहा—"अजी यह तो बिलकुल अंग्रेजी है। मैंने हिंदी मानेवाली कहा था। इसे कौन समझेगा?"

"तो इसे लौटा आऊँ?"

"हाँ, लौटा आओ कह रहा हूँ।"—भन्नन जी ने लिखते-लिखते कुछ उद्विग्न होकर कहा।

"तो बाजार से खरीदनी पड़ेगी? पंडित जी अगर मेरा नोट न निकल गया होता तो मैं आज ही ले आता।"

"तुम्हारा तो सिर्फ नोट ही निकला यहाँ तो नोट के साथ जेब भी काट ले गया।"

"अब पहली तारीख तक गई बात।"

"मेरी कही तुक बैठ गई तो मैं ला दूंगा डिक्शनरी।"

"गए थे क्या आज किसी से मिलने? स्टोरी लिख तो रहे हैं आप। आशा दिलाई है क्या किसी ने कुछ?"

"बस आशा ही आशा समझो।"

"बिना विश्वास के आशा में कोई फूल नहीं लगता पंडित जी और बिना अंग्रेजी के विश्वास फलदायक नहीं होता।"

भन्नन जी लिखने ही में लगे रहे, उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया। एक झूठी नशे की कल्पना में वे लिखते जा रहे थे। सोच रहे थे कौशल यहाँ से टले तो बाकी दो गोलियाँ भी निगल जाऊँ। लेकिन कौशल कहाँ जाता? सारा शहर घूमकर तो वह आ गया था।

वह भी एक कुरसी पर अंग्रेजी की प्राइमर खोलकर बैठ गया। उसे

वही जमा देख भन्नन जी ने जेब से चार पैसे निकालकर कहा—"लो दो पत्ते पान के तो ले आओ।"

"पैसे रहने दो मेरे पास है।"—कहकर वह चल दिया।

भन्नन जी ने जैसे ही जेब से भग की गोलियाँ निकाल मुँह मे डाली ही थी, कि माथा पकडे कराहता हुआ प्रेम आ पहुँचा।

मुँह पर हाथ रख "वॉव-वाँव" करते हुए भन्नन जी गुसलखाने की तरफ लपके और वहाँ पानी की घूंटो से मुँह की भग निगलकर प्रेम के पास आ गए।

प्रेम मुँह लटकाए कमर पर हाथ रखकर एक कुर्सी में बडा असहाय होकर बैठ गया था।

भन्नन जी ने उसके कधे पर बडी समवेदना का हाथ रखकर पूछा—"क्यो प्रेम क्या हाल है ?"

"फिर बुखार आ गया पडित जी।"

"अच्छा, फिर बुखार आ गया ? लेकिन तुम्हे इसकी तरफ से इतना लापरवाह होना नही चाहिए। कल से काम पर मत जाओ। पाँच-चार दिन की छुट्टी ले लो।"

"छुट्टी कैसे ले लूं ? मालिक अहमदाबाद गए है। कुछ जरूरी काम मुझे सौप गए है। उनके आने तक उसे पूरा करना है। अगर न कर सकूंगा तो मालिक का हर्ज होगा और मेरे ऊपर से उनका विश्वास उठ जायगा।"

"होने दो हर्ज। जिदगी है तो दूसरी जगह मिल जायगी नौकरी।"—भन्नन जी लोटा उठाकर शौच को चल दिए।

पान लेकर कौशल आ पहुँचा—"कहाँ गए पँडित जी ? क्यो प्रेम कैसी है तुम्हारी तबीयत ?"

"ढीली ही है।"

"मैं तुम्हे अस्पताल ले जाता लेकिन मुझे आठ बजे मोटर धोने को जाना पड़ता है और हरीश खाना न पकाए तो काम कैसे चले सबका ?"

"मैं अकेले ही चला जाऊँगा। अस्पताल जाने में क्या रखा है ? उतनी दूर कारखाने तक तो जाता ही हूँ।"

"तुम बोलने मे सकोची स्वभाव के हो । एक आदमी साथ रहेगा तो कोई हर्ज नही है।"

"देखा जायगा।"

"तुम परहेज भी तो नही रखते। बराबर भात खाते रहे।"

"आज तो रोटी ही खाई थी।"

जब पडित जी गुसलखाने मे गए, लोटा और हाथ धोने । कौशल चिल्लाया वही से—"पडित जी कल को आपको एक तकलीफ करनी पड गई। प्रेम की तबीयत नही सँभल रही है।"

हाथ-मुँह धोकर पडित जी आ पहुँचे और उन्होने कागज-कलम सँभाले—"हाँ भाई मै भी इनसे कह रहा हूँ, दो-चार दिन आराम करो। आराम भी दवा से कुछ कम प्रभाव नही रखता।"

"आप कल को इसके साथ अस्पताल तक हो आवे तो बडी कृपा हो।"—कौशल ने पान की पुडिया उठाकर उन्हे दी।

भन्नन जी ने पुडिया खोलते हुए कहा—"तुम लोग भी लो।"

"नही, मैं तबाकू छुडवा लाया हूँ इनमें। हमें कोई जरूरत नही।"

भन्नन जी दोनो पान मुँह में रखकर बोले—"लेकिन भाई, मुझे कल एक प्रोड्यूसर से मिलने जाना है सुबह।"

प्रेम बोला—"मैं खुद चला जाऊँगा।"

भन्नन जी ने उस अछूतोद्धार की कहानी पर आगे कलम सरकाई और वे अपने कमरे के एक अछूत साथी पर ही कोई दया नही दिखा रहे थे। वह लिखी जानेवाली कहानी उनकी कलम की नोक पर अपने-आप में ही रो पडी।

बाकी दोनो गोलियाँ निगल जाने पर भी उनके कोई नशा नही जमा एक तरफ से कौशल ने अपनी बड-बड लगा दी, दूसरी तरफ प्रेम करा-हने लगा था । फिर भन्नन जी की कलम नही सरकी आगे को । वे

माथा पकडकर बैठ गए।

कौशल ने कहा—"प्रेम तुम्हारा बिस्तर फैला देता हूँ, तुम आराम करो। खाने को है कुछ इच्छा ?"

"नही भाई कुछ भी नही। पाव भर दूध ला देना उतना काफी है।"

कौशल बोला—"पडित जी अभी लिख रहे है तब तक तुम्हारा बिस्तर इसी पलँग पर फैला देता हूँ।"

भन्नन जी बोले—"मै लिख चुका अब और नही लिखा जाता।"

"तो अभी से सो जाएँगे क्या ?"

"कुछ माथा मेरा भी भारी जान पडता है।"

"खाना तो खायेगे ही।"

"देखा जायगा।"

कौशल ने प्रेम का बिस्तर जमीन पर हो फैला दिया और कराहता हुआ बीमार उसमें जा पडा। भन्नन जी अपनी दरी फैलाकर पलँग मे लेट गए।

कौशल ने बिजली की बत्ती जलाकर कहा—"पडित जी संध्या तो कर लीजिए। आने के दिन तो आपने बडी पाठ-पूजा की थी।"

"असल में सध्या-पूजा चौबीसो घटो ही की है। हमारा लेख-पढ, बात-चीत, चलना-फिरना, खाना-पीना सभी क्यो न भगवान् को समर्पित हो ?" उस बीमार हरिजन की पलँग में लेटकर पडित जी के बडे उदार विचार हो गए—"तब वह सब पाखड रचना था मै अब कुछ सच्चाई की तरफ बढ रहा हूँ।"

प्रेम ने भूमि पर पड़े-पडे बडी जोर से कराहा।

कौशल ने पूछा—"किसकी कहानी लिख रहे है आप यह ?"

"अछूतोद्धार की।"

फिर प्रेम ने कराहा।

हरीश तरकारी लेकर आया। उसने खाना बनाया सभी ने खाया-पिया। प्रेम के लिए कौशल दूध ले आया था लेकिन उसने उसकी कोई

घूँट पीने से भी इनकार कर दिया।

सुबह फिर प्रेम ठीक हो गया। कमजोरी जरूर बढती जा रही थी उसकी। भन्नन जी ने सुबह उठकर अपनी कहानी का सिनोपसिस पूरा कर लिया। चाय पीकर आठ ही बजे स्टूडियो की तरफ चल दिए।

किरसन जी ने दस बजे मिलने को कहा था, पर वे अस्पताल की झझट से बचने के लिए खिसक आए थे। उन्होने मन में सोचा—"एक चक्कर लगाकर देख तो लूँ होटल मे, सभव है मिल जायँ।"

ज्यो ही वे होटल का चक्कर लगाकर लौट रहे थे। एक बड़ी प्रीति और आदर-भरी आवाज आई पीछे से—"अजी पडित जी महाराज।"

लौटकर जो देखा तो एक व्यक्ति उन्हे हाथ जोडकर बोला—"आइए न चाय पीजिए।"

भन्नन जी ने उसे पहचान लिया। वही व्यक्ति था वह जिसे कल उन्होने किरसन जी के साथ चाय पीते देखा था। किरसन जी ने एक प्रोड्यूसर कहकर उसका परिचय दिया था। इसी से भन्नन जी का उस पर मोह बढा। वे तुरत ही होटल के भीतर घुस गए।

उस व्यक्ति ने बडे आदर-सम्मान से उन्हे एक कुरसी दी और बॉय से बढिया चाय लाने को कहा।

"टोस्ट भी लेगे ?"—उसने भन्नन जी से पूछा।

भन्नन जी ने मौन सम्मति जताकर कहा—"कल आप किरसन जी के साथ यहाँ बातें कर रहे थे ?"

"जी हाँ, मैं आप लोगो का एक नाचीज सेवक हूँ। मुझे साधो कहते हैं।"

भन्नन जी ने सोचा—"जरूर किरसन जी ने मेरा प्रोपागैंडा किया है। तभी तो यह इतना बड़ा प्रोड्यूसर इतनी नम्रता से मेरे साथ बात-चीत कर रहा है।"

"टोस्ट भी लाना।"—साधो ने कहा।

"श्रीमान् साधो जी, कब है आपकी पिक्चर का मुहूरत ?"

"कई पिक्चरो का हिसाब लगाया तो है। देखिए जब हो।"

भन्नन जी बोले—"देखिए साहब, बडी आशा से मैं भी आया हूँ आपकी बबई में।"

"अगर आपको कोई अच्छा डायरेक्टर मिल जाय, तजरबेकार, जो अपना मतलब न देखकर हर वक्त पिक्चर की ही भलाई सोचनेवाला हो, अच्छी स्टोरी और अच्छे एक्टरो को छाँटकर ले और मिल जाय एक प्रोडक्शन मैनेजर जो एक-एक पैसे का हिसाब रखे और उसे समझ-बूझ-कर खर्च करे।"

भन्नन जी उसकी बातो को कुछ समझकर और कुछ न समझकर बोले—"अजी मैंने दर्जनो उपन्यास लिख डाले है । आप हिंदी पढ़ सकते है ?"

"अच्छा आप खुद स्टोरी रायटर भी है । बदकिस्मती से मै हिंदी नही जानता। लेकिन आप स्टोरी मुझे किसी दिन सुनाइए तो मै समझ जाऊँगा। अभी है आपके थैले में कोई स्टोरी ? सुनाइए न ?"

भन्नन जी ने एकदम बिना किरसन जी की राय के उसे स्टोरी सुनाना उचित न समझा । वे बोले—"भला आपको स्टोरी न सुनाकर कहाँ जाऊँगा ?"

बॉय ने चाय और टोस्ट मेज पर रखे। साधो बोला—"लीजिए।"

दोनो चाय पीने लगे।

साधो बोला—"देखिए साहब, ट्रेजिक, कॉमिक कैसा ही रोल दे दीजिए किस खूबी से अदा कर देता हूँ । बूढा या जवान किसी का भी पार्ट दीजिए चाल-ढाल ही नही आवाज मे भी एक-एक साल का फरक दिखा सकता हूँ । इस बात को भी छोडिए । मुझे किसी एक्ट्रेस की जगह तो छीननी नही है। लेकिन मैं सही मेक-अप और कपड़ों मे अपनी आवाज और अदा से बडे-से-बड़े डायरेक्टर को भी धोके में डाल सकता हूँ।"

"कैसा धोका ?"

"एक्ट्रेस का धोका और कैसा ? कोई भी नही पहचान सकता पब्लिक में कि यह औरत का पार्ट करनेवाला साधो है।"

भन्नन जी ने खुश होकर कहा—"अच्छा आप इतने बडे एक्टर भी हैं। मेरा दुर्भाग्य है मैने कभी आपका कोई पार्ट देखा नही।"

"पुरानी फिल्मो की बात छोड दीजिए। बडे घमडी डायरेक्टरो से वास्ता पडा मेरा। क्या करता ? चास क्यो गँवाता ? करना पडा जैसा नाच नचाया उन्होने मेरी नाक मे डोरा डालकर। कभी फिल्म के एक फुट में उन्होने मुझे फ्री एक्शन नही दिया। मैं तो मूड में आकर डॉयलागो की भी हजामत कर सकता हूँ।" साधो ने मेज पर हाथ पटका।

भन्नन जी अपने मन मे सोचने लगे—"बड़ी बहुमुखी प्रतिभावाले लोग है यहाँ सिनेमा के जगत मे। अभी मेरा सबने परिचय भी तो नही हुआ है।"

साधो बोला—"अब एक दिन आप चलिए मेरे साथ रोशन स्टूडियो में वहाँ मेरी नई अफलातून नाम की फिल्म बन रही है। उसके रश प्रिंट दिखा लाऊँगा मैं आपको। तब आपको पता चलेगा साधो किधर जा रहा है। अजी मै अपने एक्टिग से सारी इडस्ट्री के एक्टरो का ट्रेंड बदल दूंगा। सब मेरी एक्टिग, मेरे स्टाइल की कॉपी न करने लगें तो मेरा नाम साधो नही!" उसने फिर जोर से फर्श पर पैर ठोका। मेज से टकरा गया उसका जूता। प्याले भी आपस में भिड़कर खनक उठे।

भन्नन जी ने हाथ लगाकर उन्हे गिरने से बचाया और वे बोल उठे—"बॉय, ये प्याले उठा ले जाओ।"

लडका आकर प्याले उठा ले गया।

भन्नन जी बोले—"मैं भी अभी आपसे क्या कहूँ श्रीमान् जी, जब आपको अपनी स्टोरी सुना लूंगा। तब वह स्वयम् ही बोल उठेगी।"

साधो मन में सोचने लगा—"इस प्रोड्यूसर को अपने रुपए का कोई घमंड नही है। कपडे-लत्ते सब सिंपल, चाल-ढाल भी सादा। स्टोरी भी लिखता है, जरूर पहले अपनी ही स्टोरी हाथ में लेगा। अजी स्टोरी

किसी की भी हो। मुझे तो कोई बढिया पार्ट मिल जाना चाहिए। लेकिन अगर इसने कोई मशहूर डायरेक्टर छाँटा तो वह साला अपने दोस्तो को आगे बढाएगा, मुझे तो किसी कुली का भी पार्ट नसीब न होगा। इसलिए इसके सामने किरसन जी की तारीफ करनी चाहिए कि यह उसे डायरेक्टर बना ले अगर ऐसा हो गया तो मैं किरसन जी के बाप से अपने लिए फर्स्ट हीरो का पार्ट धरा लूंगा।"

और उसी समय भन्नन जी सोच रहे थे—"यह प्रोड्यूसर बडा विनम्र है। बिना मोटर और खुशामदी लोगो से घिरे हुए यह पैदल ही मामूली होटलो मे चाय पीता फिर रहा है। या मोटर कही उधर स्टूडियो के पास हो। स्वयम् एक्टिग भी करता है, करे, मुझे इससे क्या ? मेरी स्टोरी बिक जानी चाहिए।"

साधो बोला—"किरसन जी बहुत होशियार आदमी है। सारी इडस्ट्री में ऐसा कोई नही है, जो इन्हे न जानता हो। काम ऐसा कोई नही जो इन्हे न आता हो। लेकिन बहुत सीधे आदमी, कभी बनते नही—अनएज्यूमिग ! एडिटिग से लेकर डायरेक्शन तक सब कुछ जानते है।"

"डायरेक्शन भी जानते हैं ?"

"हाँ, मैं कहता हूँ बडे-बडे डायरेक्टर इनके पैरो के पास बैठकर कई-कई साल तक सबक ले सकते है। आप पूछेगे तो कभी हाँ न कहेगे। बात ऐसी है जिम्मेवारी से बहुत डरते हैं। मुझे इस बात का पक्का यकीन है, ये जिस पिक्चर को डायरेक्ट करेगे, वह जरूर पास होवेगी—आपको इस बात को दिल में रखना चाहिए। डायरेक्टर तो सैकडो पावेंगे आप बबई मे, लेकिन ऐसा सच्चा, ईमानदार कोई नही मिलेगा।"

"आप ठीक कह रहे है श्रीमान् साधो जी। मैं उन्ही से बातें करने आया हूँ। यही मिलने को कल कहा था उन्होने। कितने बजे तक आयेंगे ?"

"क्या ठीक ? घर से एक काम के लिए निकलते है। बीच में दूसरे-

वादा किया था ।

भन्नन जी ने सोचा—"इतनी देर घूम आऊँ कही जाकर ।"

जरूरी काम भंग लाने का ही था लेकिन पैसा खर्च कर भी भग नकली मिली । सोचने लगे—"हरीश से कहकर कोई नया रास्ता निकाला जायगा ।"

कुछ दूर तक वे पैदल ही घूम आए। दस बजे तक वहाँ लौट आए। दस से ग्यारह बजे तक वे वहाँ के चक्कर काटते रहे, लेकिन किरसन जी का कोई पता नही चला । कुछ लोगो से पूछा भी, कोई कुछ नही बता सका । अंत में निराश होकर वे डेरे पर लौट गए । हरीश ऑफिस के बाहर एक स्टूल पर बैठा था ।

भन्नन जी ने पूछा—"अभी कोई नही आया ऑफिस में ?"

हरीश उनके साथ-साथ कमरे को चला—"एक पिक्चर के मुहूरत में गए है ।"

"करीम चाचा ?"

"वे भी वहाँ नही ।"

"प्रेम अस्पताल गया था ?"

"इतवार को छुट्टी के दिन जाएगा कहता था ।"

"खाना खाया उसने ?"

"हाँ, आपके लिए भी रखा है, खा लीजिए । चाय बना दूँ ?"

"चाय तो मैं पीकर आया हूँ, एक प्रोड्यूसर साहब के साथ ।"

हरीश ने चौककर पूछा—"कौन प्रोड्यूसर मिल गया ?"

"बडे सीधे स्वभाव का, साधो उसका नाम है । वह बडा नामी एक्टर भी है । अफलातून नाम की एक फिल्म में काम कर रहा है वह आजकल ।"

"साधो नाम का कौन प्रोड्यूसर है ?" हरीश ने मन-ही-मन गुन-गुनाकर अपने से पूछा, फिर भन्नन जी से बोला—"मोटर कैसी थी उसकी ?"

"मोटर का तो कुछ ख्याल नही किया।"

"अफलातून नाम की कोई पिक्चर बन रही है, ऐसा भी तो नही सुना।"—हरीश हँसने लगा।

"तुम हँस रहे हो ?"

"बात ऐसी है पडित जी, मैंने इस सिनेमा की लाइन मे खयाली घुडदौड बहुत देखी है। असल मे इसकी दुनिया ही ऐसी पोली है। नकली रग-बाल और पोशाक पहनकर आदमी कुछ-का-कुछ बन जाता है। प्लाईउड की कीलो से जड़कर राज-सिहासन तैयार हो गया, चौखटो मे कैनवस ठोक, रग के बुरूश मारकर हो गया राजभवन और कांच के रगीन जवाहरात जडकर पहन लिया राजमुकुट ! एक झूठे विश्वास का जगत ! वैसे ही झूठे राजाओ के झूठे मत्री ! वैसे ही खयाली दुनिया में रहनेवाले इक्टर-एक्ट्रेसे !"

भन्नन जी ने तत्वज्ञान का वखान किया—"हरीश भाई, वास्तविकता है भी और क्या ? जिसे तुम असली ठोस राजभवन और राजसिहासन समझते हो, रत्न-सूवर्ण के राजमुकुट कहते हो ? कहाँ हैं वे ? कहाँ गई अशोक की महिमा ? गुप्तो का वैभव कहाँ विलीन हो गया ? अकबर, सिकन्दर, सीजर, नैपोलियन कहाँ समा गए ? सब स्वप्न ही तो है।"

"पडित जी आपका दिमाग किताब ही लिखने मे लगा रहा अभी तक। यहाँ सिनेमा लाइन मे बडे-बडे हजरत लोग हैं, आप को धीरे-धीरे पता हो जायगा। कहानी नही सुनाई आपने प्रोड्यूसर साहब को कोई ?"

"जब तक अच्छी तरह विश्वास न हो जाय।"

"विश्वास उपजता है," तर्जनी पर अँगुठा उछालते हुए हरीश बोला—"नकदनारायण से। वही तो सब-कुछ है।"

भन्नन जी सोचने लगे—"यहाँ तो बीस रुपए और उलटे अपने फँसा आया हूँ। पेशगी लेने की बात तो अलग रही।"

"बेनू बाबू से अभी गोवर्धन पांच सौ का चेक ले गया है स्टोरी के

लिए। तीन महीने पहले भी पाँच सौ ले गया था, उसका कोई हिसाब ही नही है। एक लाइन भी अभी लिखकर नही दी है। कहता है अभी मूड ही नही आया।"

भन्नन जी की लार टपकने लगी। उन्होने अपने जेब की कुल जमा को याद किया—"अट्ठारह नोट होगे पाँच-पाँच के। कम-से-कम बीस रुपए तो हरीश को देने ही पडेगे, खाने-पीने के लिए।"

"बहुत पीता है, मालूम नही कैसा मूड है उसका ? शराब और एक्ट्रेसो ने बरबाद कर दिया उसे। सुना है, बडी नेक लक्ष्मी औरत है उसकी देस में। उसे छोडकर यहाँ पडा है। दिन-भर शराब पीकर आवारागर्दी करता है। फूंकने को रुपया मिल जाता है न।"

"नशे की एक चिनगारी-भर मूड जगाने के लिए मैं भी जरूरी समझता हूँ, लेकिन यह दिन-दिन-भर पीते रहना, यह तो मनुष्यता नही है।"

"पडित जी, तुम तो पैसे की पत्ती पीते हो। तुम इसके फेर को क्या जानो ? लेकिन इस मैदान मे लोहा लेने के लिए तुम्हे भी सभी की तरह करना पडेगा। हाँ, सच बात कह रहा हूँ।"

"भाई मैं कैसे ?"··

"अभी कहाँ कह रहा हूँ मैं। जब पैसा शकल दिखाने लगेगा आप को, तभी तो।"

"खैर इस बात को छोडो। ऐसा पैसा कमाने की आकाक्षा नही है मुझे। भगवान् गुजर के लिए दे दे बस। एक बात तो बताओ भाई। अभी तो वह दो पैसे की पत्ती भी नही मिल रही है। क्या बताऊँ आदत की लाचारी है। कल जो गोलियाँ लाया, वे सब नकली थी। पैसे-का-पैसा ठग लिया उसने, नशा चढा ही नही।"

"यहाँ तो कदम-कदम मे नए आदमी के ठगे जाने के मौके हैं। ईमानदार आदमी भी कम नही हैं। लेकिन वे पहचान से ही मिलेंगे।"

"नशे की कोई परवा नही है मुझे। यह कहानी पूरी करनी है

भाई । किसी को सुनाने के लिए कम-से-कम एक तो चाहिए ही ।"

"अच्छी बात है, मैं कोशिश करूँगा देखिए । एक दोस्त है मेरा । वह साधु-सतो के अखाडो में आता-जाता रहता ? । गाँजे का शौकीन है। गाँजा कहे तो मै मँगा सकता हूँ। भग मिले या नही ।"

"गाँजे के लिए फिर बीडी-सिगरेट् भी शुरू करनी पडेगी ।"

"क्या हर्ज है ? सिल-बट्टे, धोने-छानने की आफत भी तो जाती रहेगी पंडित जी ।"

भन्नन जी ने चार पाँच-पाँच रुपए के नोट निकालकर हरीश के हाथो में रखते हुए कहा—"लो भाई अभी इतना ही, बाकी फिर।"

पाँच नोट गिनकर हरीश बोला—"कौनसी लाऊँ फिर ? यह बात है पडित जी, आप तो अभी से मैदान में आने लगे। तभी कर सकेंगे आप गोवर्धन के लेख से मुकाबला । यह हरा पानी पीकर कुछ नही होने-वाला है ।"

भन्नन जी कुछ फीके पडकर बोले—"भाई, यह सब खाने-पीने के खर्च के लिए दे रहा हूँ ।"

"तो महीने के आखीर में दे दीजिएगा ।"

"अभी सौदा कहाँ से लाओगे ?"

"ले ही आते है ।"

"नही, व्यवहार मे साफ होना आवश्यक होता है ।"

हरीश ने नोट रख लिए—"आज शाम जाकर पूछूंगा उससे भग की पत्ती के लिए ।"

"एक काम और कर दो ।"

"कहिए न ।"

"मैं सोच रहा हूँ, पास बहती हुई गगा जी को छोडकर मै कहाँ नदी-नालो को टटोलता फिरूँ ?"

"याने ?"

"बेनू बाबू इतने बड़े मशहूर आदमी । सुना है, तुम्हारे ऊपर वे बड़ी

कृपा करते है ।"

"पडित जी, मैं उनका एक छोटा-सा बैरा, जरा अच्छी तरह हँसकर हुकम देते हैं । कभी डाँटते नही और जब जितना पैसा तनखा में से माँगा, पेशगी दे देते है । यह कौन बडी कृपा है ? सभी के साथ उनका ऐसा बर्ताव है ।"

"मेरा मतलब है, वे पिक्चर बनाना चाहते है, उन्हे स्टोरी की जरूरत है ।"

"तो गोवर्धन लिख तो रहा है उनके लिए स्टोरी ।"

"अभी लिखकर कहाँ लाया है ?"

"उसकी न कहो पडित जी, वह एक ही रात मे लिखकर ले आयेगा । साल भर की कसर घटो मे निकाल देना है । मैं क्या कहूँ उसकी, वह भूत है भूत ! फिर बेनू साहब का वह बडा पक्का दोस्त है ।"

"कहानी न सही, बेनू साहब से भेट तो करा दो । कुछ बातचीत ही हो जाय । फिर एक ही पिक्चर थोडे निकालेगे वे । किसी अगली फिल्म की भूमिका बँध जाय कौन जानता है ?"

"अभी कुछ दिन ठहर जाइए ।"

इतने ही मे ऊपर फर्श बजने लगी नाच की सतुलित चापो पर । भन्नन जी का ध्यान उधर खिच गया । वे बोले—"एक दिन सरिता से ही परिचय करा दो । मैंने सुना है इन्हे साहित्य से भी बडा शौक है ।"

हरीश मन-ही-मन हँसकर बोला—"देखिए, पडित जी, बुरा मानने की बात नही है । आप मेरे मित्र के मित्र है इसलिए मैं आपसे सच-सच कहता हूँ । ये सिनेमा के देवी-देवता है । इनकी दोस्ती आसानी से नहीं मिल सकती । खुश हो जाने पर ये बडे सीधे भी है और दिल के न मिलने पर इनसे ज्यादे बेदर्द और बेरहम भी दूसरा नही । अभी आप आए-ही-आए हैं, जरा बबई की आबहवा बस जाय आपके रूप-रग मे तब मैं जरूर आपसे कहूँगा ।"

भन्नन जी कहने लगे—"मैं खुद ही सोच रहा हूं, दो सफेद पतलून

श्रौर दो कमीज बना लेता हूँ।"

"अंग्रेजी का आना भी जरूरी है पंडित जी, मैंने देखा है। आपस में अंग्रेजी बोलकर ये अंग्रेजी न जाननेवाले को दूध की मक्खी की तरह निकालकर फेंक देते हैं।"

"कौशल से कहा तो है मैंने मैं उसे भी सिखाऊँगा और खुद भी सीख लूंगा। भाषा अभ्यास की चीज है, हम दोनो मिलकर प्रेक्टिस कर लेंगे।"

"अच्छा आप खाना खा लीजिए। गरम करना चाहें तो स्टोव जला लें। मैं ऑफिस मे जाता हूँ।"—हरीश चला गया।

· · खा-पीकर भन्नन जी फिर उस अछूतोद्धार की कहानी को ठीक करने बैठे लेकिन उनका मन भीतर मे कह रहा था, उसमे कोई जान नही।

शाम होने को आई, करीम चाचा फिर नही आए। हरीश राशन लाने चला गया। भन्नन जी ने आज अभी से पलँग पर अपना बिस्तर बिछा दिया। प्रेम का बिस्तर उठाकर अलग रखते हुए वे सोचने लगे—"प्रेम से कोई घृणा नही है मुझे। लेकिन उसे जो बुखार है सभव है वह मरनेवाला हो। यहाँ परदेस मे फिर कौन है मेरा ?"

उसी समय प्रेम भी आ पहुँचा। भन्नन जी ने पूछा—"क्यो प्रेम ! कैसी है तबीयत ?"

"वैसी ही, शाम को फिर बुखार आ जाता है।"

"डॉक्टर के पास गए थे ?"

"हाँ, दवा लाया हूँ। वह कहता है, अडे, मक्खन वगैरह ताकत की चीजें और खूब फल खाओ। पडित जी आप सुबह उठ जाते हैं। यह मैं आपको नोट दे देता हूँ। अंडेवाले से दो अडे और एक टिकिया मक्खन की ले दीजिएगा।"

भन्नन जी ने बहुत डरकर नोट सँभाला। मन में सोचने लगे—"अंडे मे जीवन थोडे है ? उसे तो एक तरह का फल ही समझा जाना चाहिए।"

उन्हे चुप देख प्रेम बोला—"ले देगे न पडित जी । कोई एतराज तो नही है ?"

"किस बात का ? अभी मै बीमार पड जाऊँ यहाँ परदेस में, डॉक्टर ताकत के लिए मुझ से उसे खाने को कहेगे तो क्या मै न खाऊँगा ? दूसरे की सेवा ही हमारा धर्म है।"

लेकिन जब प्रेम भूमि पर कराहते हुए अपना बिस्तर बिछा रहा था तब भन्नन जी ने उससे वा के ऊपर प्रेम के बुखार के जर्म फैला दिए । उन्होने पूछा—"प्रेम, तुम्हे बताया नही डॉक्टर ने यह कैसा बुखार है ?"

प्रेम बिस्तर पर पड गया—"जाने पडित जी कैसा बुखार है। कहते थे आराम करना जरूरी है।" वह मुँह ढककर सो गया।

भन्नन जी ने बिजली जलाई और मेज पर "अछूनोद्धार" की उस कहानी पर दूसरा रग फेरने लगे। लेकिन मन मे भग के नशे का अभाव खटक रहा था । वे सोचने लगे—"ओह, यह किसे ज्ञात था ऐसे आडे समय में भग ऐसी दुर्लभ हो जायगी । यह जानता तो सेर-दो सेर बांध लाता घर ही से।"

कौशल आ पहुँचा—"ले आया पडित जी डिक्शनरी। मैंने भी आज तमाम सेकिड हैड बुकसेलरो के ढेर उधेड़ डाले।" उसने वह डिक्शनरी उनके सामने रखी।

"हाँ यह ठीक है।" वे बोले—"कोई मेरी किताब तो नही मिली ?"

"नही। अब आज ही से शुरू कर दीजिए।"

"अभी दो-चार दिन ठहर जाओ। यह अछूतोद्धार की कहानी जमा लैने दो।"—वे उसे लिखने लगे।

वह कैसे जमती ? वह बीमार अछूत भूमि पर पडा-पडा कराह रहा था और पडित जी ने उसकी पलँग छीन ली थी।

हरीश आ पहुँचा। कौशल बोला—"बडी देर में आए ?"

"हाँ पडित जी के काम में लग गई देर। पडित जी, आपकी चीज

तो नही मिली।"

कौशल बोला—"क्या ?"

हरीश चुप रह गया। भन्नन जी बोले—"भग की पत्ती।"

"आप भग पीते हैं ?"—बडी अजीब शकल बनाकर कौशल ने पूछा।

"फिर कैसे काम चलेगा ?"—पंडित जी बोले।

"गाँजा मिल सकता है।"—हरीश ने उत्तर दिया।

कौशल ने कहा—"मुझे इस समय एक बात याद आती है। दो बनजारे कुछ अनाज लादकर एक दूसरे गाँव को चले। रास्ते में एक पेड़ के नीचे उन्होने गाँजे की दम लगाई। घोडो का मुँह गाँव की तरफ को हो गया था। वैसे ही उन्हे हाँक ले चले वे नशे की झोक मे। कुछ देर मे जब वे अपने गाँव में ही आ पहुँचे तो एक बोला—'भगवान् की लीला! देखो यह गाँव बिलकुल अपने ही जैसा है।' दूसरे ने कहा—'और यह मकान भी मेरे ही मकान की तरह।' पहले की औरत कुएँ से पानी ले जा रही थी। वह बोला—'और यह औरत भी मेरी ही औरत की तरह। जब उस औरत ने घडा जमीन मे रखकर उन दोनो को लताड़ा तो तब जाकर उन दोनो का नशा हिरन हुआ।"

हरीश बडी जोर से हँसने लगा।

कौशल बोला—"क्यो पडित जी कभी लिखते-लिखते आपके तो ऐसा नही हो जाता कि आप कहानी के अखीर मे पहुँचते-पहुँचते शुरू में पहुँच जायँ।"

पडित जी को छोटा पड़ते हुए देखकर हरीश बोला—"यह मुर्गा बडा बदमाश है, अपना तो ड्राइवर की संगत में कभी-कभी दम लगा आता है।"

"और तू क्या छोड देता है ?"—कौशल ने हरीश से कहा।

चौदह

कई दिन बीत गए, किसी दिशा में भी आशा की कोई किरण फूटती हुई नही दिखाई दी। हरीश भाँग भी न ला सका और गाँजा भी नही।

"पडित जी, बात ऐसी है दूकानो पर बिकती तो है नही। एक साधू मेरे जान-पहचान का था, वह हरिद्वार चला गया है।"

बडी निराशा से भन्नन जी बोले—"कब लौटेगे ?"

"क्या ठीक ? साधू ही ठहरे। कही घर और जोरू तो हुई नहीं। जहाँ भी रम गए। आप घबराएँ नही कोई दूसरा तो आएगा।"

'जल्दी इस कहानी की है मुझे।"

"अच्छा तो तब तक आप यह बीडी पीना शुरू करो।"—उसने उन्हे एक बीडी देनी चाही।

"नही भाई, तुम मजाक उडाने लगे।"

"मजाक कैसी ? गाँजा आखीर इसी में भरकर तो पिया जायगा।

बिलकुल मजाक नही कर रहा हूँ पडित जी । यह सुरती-चूना हाथ में मलते हुए आप जरा भी अच्छे नही दिखाई देते । पच्च-पच्च कमरो के कोनो और खिडकियो पर थूकते हुए भी कोई शोभा नही बनती । आपको सिनेमा के भीतर काम करना है । एक सिनेमा के स्टूडियो मे डायरेक्टर ने लाइटमैन को सुरती खाने के लिए नौकरी से बरखास्त कर दिया ।"

"बडी ज्यादती है ।"

"बात कुछ गलत नही । लाइन मैन ने ऊपर से थूक दिया, एक दूसरी लाइट से उसकी आँखे चौधिया गई थी । नीचे डायरेक्टर लेटकर आसमान की तरफ मुँह खोल कोई एक्टिग बता रहे थे हीरो को । ऊपर से लाइटमैन की सुरती का वह पहला पीक सब-का-सब चला गया डायरेक्टर साहब के मुँह में । वह अचकाकर उठे । शायद कुछ उनके गले के भीतर भी समा गया था । "वाऽक्क ! वाऽक्क" करते हुए उन्होने सेट् पर ही कै करनी शुरू कर दी । एक्टर लोग पहले समझे क्या बढिया नेचुरल एक्टिग है । बाद को सारा भेद खुला ।"

भन्नन जी के मन में बात गड गई । उन्होने हरीश के हाथ से बीडी ले ली और उसे धीरे-धीरे सुलगाकर पीने लगे—"लगेगी तो नही ?"

"अजी पडित जी, आप पक्के खिलाड़ी है । हमें बनाते क्यो है ? लोटे-पर-लोटा गोले-पर-गोला भग का चढा जाते होगे । मुट्ठी-मुट्ठी भर सुरती बनाकर दबा लेते हैं होठो पर । ठोस सुरती से कुछ नही होता तो इस धुएँ से क्या हो जायगा ? जरा और लंबी दम खीचिए ।" —हरीश बोला ।

कूछ और लंबा धुवाँ छोडकर भन्नन जी ने कहा—"लेकिन हरीश भाई, बीडी से भी तो हम अपने लिए बड़ा दरजा नही बना लेते ।"

"बीड़ी सीखने पर सिगरेट सीख लेना, फिर सिर्फ पैसे खर्च करने की बात रह जायगी । लेकिन मैंने बहुत-से-मजदूरो के दलवाले डायरेक्टर भी देखे हैं, जो सिगरेट् के मुकाबले में बीड़ी पीकर भी अपना दरजा ऊँचा बनाए रखते हैं ।"

भन्नन जी की समझ में बात आ गई—"सुरती के मुकाबले में ऐसी कुछ बुरी तो जान नही पडती बीडी ।"

"अभी क्या अभी जब इसमे गाँजा भरकर पिएँगे तब देखेंगे आप । अभी तो दो-चार मिनट मलने की बचत है, फिर घटो भिगोने, धोने और घोटने की बचत हो जायगी । उस टाइम में पडित जी आप स्टोरी ही क्यो न लिखे। दम लगाते ही आदमी आसमान में पहुँच जाता है।"—हरीश बोला ।

भन्नन जी उठे, "मै जरा बाहर घूम आता हूँ।" कहकर चल दिए स्टूडियो की तरफ ।

उस समय उसी होटल में किरसन जी और साधो की भेंट हो गई। साधो बोला—"किरसन, देखो भाई मैंने तुम्हारे लिए बडी कोशिश की है। अगर तकदीर चेत गई तो डायरेक्शन दिला दूँगा मैं तुम्हें एक पिक्चर का।"

"सच ! बाइ गॉड ?"—किरसन ने उससे हाथ मिलाया ।

"क्यो तुमसे झूठ बोलूँगा ?"

"स्टोरी किसकी है ?"

"खुद प्रोड्यूसर ही की।"

"दोस्त इक्सेप्शन की बात छोडो । लेकिन यह प्रोड्यूसर के दिमाग मे जहाँ घुसी नही कि सारा बेडा गर्क । मै ऐसे डायरेक्शन से बाज आया, मैं अपना डास डायरेक्टर ही अच्छा। बदनामी से बहुत डरता हूँ। अगर पहली पिक्चर पास न हो सकेगी तो फिर लाइफ मे दूसरा चांस कौन देगा ?"

"स्टोरी किसी अच्छे राइटर से ठीक करा लेना । कुछ मैं मदद दे दूँगा, कुछ तुम अपना दिमाग लगा लेना, भाई, यह तो टीम वर्क है। एक ही आदमी कहाँ तक कुछ कर सकता है।"

होठो पर मुसकान पैदाकर चाय पीते हुए किरसन जी ने धीरे-धीरे पूछा—"कौन है वह प्रोड्यूसर ? यहाँ का या बाहर का ?"

"बाहर का, मैंने बडी लम्बी-चौडी तारीफ़ कर दी है तुम्हारी, बस अब किसी दिन किसी बढिया होटल मे उसे हीरोइन कलाबाला के दर्शन करा दो तो फिर सारा खेल हमारा है।"

किरसन जी का दिल भीतर-ही-भीतर फुदकने लगा—"लेकिन बताओ तो सही कौन है वह ?"

"बात जब पक्की हो जायगी, तभी खोलूंगा।"

भन्नन जी ने किरसन जी की खोज पहले स्टूडियो में की। वहाँ से पता चला वे होटल मे है दूर से उन्होने जब साधो के साथ उन्हे बातें करते देखा तो वे खिसक गये। उस दिन किरसन जी ने साधो के सामने उनकी बडी उपेक्षा कर दी थी, इसी डर से वे आज किनारा काट गए। लौटकर फिर अपने डेरे पर जा पहुँचे।

आॅफिस के बाहर करीम चाचा खड़े-खडे बीडी सुलगा रहे थे। भन्नन जी को आता देखकर बोले—"लो पडित बीडी पियो।"

भन्नन जी बीडी को लेते हुए जरा सकोच मे पड गए।

"क्यो पीते क्यो नही ? शुरू तो कर दी है।"

भन्नन जी ने हँसकर उनके हाथ से बीडी ले ली। इसी समय हरीश एक बडा पार्सल लाकर बोला—"यह तुम्हारा पार्सल आया है।"

भन्नन जी बहुत खुश हो गए। वही से पार्सल खोलते हुए अपने कमरे को चले। सुतली खुली नही तो, दाँत से काटने लगे। करीम और हरीश भी उनके साथ-साथ गए। करीम बोला—"दाँत टूट जाएगा पडित जी, ऐसी नादानी करने की उमर नही है तुम्हारी। लो मैं छूरी देता हूँ।"

करीम ने सब्जी काटने की छुरी दे दी उन्हे। खटाखट डोरे काटकर भन्नन जी ने तमाम किताबें मेज पर फैला दी। हरीश हाथ में एक-एक किताब लेकर देखने लगा। करीम ने दूर ही से उनकी सख्या और रगीन कवरों को देखकर कहा—"क्यो पडित, ये सब किताबें कहानियों की ही है और तुम्हारी ही लिखी हुई ?"

"जी हाँ।"

"मैं बताऊँ तुम्हे । तुम इन्हे लेकर चले जाग्रो फेमस मे । इतने प्रोड्यूसर है वहाँ । एक तरफ से शुरू करो, एक-एक का दरवाजा खटखटाओ । उनमे जाकर कहो, तुम्हे स्टोरी की जरूरत है और मैं स्टोरी-रायटर हूँ । ये तमाम किताबे फैला देना उनकी मेज पर ।"

हरीश ने कठिनाई का पहाड बीच में लाकर रख दिया—"लेकिन चाचा जी वहाँ हिंदी जाननेवाले है कितने ?"

"न हो, क्या उनके आँखे भी नही है ? इतनी बढिया छपी तसवीरे देखकर भीतर की कहानी का मतलब नही लगा सकते तो चौपाटी मे मूँगफली के छिलके उतार-उतार कर फेरी लगावे ।"

हरीश ने फिर कहा—"जरा इनको कपडे भी ठीक कर लेने चाहिएँ ।"

"एक्ट्रेस थोडे हैं ये जो रूप और शकल दिखाने जाएँगी । स्टोरी-रायटर हैं, स्टोरी रायटर ऐसे ही होते हैं । मजनू को देखो, गोवर्धन को देखो । कभी पूरे फैशन में और कभी मैली-फटी धोती ही मे ।"

"चाचा, ये जमे-जमाए हैं, उनकी धाक बधी हुई है इडस्ट्री में, और ये पडित जी नए-ही-नए आए है ।"

"एक पतलून और एक कमीज कितने दिन मे तैयार हो जायगी ?" भन्नन जी ने पूछा ।

हरीश बोला—"यह बंबई है, यहाँ टाइम नाम की कोई चीज नहीं है । यहाँ के सबसे बडे देवता का नाम रुपया है । वह टाइम को भी खरीद सकता है ।"

चाचा ने कहा—"हाँ रेडी-मेड भी मिल सकते हैं और अर्जेंट सिलाई देने को तैयार हो तो अभी घटे-पौन घटे मे मिल जावेंगे ।"

भन्नन जी ने जेब के नोटों का ध्यान कर कहा—"हरीश मुझे यहाँ का कुछ अनुभव नही, मेरे साथ तक बाजार तक चलो तो कपडे बनवा लूँ ।"

"बेनू साहब के आने का बखत है पडित जी शाम को चलेंगे ।"

"अच्छी बात है, मैं तब तक अपने एक दूसरे मित्र के पास हो आता हूँ।"—भन्नन जी बोले।

हरीश ने पूछा—"आपके मित्र ? कहाँ रहते हैं वे ? क्या काम करते हैं ?"

भन्नन जी ने ऐसे ही कल्पना के फेर मे पडकर कह दिया था। हरीश ने जब खुलासा करने को कहा तो घबराए।

चाचा ने कहा—"किरसन-विरसन के फेर में मत पडना।"

"नही जी वे हमारे ही यहाँ के हैं, एक मिल में काम करते हैं। यही परेल में रहते हैं।"

भन्नन जी थैले में अपनी तमाम किताबे भरकर ले चले सीधे किरसन जी की टोह में। होटल मे नही मिले वे। पता चला स्टूडियो मे है, स्टूडियो को चले। आज उन्हे अकल आ गई थी दरबान के पास जाकर बोले—"यह थैला मेरी किताबो का है, इसे भीतर ले जा सकता हूँ क्या ?"

"नही ले जा सकते।"

"इस बखत भी देख लो, आते बखत भी देख लेना।"

"किरसन जी को दिखानी हैं। मैं स्टोरी रायटर हूँ।"

"अजी किसी जी को दिखानी हो, आप कोई क्यो न हो। हमें मालिक का नमक अदा करना है।"

"दरबान का एक साथी वहाँ पर एक सिगरेट का तमाखू निकाल कर उसमें गाँजा मिलाकर भर रहा था। कई दिन से भग-विहीन भन्नन जी का मस्तिष्क भन्ना रहा था। वे सोचने लगे—"वहाँ पर बैठकर गाँजा पीने का ढग तो देख लिया जाय। चेष्टा करने पर कुछ उसका बाहर फैलता धुवाँ भी जल्दी-जल्दी फेफडो में भर सकूँगा तो शायद कुछ स्फूर्ति मिल जाय। अंतत. भाँग और गाँजे में कोई अतर भी तो नही है। सुरती और सिगरेट का सा सबध है। चीज एक ही है सिर्फ सेवन करने के विविध प्रकार—एक ठोस रूप में, दूसरा वायु के माध्यम द्वारा।"

फिर कुछ और गहराई में सोचा उन्होने—"नही गाँजा तो और भी दिव्य रूप है । भग तो सिर्फ पत्ती है—एक हरियाली ! लेकिन गाँजा ?—भग की कलियाँ-फूल ! बरसात और वसत का अतर !"

वे सोचने लगे—एक दम मैं भी लगा लूँगा । बहती गगा मे हाथ धोने से कौन मना करेगा मुझे ? देखता हूँ इस दरबान ने मेरे भले के ही लिए मेरी राह रोक दी है।" लबा बेच पडा था। एक किनारे से वे भी बैठ गए उसमें ।

दरबान ने अपने साथी से कहा—"बद्री, जरा और इधर खिसक आ। बैठने दे इनको भी।"

बद्री ने भन्नन जी से पूछा—"परदेसी हो ?"

"हाँ।" भन्नन जी ने जवाब दिया।

"दम लगाओगे ?"—बद्री ने पूछा।

"जैसी आज्ञा दोगे।"—भन्नन जी बोले।

"लगे दम ! मिटे गम !" बद्री सिगरेट् का पुनर्निमाण कर चुका था। बोला—"दियासलाई है तुम्हारे पास ?"

पडित जी ने गरदन हिलाई—"नही।"

दरबान ने अपनी जेब से दियासलाई निकाली । बद्री ने सिगरेट सुलगाने से पहले जोर से कहा—"जिसने न पी गाँजे की कली, उस लड़के से लड़की भली !" उसने सिगरेट् सुलगाई, एक ही दम में आधे के करीब सोख ली और दरबान को दे दी।

बद्री धुवाँ छोड़कर बोला—"पडित हो ?"

"जी हाँ।"—बडी नम्रता से उन्होने जवाब दिया।

"दम लगाओ, यही आ जायगा किरसन जी। क्या काम करते हो ?"

"किताबें लिखता हूँ।"

दरबान ने बाकी सिगरेट् सोखकर उसका बचा-खुचा भन्नन जी के हाथ में दिया—"लो पडित, जरा सँभाल कर होठ और हाथ मत जलाना। लेकिन नशे के लायक काफी है। खीचो दम।"

भन्नन जी ने खीचकर दम लगाई । खाँसते-खाँसते आँखो में पानी भर आया ।

बद्री बोला—"नए-ही-नए पीनेवाले हो क्या ?"

भन्नन जी ने हँसते हुए कहा—"नही तो ।" वे माथा पकडकर बैठ गए ।

बद्री ने उनका हाथ पकड कर पूछा—"क्यो क्या बात है ? क्या नशा चढ़ गया ?"

"हाँ सिर चकराता है ।"

बद्री ने भन्नन जी को हाथ पकडकर उठा लिया—"चलो, मेरे साथ चलो मैं कर दूँगा तुम्हारा इलाज ।"

भन्नन जी इधर-उधर देखने लगे कही उनकी जान पहचान के किरसन या साधो तो नही चले आ रहे है ।

"क्या देख रहे हो ? चलो मेरे साथ, मैं हरएक से बाते नही करता । मैं हूँ बद्री, बैंक ग्राऊड सीन पेटर । कभी-कभी गाँजे की दम लगाकर ऐसी तसवीर बना देता हूँ कि बडे-से-बडा आर्टिस्ट हैंफ खा जाता है । पढा-लिखा नही हूँ । अगर अँग्रेजी आती होती तो मैं होता आर्ट डायरेक्टर ।"

अग्रेजी की अटक पर ही उसे अटका देखकर भन्नन जी जमीन पर बैठ गए ।

"क्यों क्या बात है ?"—बद्री ने पूछा ।

"बात कुछ नही है, नशा जोर मार रहा है ।"

"हत्तेरी की ! कुछ भी नही ! जिस टुच्चे को तूने चूसा उसमें कुछ था ही नही, सिर्फ तमाखू की पत्ती थी । जान पडता है तूने आज ही गाँजे की दम लगाई है ।"

भन्नन जी उस अपमान को न सह सके । तुरन्त ही उठकर खडे हो गए—' नही जी ।"

"तेरे सीधेपन को देखकर मुझे दया आती है । मैं तुझे एक बात

बताऊँगा । बात नही यह एक मंत्र है—'सम-सम खुल जा ।' चिराग अलाउद्दीन की पिक्चर देखी है तूने ?"

"हाँ ।"—भन्नन जी ने कहा ।

"बस तू मेरी बात समझ जायगा। वह दरबान, होने को मेरा दोस्त है । क्या जरूरत है तुझे उसके पास जा सिर खुजा गिडगिडाने की ? क्यो पूछा तूने उससे कि मैं भीतर चला जाऊं ?"—बडी जोर से भन्नन जी का हाथ पकडकर बद्री चिल्लाया बडे गुस्से मे ।

भन्नन जी हक्का-बक्का होकर रह गए ।

"देख यह बबई है । जहाँ पर पूछेगा आगे बढने के लिए, वही पर रोक लिया जायगा । मैं कहता हूँ, बबई क्या ? सारी दुनिया में यही एक कायदा लागू है।"

बद्री भी गाँजे के धुएँ के सहारे सातवें आसमान पर चढ गया था और कुछ असर भन्नन जी पर भी हुआ ही था । दिमाग का वह चक्कर अब उन्हे नही घुमा रहा था अब वे उस पर सवार हो गए थे ।

बद्री अपनी बात पर जमा हुआ था—"यह मत समझ कि बद्री गाँजे की दम लगाकर बहक रहा है, अरे वह तो दम लगाकर ही अपने आपे मे आता है । जिन सेटो की बैक ग्राऊंड मैंने धुत्त बेहोशी मे बनाई, वे ही सबसे बढिया बनी है । एक ऐसी बेहोशी में बनाई कि रग की जगहें राख घोल गया सरेस में और दूसरी ऐसी कि बुरूस की जगह झाडू उठा लिया था मैंने हाथों मे। यह बाते बाद को बताईं मुझे देखने वालो ने । महीन काम बारीक बुरूस से नही होता तीखे खयाल से होता है।"

भन्नन जी की समझ में आई बात—"बिलकुल ठीक कह रहे हैं आप । चित्र-कला का तो कुछ भी अनुभव नही है मुझे लेकिन साहित्य की बात जानता हूँ। सिखाए हुए कुत्ते की तरह सारा छन्द अपने पीछे-पीछे चला आता है और साँचे में कटते हुए बिस्कुटो की तरह से तुक चले आते हैं बिना प्रयास—न छोटे न बड़े न लम्बे न चौड़े, न हल्के न

भारी, बराबर-बराबर।"

बद्री ने भन्नन जी की पीठ ठोक दी—"शाबाश बात को समझता है तू। बहुत पुराना गंजेडी मालूम देता है।"

"नही, भाँग पीता था। वह कही नही मिल रही है, इस सबब गाँजे की दम लगा ली।"

"अगर पुरानी अमल है तो फिर कानून भी तेरी मदद कर सकता है, क्या फिकर है तुझे। बस वही एक बात समझ ले।"

"हाँ मित्र।"

"कौन बात ?"

भन्नन जी चकराकर दिमाग की तहो में बात टटोलने लगे।

बद्री ने उनकी पीठ मे लबा हाथ ठोककर कहा—"वाह पडित, तुम ऐसी ही कितावे लिखते हो ? अभी बताई बात, अभी भूल गए ?"

"हाँ याद तो आ रही है।"

"अरे मैंने कहा—कही किसी से कुछ मत पूछ। जो कुछ डर तेरे दिमाग मे है उसे कूडा समझ झाड-पोछ कर फेंक दे। जहाँ तुझे जाना है सीधा चला जा। मै कहता हूँ अगर तू बेखौफ होकर बिना पूछे किसी के मकान की अगासी में भी चढ जायगा तो कोई कुछ न कहेगा। यही क्या अगर तू ऊपर चढ कर किसी के चूल्हे मे झाडा भी कर आयगा तो कोई पूछनेवाला नही है। यह मत्र याद रख। जहाँ पर पूछेगा, वही अटक जायगा।"

"हाँ याद आ गया। जा के मन में अटक है, सोई अटक रहा !"

"अच्छा बदा तो चला घर को। एक अघोरी डायरेक्टर मिला है, एक महीने तक एक ही सेट् पर अपनी तसवीर पीट देता है। एंगल बदल देने से क्या होता है—सेट् तो वही है।"

"आप किस स्टूडियो में काम करते है ?"

"उसी में जहाँ तुम जा रहे थे।"

"शूटिंग चल रहा है आपके सेट् में ?"

"हाँ।"

"क्या मैं भी जा सकता हूँ वहाँ ? जरा मुझे दिखा दीजिए तो बड़ी कृपा हो।"

ताली बजाकर हँसने लगा बद्री—"ह ह-ह ! ह-ह ह !" फिर-फिर हँसा वह । नशे का जोर देर तक किसी भी भावना मे जकड लेता है मनुष्य को ।

भन्नन जी की समझ में नही आई बात, कहाँ पर भूल हो गई उनकी ?

बद्री बोला—"अरे तुझे तो अभी मंत्र दिया और तू अभी मुझसे पूछने लगा शूटिंग में जाने के लिए ! पूछता क्या है चला जा । लेकिन दिल से निकाल दे डर को और नीयत रख साफ । फिर चारो दिशाएँ खुली हुई हैं। जा चला जा, पूछ मत, जहाँ पर पूछेगा, वही अटक जायगा।"

बद्री अपने घर को चला गया और भन्नन जी उसकी बात को तथ्यपूर्ण समझने तो लगे—"ऊँची दार्शनिकता है यह ! निर्भयता और नीयत में सफाई हो तो फिर हमारी प्रगति मे कौन है बाधक ?" वे साहस कर फिर उसी फाटक की ओर चले ।

उन्होने मन में निश्चय किया—"इस बार उस दरबान को भुनगा समझ उसकी उपेक्षा कर सीधा बढ जायगा स्टूडियो की तरफ । और भी जितने होगे सबकी यही दशा करूँगा ।"

भन्नन जी ने पास की दूकान से एक सिगरेट खरीदी और उसे सुलगाकर बडे ठाठ से हाथ में पकड़ स्टूडियो के फाटक की तरफ चले । मन मे सोच रहे थे—"इस थैले को सँभालने के बदले इस समय यह हाथ होता पतलून की जेब में तो फिर कौन मेरी शान के खिलाफ कोई बात कह सकता ? भीतर से कम लियाकत नहीं है मेरी । करीब दो दर्जन किताबें लिख चुका हूँ । लेकिन बाहर जाहिर नही है ।"

फाटक पर दूसरा दरबान बैठा हुआ था । भन्नन जी ज्योही फाटक पर पहुँचे थे किरसन जी और साधो दोनों बातें करते हुए बाहर को आ

रहे थे।

भन्नन जी ने दोनो को हाथ जोडे। हाथ की सिगरेट ढीली पडकर भूमि पर गिर गई।

साधो ने जल्दी से सिगरेट उठाकर उन्हे दे दी। उसकी यह हरकत किरसन जी ने बडी घृणा-भरी आँखो से देखी।

साधो ने बडे आदर से पूछा, "आपने सिगरेट् अभी शुरू की क्या ? उस दिन तो आप नही पी रहे थे।"

"जैसा देस, वैसा भेस।"

किरसन जी ने बडी रूखाई से मुँह फिरा लिया। साधो ने उनका मुँह भन्नन जी की तरफ कर कहा—"मेरा यह दोस्त, इसके भीतर बेहद गुन भरे हुए हैं। नेचर भी बडा वढिया पारस पत्थर का-सा है। कभी किसी को धोखा देना तो इसके खून मे ही नही है, बस सिर्फ अपने काम से काम रखता है। खुशामद से दूर न किसी के भले में न बुरे में। इसकी ऐसी आदतो से बहुत से इसे घमडी कहकर बदनाम करते हैं। क्यो पडित जी, आपका भी तो इनसे वास्ता पडा है। आपकी क्या राय है इनके लिए ?"

"बंबई मे सबसे पहले जिस व्यक्ति ने मेरा उत्साह बढाया वह यही है। बबई-प्रवास की अपनी आत्म-कहानी लिखते समय इन्ही के नाम से उसका पहला अध्याय शुरू होगा, इसमे कुछ भी सशय नही है।"—भन्नन जी ने कहा।

"अजी किताब में लिखने से क्या होता है ? कितने उसके पढने और फिर समझनेवाले होते हैं ! इन्हे तो कोई अपनी स्टोरी दीजिए, फिर देखिए कैसा रग खिलता है उसका फिल्म मे !"—साधो ने कहा।

किरसन जी ने अपनी कोहनी से साधो की कोहनी मे ठेस लगाई। लेकिन साधो कुछ नही समझा।

"मैं तो आप लोगो का सेवक हूँ।" थैला दिखाते हुए भन्नन जी बोले—"स्टोरियाँ तो इतनी छपी पड़ी हैं मेरे पास। आप जिसे भी

छाँटकर प्रोडयूस करना चाहे, करे ।"

"मैं ?" घबराकर साधो बोला—"मै तो कोई पार्ट अगर डायरेक्टर किरसन जी मुझे अता फरमायेगे तो दिलो-जान से उसे ठीक-ठीक अदा करने की कोशिश के सिवा और क्या कर सकता हूँ ?"

किरसन जी फेर में पडे कुछ सोच रहे थे।

भन्नन जी ने कहा—"इतनी किताबे आई है मेरी । अभी और भी बहुत-सी है ।"

साधो बोला—"चलिए किसी होटल मे चले । चाय भी पी लेगे और बहस-मुबाहसे के बाद मुमकिन है किसी बिजिनस की भी शकल निकल आये ।"

किरसन जी बोले—"नही जी, कोई जरूरत नही । सब हिन्दी की किताबें है । कौन पढ सकता है इन्हे ?"

साधो बोला—'पडित जी, मेरी समझ में आप स्टोरी के फेर मे न पडें । किरसन जी जिसकी स्टोरी बतायें उसी को ले ।"

भन्नन जी के पैर के नीचे की भूमि सरकती जान पडी । वे मन में बोले—'यह क्या कह रहा है ?'

साधो ने पूछा—"पडित जी, आप कुल कितना रुपया तक लगा सकते है ? उस हिसाब से किरसन जी आपका इस्टीमेट बना देंगे ।"

"रुपया कैसा ?"—भन्नन जी ने पूछा।

"इसका दिमाग खराब हो गया है ।"—किरसन जी ने हँसते हुए साधो की गरदन दबाई।

"श्रीमान् तो आप ठहरे, मेरे पास तो केवल शब्द-ही-शब्द ठहरे।"—भन्नन जी ने साधो की ओर देखकर कहा ।

साधो बोला—"हाँ साहब, जिनके पास पूँजी होती है वे ऐसा ही कहते हैं ।"

दोनो को एक अजीब भूल-भूलैया में पडा देखकर किरसन जी जोर से हँसने लगे दोनों की ओर देखकर—"अच्छे बुद्धू बने हो दोनो !"

साधो अपनी जेब की सिगरेट निकालकर उसे सुलगते हुए बोला—"मैं किस बात का ?"

और भन्नन जी ने अपनी बुझी सिगरेट में भी तेजी देने के लिए उसे दियासलाई की तरफ बढाकर कहा—"आपने कुछ मेरा काम किया ?"

"क्या काम है तुम्हारा ?"

"मेरा प्रोपोगेंडा।"

साधो बोला—"सेठ जी पैसा अपना प्रोपोगेंडा खुद है, तभी तो मैं आपसे पूछ रहा हूँ आप कितना रुपया लेकर यहाँ आए है ?"

किरसन जी ने भडा-फोड कर दिया—"चुप रह, यार साधो, स्टोरी-रायटर है ये, इनके पास कहाँ पैसा ?"

"तूने तो कहा था यह प्रोड्यूसर है।"

"मजाक कर दी होगी।"

दोनो भन्नन जी की तरफ पीठकर जाने लगे, भन्नन जी फिर उनके बीच मे जाकर बोले—"किरसन जी, मैं स्टोरी का सिनोपसिस लिखकर लाया हूँ। साधो जी को दिखा दीजिए।"

"साधो क्या करेगा इसे देखकर ?"

"आपने कहा था, यह प्रोड्यूसर है।"

किरसन जी बोले—"अरे, जैसे प्रोड्यूसर तुम, ऐसा प्रोड्यूसर यह है। लेकिन लगन लगाओ, जी-तोड कोशिश करो अगर तकदीर का सितारा जाग उठेगा तो प्रोड्यूसर बनने में क्या कोई जिंदगी लगनी है ? कभी-कभी कुकुरमुत्ते की तरह एक रात में भी प्रोड्यूसर बनते देखे गए है।"

"तब आप ही देख लीजिए इसे।"—कहकर भन्नन जी ने कहानी का सिनोपसिस किरसन जी की तरफ बढाया।

"क्या देखूँ मैं इसे ? मैंने अंग्रेजी में लिखकर लाने को कहा था।"—बडी तुच्छता-भरी दृष्टि से किरसन जी ने भन्नन जी के सिनोपसिस को अपने हाथ से झाड़ दिया।

भन्नन जी को यह अपमान असह्य हो उठा। तड से उन्होंने जवाब दिया—"हम हिंदुस्तानी, हिंदुस्तान के लिए फिल्म बनेगी फिर अंग्रेजी में लिखने की आवश्यकता क्या है ?"

"मशीने विलायत की बनी है, फिल्म भी वही से आई है। तुम्हारी इस लिखावट को नही पढ सकता कोई।"

"मै पढकर सुनाता हूँ।"

'किसी के पास नही है ऐसा फालतू टाइम।"

"आप मुझे धोका दे रहे है।"

"आप खुद धोके में पडे है। एक ऐसी जबान में लिखकर लाए है, जिसे कोई नही पढ सकता।"

"कैसे नही पढ सकता कोई ? तमाम महाराष्ट्र की भाषा इन्ही देवनागरी के अक्षरो मे लिखी जाती है। गुजराती-बगला भी इन्ही से निकली है।"

"लेकिन भाषा में भी फरक है।"

"यह राष्ट्र की भाषा है हिन्दी। यह जिन्हे नही आती है, उन्हें जल्दी से-जल्दी सीख लेनी पडेगी। सबसे अधिक व्यापक है यह देश में।"

किरसन जी ने दोनो हाथ जोडकर बड़ी नम्रता मे कहा, "बहुत अच्छा पडित जी मै कह दूंगा सब से।"

यह व्यग्य बडा गहरा चुभ गया भन्नन जी के। वे आवेश मे आकर बोले—"लाइए मेरे बीस रुपए।"

"क्या उधार लिए थे मैंने आपसे ?"

किरसन जी का यह वाक्य सुनकर एक क्षण तक भानुदेव शर्मा देखते ही रह गए। वे दोनो दोस्त जाने लगे तो जल्दी से उनके सामने खड़े होकर बोले—"तो क्या आपको भेंट में दिए थे ?"

"जिस काम के लिए दिए थे, जितना दिया था—उतना कर दिया गया।"

"मुझे तो कुछ भी लाभ नही हुआ !"

"एक ही दिन में बोकर खेती लवा लेना चाहते हैं क्या आप ? ऐसी तकदीर का लाडला कोई नही पैदा हुआ है। यहाँ तो फुटपाथों पर सोते, पार्क की बेंचो पर नाश्ता करते बाल सफेद हो गए और अभी तक जहाँ थे, वही धरे हुए हैं। आप क्या समझकर आए थे यहाँ ?"

साधो किरसन जी की कोहनी पकडकर धीरे-धीरे बोला—"क्यो, बात क्या है ?"

"कुछ नही, ये बोले मैं एक स्टोरी-रायटर हूँ, कही मेरी कोई कहानी बिकवा दो। मैंने कहा—भाई, प्रोपोगैंडा तो मैं अपनी जबान से कर दूँगा तुम्हारा, लेकिन पैदल चलने का टाइम किसके पास है ? टैक्सी का खर्चा तो दो। क्या कोई गैरवाजिब बात कही ?"

"ठीक ही कहा।"—साधो बोला।

"बीस रुपये मे राम-श्याम, सोहन-मोहन जितने प्रोड्यूसर थे उनमे से चालीस-पचास के दरवाजो पर तो मैं अपना माथा ठोक आया। अभी सैकडो बाकी पडे हुए है। कौन जाने कब उन्ही मे से किसी की फँसी फस जाए इनकी स्टोरी में। कुछ और टैक्सी के लिए खर्चा दो कहा तो वह भी नही और सिनोपसिस लिख लाए तो इस जुबान में।"

"पडित जी, पैसा खर्च कर ही तो उसके कमाने की उमीद हो सकती है। सिर्फ मचान बाँध लेने से क्या होगा ? शेर के लिए बकरी भी बाँधनी पडेगी।"

भन्नन जी उनका मतलब समझ गए। उनके साथ अधिक सम्बन्ध रखने से उन्हे कोई रुपया लौटने की आशा न रही, कुछ और जाने का विश्वास जरूर था। वे चुपचाप लौट गए।

किरसन जी ने इस प्रकार नाराज होकर उन्हे जाते देखा तो आवाज देने लगे—"सुनो, पडित जी !"

लेकिन भन्नन जी ने फिर लौटकर नही देखा।

साधो ने पुकारकर कहा—"नाराज हो गए क्या ?"

किरसन जी ने कहा—"लो, हिसाब तो करते जाओ।"

भन्नन जी ने मन मे कहा—'बीस रुपए में इतना बडा अनुभव मिल गया। हिसाब बराबर हो गया। मैं घाटे मे नही हूँ।"

पन्द्रह

भन्नन जी वहुत निराश और उदास होकर सीधे अपने डेरे पर चले आए। उनके चेहरे की रगत पहचान कर करीम चाचा ने कहा—"पडित जी, लोग समझते है, सिनेमा की इडस्ट्री के भीतर बडे मजे हैं और रुपए के भी पहाड खडे है । आपको भी अब इस बात का कुछ तजरबा होने लगा है कि कैसी कशमकश इसके भीतर मौजूद है ।"

"हाँ चाचा जी, आपने तो इस समय बिलकुल मेरे मन की बात पढ-कर बता दी ।"

"दुनिया मे आसानी से कोई चीज कही नही मिलती । नाकामयाबी पर नाकामयाबी जमा होती रहती है । जो भाग खडा होता है, उसी डर-पोक को कुछ नही मिलता, नही तो जो नाकामयाबियो की सीढियो पर पैर रखता हुआ आगे को बढता जाता है, वह एक दिन जरूर कामयाब होता है ।"

कुर्सी मे सिर पर हाथ रखकर पडे हुए भन्नन जी जरा सीधे बैठे ।

जेब के बाकी रुपए गिनकर जो घर लौट जाने की कल्पना करने लगे थे, वे फिर दूसरे दृष्टिकोण से अपनी वर्तमान अवस्थिति पर विचार करने को विवश हुए।

"लो, चाय पियो।"—चाचा ने एक गिलास चाय को दो हिस्सो मे बाँट दिया। एक गिलास भन्नन जी के सामने रखा, दूसरा अपने मुँह से लगाया।

'धन्य है, चाचा जी आपकी उदारता को। देखता हूँ कितना बडा मानव छिपाए हुए है आप अपनी इस सादगी के भीतर।"

'घबराओ नही, कोशिश करो। दौड-धूप करो, एक दिन जरूर तुम्हे तुम्हारी मेहनत का फल मिलेगा। मै बीसियो एक्टरो, डायरेक्टरो और प्रोड्यूसरो के नाम तुम्हे गिना सकता हूँ, जो बहुत ही मामूली हैसियत से यहाँ आए थे। पास मे कुछ न था उनके, दोस्त-रिश्तेदार भी कोई नही। तुम तो इतने पढे-लिखे हो। इतनी किताबे लिखकर लाए हो। जरूर कुछ-न-कुछ हो ही जाएगा।"

चाय पीते पीते कुछ फुर्ती आई पडित जी के, बोले—'कोई राह बताइए, चाचा जी।"

"राह? राह काँटो और ठोकरो से भरी ही सबसे बढिया होती है। चलते रहो, चलते रहो। जरूर एक दिन अपने मकसद पर पहुँच जाओगे।"

भन्नन जी धोती कसकर कुर्सी पर बैठ गए और सोचने लगे—"अब जरूर इस कमर पर चमडे की पेटी बाँधकर ही दम लूँगा। उस बेईमान की आवाज निरन्तर मेरे प्राणो को छेद रही है—'सिनोपसिस अग्रेजी मे लिखकर लाओ।' लिखूंगा, अग्रेजी ही मे लिखूँगा।"

"पडित जी, मै बेनू बाबू से आपकी सिफारिश करता। लेकिन अभी तो वे मजनू और गोवर्धन दोनो को स्टोरी के लिए साइन कर चुके है। मैं फिर भी कहता उनसे, लेकिन हम आपस में बहुत खुले हुए है। वे जरूर मुझे डाटकर कह देगे—'अबे, तुझे होटल का तजरबा है या स्टोरी का।"

"नही चाचाजी, पहले मेरा भी कुछ ऐसा ख्याल था। अब सोचता हूँ, वे यहाँ अपने किचन में रहनेवाले भानुदेव के पास स्टोरी होने में जरूर शक करेंगे।"

"नही, ऐसी बात तो नही है। आर्ट तो एक खुदा की देन है जिस-पर भी बरस जाय। तुम न्यू टॉकीज में जाओ। उसके मालिक दयाल-भाई बडे अच्छे आदमी हैं, गुन की इज्जत करनेवाला शख्श है। अपना भी मिजाजखोर नही है और उसे दूसरे की शेखी भी पसन्द नही। तुम उन्ही के पास जाओ। दो-तीन मुलाकातो में अगर उन्होने तुम से ठीक तरह से बाते न की तो घबराने की जरूरत नही है। वे जरा अजीब आदमी है। बडी देर मे किसी को दोस्त बनाते है तो बडे दिनो तक उनकी दोस्ती कायम रहती है।"

"कहाँ मिलेगे ? रहते कहाँ है ?"

"मैं समझता हूँ जब तक किसी के साथ हमारे अच्छे ताल्लुकात न हो जायँ हमे उसके घर नही जाना चाहिए। न्यू टॉकीज मे उनका ऑफिस है, वही जाना ऑफिस टाइम में।"

"कल को जाऊँ ?"

"कल ही जाओ। न्यू स्टूडियो के नाम से उनका एक स्टूडियो भी है। न्यू टॉकीज पहले तो अच्छा चलता था, अब जरा ढीला है, उसकी शोह-रत उड गई। तसवीरे भी मामूली लगाते हैं। अपनी फिल्म बनाने के बडे शौकीन है। कई फिल्मो के डिब्बे बनाकर रख दिए है। कोई भी मार्केट मे चली नही। खर्चा भी नही लौटा सके। लेकिन हिम्मत नही हारे है। जरूर एक-न-एक तसवीर उनके दिमाग मे बनती रहती है। इडस्ट्री में सब उनको पहचानते हैं।"

"स्टूडियो भी चलता होगा उनका ?"

"क्यों नही ? अपनी तसवीरें वही बनाते हैं। किराए पर भी लगाते हैं। जरा पुराने ख्यालात के है। स्टोरी, म्यूजिक, डायरेक्शन, एक्टर-एक्ट्रेस, सेट—किसी पर ज्यादे खर्च करने के कायल नही हैं। और

प्रोपोगेंडा के लिए तो एक पाई देने में भी रोते हैं। देखो, उनसे मिलो, शायद कुछ दिनो की बातचीत मे कुछ काम बन जाय तुम्हारा।"

"हरीश कहाँ है ?"

"बेनू बाबू के साथ गया था, आता होगा।"

कुछ फल-फूल, अण्डे-मक्खन और दवा लिए प्रेम आ पहुँचा ढीली-ढाली चाल मे। भन्नन जी ने पूछा—"कैसी तबीयत है ?"

"वैसी ही।"

"कुछ भी फरक नही ?"

"क्या बताऊँ ?"

"डॉक्टर क्या कहते है ?"

"कहते है ताकत की चीजे खाओ, आराम करो, इलाज कराओ, बीमारी की जड गहरी है। आराम करूँ तो फिर कहाँ से ताकत की चीजे खाऊँ ! और कहाँ से इलाज कराऊँ ?"—वह पडित जी के पलग पर लेट गया और उसने उनके बिस्तर पर अपना सिर रख दिया।

पडित जी के भीतर-ही-भीतर बडी ग्लानि होने लगी और उनकी कहानी का विषय था अछूतोद्धार। उन्होने फिर पूछा—"बुखार कैसा बताते है ?"

"कहते है बडा खराब बुखार है।"

"तो भाई ऐसे कैसे काम चलेगा ? यहाँ जमीन पर सीमेंट में सोते हो।"

करीम चाचा बोले—"सीमेट में सोना बन्द कर दो।"

भन्नन जी ने कहा—"अजी चारपाई में सोकर ही क्या हो जाएगा जब तक किसी अस्पताल में भर्ती होकर इलाज न कराया जाय।"

"पलंग पर आप सोते है, पडित जी ?" करीम चाचा ने पूछा—"और इस मेज पर ?"

भन्नन जी ने जवाब दिया—"चाचा जी, रेल में चोरी हो गई न मेरी। एक फटी दरी शायद दफ्तर की हरीश ने मुझे दे रखी है। जहाँ

पर कहे आप मै उसे बिछाकर रात काट सकता हूँ । स्टोरी का कही सिलसिला लग जाता तो मै छोटा-मोटा बिस्तर खरीद लाता।"

'नही पडित, तुम भी यहाँ की आबहवा मे नए हो। कौशल अगर जमीन मे सो जाय तो प्रेम मेज पर सो सकता है।"—चाचा जी ने कहा।

भन्नन जी ने अपनी कोई सम्मति नही दी क्योकि उनकी कहानी का विषय अछूतोद्धार था और उस कहानी को अभी तक कही पर कोई सहारा नही मिला था। उन्होने उस हरिजन के बेटे पर दृष्टि की।

यद्यपि उनके मस्तिष्क मे अब गाँजे के नशे की कोई भी लहर बाकी नही थी, फिर भी उन्हे ज्वर मे पडे हुए प्रेम और अपनी उस अछूतोद्धार की कहानी मे कोई अन्तर नही जान पडा। वे दोनो एक-दूसरे की छाया-सी जान पडे कुछ देर के लिए।

"नही! नही!" मन-ही-मन उन्होने कहा—"इसके ज्वर की जड गहरी है, न जाने कैसी है यह बीमारी? मेरी कहानी की कमजोरी उसकी आत्मा नही है, सिर्फ उसकी अभिव्यक्ति का माध्यम ही तो? मै उसे बदल दूंगा। कौशल कोष ले आया है।"

करीम चाचा अपना टिफिन-कैरियर धो-धा, झाडन सँभाल, चाय-चीनी ठिकाने से रखकर जाने की तैयारी करने लगे थे।

भन्नन जी कुरसी में बैठे-बैठे सोचने लगे—"मैने कही जरूर यह पढा है, भाषा एक रहस्य की चीज है।"

उन्हे यूरोप की किसी दासी की बात याद पडी, वह हिब्रू, ग्रीक और लैटिन तीन भाषाओ को अपनी स्वप्नावस्था मे सही-सही बोल लेती थीं। जागृतावस्था में वह उनके ज्ञान से शून्य थी। बाद को इस रहस्य का निवारण हुआ, वह पहले किसी पादरी के यहाँ नौकर थी। वह उक्त तीनो भाषाओ का पडित था। वही उसने उस पादरी के स्वाध्याय मे उन भाषाओ को सुना था और वे उसकी उपचेतना की गहराई में ज्यो-के-त्यो अकित थी।

करीम चाचा ने जेब से कागज़ की पुडिया निकाली । एक पान बचा था उसमे । आधा तोडकर भन्नन जी को देते हुए बोले—"लो पडित, अब चल देता हूँ, जाने बखत का एक टुकडा ले लो ।"

कुछ सकोच के साथ भन्नन जी बोले—"मै तो पान का सामान लाते-लाते ही रह गया और बीच ही मे बीडी-सिगरेट मुँह से लगा ली ।"

"अरे लो भी । सभी अमल जारी रहने चाहिएँ । चूनेवाली तमाखू मत खाना, पान का तमाखू क्या बुरा है ?"

भन्नन जी ने पान ले लिया । चाचा चले गए । पान चबाते हुए वे फिर अपनी उसी विचारधारा मे जा पडे—"रहन-महन और सगति के साथ भाषा का सहज सम्बध है । अग्रेजी बोलनेवालो की सगति से मै शीघ्र ही उसे सीख सकता हूँ । लेकिन अभी वह सगति कैसे मिल सकती है ? अग्रेजो का सा रहन-सहन बनाकर अग्रेजी सीखी जा सकती है । एक पतलून और एक कमीज़ आज बना लूँगा । मेज-कुर्सी यहाँ बैठने के लिए है ही । नही, जमीन में नही सोऊँगा मै । प्रेम के तिरस्कार के लिए नही, अछूतोद्धार की कहानी मे बल देने के लिए । अगर उस कहानी मे प्राण भर गए तो वह फिल्म के माध्यम से सारे देश मे फैल कर हरिजनो के हित मे बडा काम कर देगी ।"

"यह तो कपडे और फरनीचर की बात हुई । भोजन के लिए ? पाव रोटी सहज ही में खाई जा सकती है । लेकिन अडे ? अडे प्रेम के लिए खरीदे है, छू लिए हैं । उनकी छूत से कुछ नही हुआ । वैज्ञानिक लोग उन्हे निष्प्राण कहते हैं । वे अगर खा भी लिए जायेगे तो कोई जात नही जाएगी, जात मानवता की है । भारत मे अन्न की कमी फल-अडे खाकर पूरी की जा सकती है । मछली ? जल-तोरई ?"

अब भन्नन जी की गाडी अटक गई—"अभी अडे तक ही सही, फिर जैसा भी विचार आएगा ?"

अब शेष रहा धर्म का मसला । भन्नन जी ने सोचा—"आचार तो कुछ-कुछ अग्रेजो के से बनाए, विचार का क्या होगा ? भाषा के ज्ञान मे

वही तो मुख्य चीज है । धर्म विचार का मुख्य अग है। धर्म का क्या होगा ? चुटिया का क्या होगा, जनेऊ कहाँ पर रहेगी और पूजा-पाठ का क्या ढग होगा ? ईसाई लोगों में भी तो सनातनी और आर्य-समाजी दोनों होते है । फिर किस विचारधारा को माना जाएगा ?"

"पहले आचार को तो ठीक कर लूँ, विचार स्वय ही ठीक होता जाएगा," भन्नन जी की दृष्टि उनके लोहे की पलग पर सोते हुए प्रेम पर गई । वे तत्क्षरण कुर्सी पर से उठे और उसको झकझोरकर बोले—"प्रेम, उठो भाई, तुम तो मेरी कहानी पर ही सो गए !"

'ओह ! पंडित जी !"—प्रेम पडे-ही-पडे बोला ।

"भाई अपने सोने की जगह पर ही सोना ठीक होता है। मुझे कहानी निकाल लेने दो उठो ।"

"कैसी कहानी है आपकी ?"

"मेरी अछूतोद्धार की कहानी । उन दुर्बल प्राणियो पर जो समाज का अत्याचार है उसी का चित्र है।"

प्रेम मन-ही-मन सोचने लगा—"मै भी तो एक अछूत हूँ, फिर बीमार मनुष्य तो और भी अछूत है । ये पडित जी कैसा अछूतोद्धार कर रहे है ?" उसके मुँह से यही विचार स्पष्ट भी तो हो पड़ा—"पडित जी आप यह कैसा अछूतोद्धार कर रहे है ?"

'उठो तो बताऊँ ।"

"हाँ पडित जी ।"—लेकिन प्रेम चढते बुखार के दबाव में पडा ही रह गया ।

भन्नन जी ने पहले उसका बिस्तर भूमि पर फैला देने मे चतुराई समझी, इतने ही मे कौशल आ पहुँचा । पडित जी ने प्रेम का बिस्तर उठाकर मेज पर रख दिया ।

कौशल बोला—"पडित जी, मेरे पास भी तो एक दरी-कबल के सिवा और कुछ नही है ।" उसने प्रेम का बिस्तर भूमि पर फैला दिया ।

पडित जी फिर प्रेम के पास जाकर उसे झकझोरते हुए बोले—

"उठो प्रेम।"

"जाडा लगता है, बुखार चढ रहा है।"

"इसीलिए तो कहता हूँ अपने बिस्तर मे ओढ़कर सो जाओ। मेरी कहानी दब गई है तुम्हारे नीचे। तुम जरा उठने की कोशिश करो मैं सहारा देकर तुम्हे बिस्तर मे सुला दूँगा।"

प्रेम उठा—"कहाँ है मेरा बिस्तर ?"

पडित जी ने उसे सहारा देकर भूमि पर सुला दिया और ऊपर से उसका लिहाफ ओढा दिया।

कौशल ने पूछा—"क्यो पडित जी, चाय पी या नही ?" उसने अंग्रेजी की प्राइमर और डिक्शनरी हाथ मे ले ली।

"दिन भर चाय पीने का ही तो धधा है और दूसरी बात ही क्या है ?"

"हरीश के आने पर ही बताई जाएगी।" कौशल बोला—"देखी आपने यह डिक्शनरी ?"

"क्या देखूं इस डिक्शनरी को ? दो कमीज और दो पतलून बना लेने दो तभी हाथ लगाऊँगा इसमे।"

"ओक्के! हाथ मिलाओ पडित जी!" कौशल ने पडित जी के हाथ मे हाथ दिया—"यह बात है! तीन गज जीन खरीद लाइए हरीश को मालूम है दूकान, छै गज लाइए पॉपलीन, वह भी उसी के यहाँ से। सिलने को मै दे आऊँगा। यही पास ही एक गली मे है मेरी जान-पहचान का दर्जी। अपने घर ही में काम करता है। दूकान के किराए की बचत करता है, इसी से सिलाई भी सस्ती है उसकी और काम अच्छा।"

"कितने दिन मे दे देता है ?"

"काम कम होने से जल्दी ही। आप कपडा ले आइए अगर फुरसत में होगा तो कल सुबह दस बजे तक दे देगा आपके चारो कपडे।"

हरीश भी आ पहुँचा। आते ही बोला—"पडित जी, स्टोरी तो यहाँ सभी प्रोड्यूसरो को चाहिए, लेकिन अपनी इस जरूरत को कोई भी जाहिर करने को तैयार नही है। कई मशहूर म्यूजिक डायरेक्टरो के गाने

फेल हो गए है और बहुत-सी पास शुदा हीरोइने रह गई है। प्रोड्यूसरो को अपने नुसखो मे इसी से कुछ शक हो गया है। मेरी समझ मे आप एक चक्कर फेमस का लगा आते। हर ऑफिस को खटखटाकर पूछ लेते तो क्या हानि थी ?"

"कब ?"

"आज ही सही। कौन जाने आज ही सुनहरा मौका हो।"

"लेकिन कपडे ?" भन्नन जी ने अपने कपडो की तरफ नजर डाल कर कहा—"तुमने ही मुझसे इस हुलिए को बदल देने को कहा है, और मेरा उस बात पर विश्वास जम गया।"

"लेकिन बेनू बाबू के दोस्त उनसे कह रहे थे, कई प्रोडयूसर नई कहानी की उमीद मे स्टोरी-रायटरो से भेट कर रहे है।"

कौशल चाय का स्टोव जलाने के लिए दियासलाई ढूंढ रहा था। उसने भन्नन जी के थैले मे किताबे भरी देखकर पूछा—"ये किताबे ? पडित जी आपका पार्सल आ गया ? इतनी किताबे, ये सब आपकी लिखी है क्या ?"

"हॉ भाई, लेकिन इनका समझनेवाला कोई नही मिलता यहाँ !"—बडी कठिनाई से पडित जी बोले।

हरीश ने थैला पडित जी को दे दिया—"मेरी समझ मे आप जाइए फेमस का ऑफिस तो देख आए है न आप ?"

"हॉ, महालक्ष्मी स्टेशन से सीधा।"

हरीश उनके साथ बाहर को चला। कौशल बोला—"चाय ?"

"चुप रहो, देर हो रही है। चाय रास्ते मे कही पर पी लेना पडित जी।" हरीश उन्हे बाहर तक पहुँचा आया। गेट के पास उन्हे एक छोटी सी पुडिया देकर बोला—"लीजिए यह थोडा-सा गाँजा है, अभी इतना ही मिला है।"

पडित जी दूने उत्साह से भर गए। समझने लगे, यह बडा बढिया शकुन हुआ है। हरीश से विदा लेकर चले पडित जी। मार्ग मे एक

सिगरेट् खरीद कर उन्होने दियासलाई मे उसके भीतर कुछ गाँजा खोसा और खीचकर उमकी दम लगाई, दम लगाते ही चारो ओर की विघ्न-बाधा दूर हो गई सी जान पडी । स्टेशन मे जाते ही उन्हे लोकल ट्रेन मिल गई और तुरन्त ही वे महालक्ष्मी के स्टेशन मे जा पहुँचे ।

खटाखट फुटपाथ पर पैर वजाते हुए वे फेमस की विशाल इमारत के पास पहुँच गए । उन्हे बद्री का मत्र अपने-आप याद आ गया—"जहाँ पूछेगा वही रुक जाएगा ।" उन्होने अपने व्यक्तित्त्व मे से अपरिचय और परदेसीपन की सारी झिझक पोछकर फेक दी । मानो उस इमारत से उनका जन्म का सम्बन्ध है और उसके भीतर के तमाम ऑफिसो मे उन का रात-दिन का आना-जाना । ऐसी भावना बनाई उन्होने । छाती बाहर निकाली—"व्यक्तित्त्व चाहिए, कपडा मनुष्य का बाहरी खोल है।" सचमुच मे वे उस इमारत की सीढियो पर चढने लगे । किसी भी दरबान की हिम्मत न हुई उनमे कुछ कहता, या किसी का उनपर ध्यान ही नही था ?

ऊपर जाकर उन्होने देखा, बाकायदा सब कपनियो के साइन बोर्ड लगे हुए है सबके दरवाजो पर। कुछ ऑफिसो के आगे बॉय भी विराज-मान थे ।

वे पहले ऑफिस के आगे जाकर खडे हुए, एक बॉय बैठा था बाहर। भन्नन जी की तरफ बडी अजीब दृष्टि से देखा उसने । भन्नन जी का साहस छूट गया बिना उससे बाते किए दफ्तर के भीतर घुस पडने का। बद्री का मत्र ज्वलत होकर उनके मस्तिष्क मे चमक रहा था ।

वे साइनबोर्डो को पढने का बहाना करते हुए आगे को बढ गए । मन मे सोच रहे थे—"अगर मेरे साफ पतलून पहनी होती तो मजाल थी उस छोकरे की जो मुझे वैसी तीखी नजरो से देख सकता । खैर, देखा जाएगा ।"

दूसरे सिरे तक पहुँच गए वे । वहाँ से हर ऑफिस को खटखटाने की लहर चढ गई थी वह कुछ टूटती सी जान पडी । सिगरेट् बुझाकर

जेब मे रख ली थी, उसे बाहर निकाला । दो-तीन दम खीचकर लगाईं और एक ऑफिस को धीरे-धीरे खटखटाने की सोचने लगे । वहाँ पर कोई बॉय नही था ।

हटात् उन्हे कुछ याद आया, वे सोचने लगे—"नही जहाँ पर रुका हूँ, वही से शुरू करना चाहिए । उसी छोकरे के पास चलूँ । उसने क्या समझा है अपने को ? एक ऑफिस का छोकरा ! मैं फिल्म का स्टोरी-रायटर हूँ । पहले मै हूँ तब बाद को सभी हैं ।"

वे उधर ही चले । बॉय ने फिर उनकी आँखो में देखा, लेकिन इस समय उन्होंने उसकी ओर बिना गर्दन घुमाए ही ऑफिस के द्वार पर हाथ रखा ।

बॉय ने फौरन ही अपना हाथ बढाकर उनका हाथ खीच लिया—"मै किसलिए हूँ यहाँ पर, पहले मुझ से बातें करो । क्या काम है ? किसे ढूंढते हो ?"

भन्नन जी ने बहुत गुस्से में भरकर अपना हाथ छुडा लिया और बोले—"निर्माता को ढूंढ रहा हूँ ।"

"क्या माने इस लफ्ज के जरा साफ-साफ बोलो ।"

"प्रोड्यूसर साहब को ।"

"अरे कौन प्रोड्यूसर ? अरे यहाँ तो सब प्रोड्यूसर-ही-प्रोड्यूसर हैं । कुछ नाम भी तो हो उनका ?"

"इस कम्पनी के प्रोड्यूसर ।"—भन्नन जी ने चिढकर कहा ।

"वे नही हैं यहाँ ।"

"उनकी जगह मे कोई दूसरा तो होगा ?"

"कार्ड कहाँ है तुम्हारा ?"

"कैसा कार्ड ?"

"नाम का कार्ड और कैसा ?"

"कोई नही है । अभी नया-ही-नया आया हूँ बंबई मे ।"

"तो जरा पुराने पडकर आओ न, तरकारी थोडे हो जो बासी पड

जाओगे।"

"तुम्हे शरम आनी चाहिए मैं रिपोर्ट करता हूँ तुम्हारी।"—भन्नन जी ने हाथ और पैर दोनो से दरवाजा खटखटाया।

भीतर से आवाज आई—"बॉय।"

"सर, यस सर!"

"कौन है?"

"सर, अगली पिक्चर में हीरो साइन करने आया है।"

सब भीतर बडी जोर से हँसे।

अपमान की आग में जलकर भन्नन जी चिल्लाए—'मै स्टोरी रायटर हूँ।"

"ऐसे ही है कोई—धोती-कुरतेवाला।"—बॉय बोला।

भीतर से फिर आवाज आई—"कह दो स्टूडियो में मिले, कल सुबह दस बजे।"

बॉय ने पूछा—'लो अब तो सुन लिया।"

"किस स्टूडियो में आऊँ?"

"जिस स्टूडियो में तुम्हारी तबीयत हो।"

भन्नन जी उस बॉय पर बहुत रुष्ट होकर आगे बडे। उसके बाद के ऑफिस मे कोई नही बैठा था। उन्होने द्वार खटखटाया। कोई जवाब नही मिला भीतर से। उन्होने फिर द्वार खटखटाया, इतने ही में एक बॉय दौडता हुआ आ पहुँचा—"क्या है?"

"प्रोड्यूसर साहब से मिलना है।"

"वे आज नही आए।"

"भीतर कोई बोल तो रहा है।"

"प्रोड्यूसर नही हैं कह तो दिया।"—बडी घृणा से बॉय ने कहा।

बडी शान्ति से भन्नन जी ने कहा—"डायरेक्टर साहब होगे। उन्ही से मिल लूंगा, लो सिगरेट पियोगे।" वे उसे एक सिगरेट देने लगे।

बॉय ने सिगरेट् लेने से इन्कार किया—"डायरेक्टर साहब भी

नही आए ।"

निराश होकर भन्नन जी ने फिर वस्त्रो के अभाव को ही दोष दिया। वे फिर आगे बढे। वहाँ एक बॉय स्टूल पर पैर रखे बैठा था। उनके कुछ पूछने से पहले ही वह बोला—"क्या कहा-सुनी हो गई तुम्हारी उस बॉय से ?"

भन्नन जी ने बात छिपा ली—"कुछ नही ।"

"वह उल्लू का पट्ठा सबसे बहस करता है, पीले हाउस मे बर्तन मलता था, यहाँ एन्टरी की उम्मेद मे आफिस बॉय बना बैठा है। चार महीने से तनखा भी नही मिली है। माली हालत बहुत खराब है कपनी की। तीन फिलम बनाईं, तीनो फेल हो गईं।"

भन्नन जी को बडा सतोष हुआ—"तब तो वहाँ के द्वार खुल भी जाते तो क्या बनता ?" उन्होने मन मे प्रश्न किया।

"तुम क्या काम करते हो ?"

"स्टोरी लिखता हूँ। दरवाजा खोलकर प्रोड्यूसर से मिलना चाहता हूँ।" उसी समय भन्नन जी के मन में बद्री का मत्र याद आया, लेकिन धनुष से तीर छूट चुका था।

बॉय बोला--"भाई प्रोड्यूसर तो नही है यहाँ, अपने मुल्क गए है रुपया लाने को। डायरेक्टर है।"

इस बार भन्नन जी बिना उससे कुछ कहे ही द्वार खोल भीतर को जाने लगे। बॉय ने उनका हाथ हटाकर कहा—"ठहरो, पहले मै उन्हे खबर दे आता हूँ।" कुछ ही देर में बॉय ने दरवाजा खोलकर भन्नन जी को भीतर आने का इशारा किया।

भन्नन जी ने किताबो के थैले को सँभाल भीतर प्रवेश किया। बॉय ने दरवाजा बन्द कर दिया।

भीतर जाकर उन्होने देखा एक बहुत मोटा व्यक्ति बडी लापरवाही से मेज पर दोनो हाथ टेके बैठा है। उसके मुख पर सज्जनता प्रतिफलित थी। भन्नन जी ने अपनी किताबो का थैला फर्श पर रखकर दोनो हाथ

"मैंने यह साहित्य लिखा है।"

"जी हाँ यही तो अर्ज कर रहा हूँ, आपके साहित्य में भी सेक्स की मदद ली गई है।"

"आप कैसे कहते है ?"

"मैं डायरेक्टर हूँ। चित्र मे ही बहुत-कुछ जाहिर करता हूँ और चित्र से ही बहुत-कुछ समझ भी लेता हूँ। कान मे बोला गया लफ्ज सारी दुनिया मे नही समझा जाता लेकिन आँख के सामने जो तस्वीर रखी जाती है, उसे इसान क्या बहुत से जानवर भी समझ जाते है।"

"आपने किताब पढी नही।"

"चित्र देख लिया। वह सैक्सी है।"

"चित्र मेरा बनाया नही है।"

"पेंटर ने उसकी आइडिया आपकी किताब पढकर ही इकट्ठी की है। नाराज मत होइए। सेक्स के बिना कोई भी चीज धरती पर नही ठहर सकती। सारी कशमकश धरती पर सेक्स के लिए ही है।"

"आप हिन्दी पढ सकते है ?"

डायरेक्टर ने एक किताब का टायटिल पढने की कोशिश की—"टे·"

भन्नन जी ने मदद दी—"टेढी"

डायरेक्टर ने नाम पूरा किया—"टेढी दुम।"

"मैं इन्हें आपके पढने को छोड जाऊँ ?"

"नही नही पण्डित जी, इतना वक्त किसके पास है ? फिर मैं कहाँ पढ सकता हूँ ? फिल्म के लिए नही लिखी आपने कोई स्टोरी ?"

"लिख रहा हूँ। उसी लिए तो बम्बई आया हूँ।"

"हाँ, एक बात तो बताइए। स्टोरी तो लिखते है आप कुछ ह्विस्की वगैरह ?"

भन्नन जी चकराए। सोचने लगे—"बड़ा मुँहफट डायरेक्टर है यह।"

डायरेक्टर बोला—"अच्छा जाने दीजिए। क्या स्टोरी है ? नाम क्या रखा है ?"

"अछूतोद्धार।"

"हूँ ! स्टोरी क्या है ?"

"सिनोपसिस लाया तो हूँ।"

डायरेक्टर ने सिगरेट् जलाकर भन्नन जी से पूछा—"सिगरेट् तो पीते हैं न ?"

"जी हाँ।"—भन्नन जी ने एक सिगरेट् जलाई।

"पढिए क्या स्टोरी है।"

भन्नन जी ने खाँस-खूँसकर स्वर खोला और मन-ही-मन देवता का नाम लेकर सिनोपसिस पढना शुरू किया।

थोडी ही देर मे डायरेक्टर ऊब गया, कहने लगा—"ऊँहूँ, पण्डित जी यह तो वही बम्बई का पुराना नुसखा है—बॉय मीट्स गर्ल !"

"इसमें एक सन्देश है लोक-कल्याण की भावना है।"

"वह सब प्रोपोगैंडा है। यह कुछ नही चलेगा। देखिए अगर आप स्टोरी रायटर हैं तो कोई बढिया चीज लिखकर लाइए। सबसे पहले मैं निकालूंगा उसे।"

भन्नन जी अपनी कल्पना मे बहुत ऊँचाई पर चढ गए थे, डायरेक्टर साहब की इस बात से एकदम नीचे गिर पड़े। फिर एक वे कपडे झाड़ कर उठ खडे हुए और बोले—"देखिए साहब, यह युग का एक जलता हुआ प्रश्न है।"

"लेकिन आपकी स्टोरी में कोई जान नही है।"

"क्यो ?"

"क्योकि प्रेक्टिकल नही हैं आप उसमें गढने में। आपकी जिन्दगी उसकी कहानी से बिल्कुल अलग है। यूटोपिया को छोड दो। कम टू दी सौलिड़ अर्थ माइ फ्रेंड।"

मानो एक बिच्छू ने उनकी टाँग मे डंक मार दिया। चौक उठे

भन्नन जी। अग्रेजी का अश बिलकुल समझ मे नही आया उनके और उन्होने मन-ही-मन फिर अग्रेजी सीखने की प्रतिज्ञा को दुहराया।

डायरेक्टर साहब का वह अग्रेजी का वाक्य उनके मुँह मे एक काग की तरह से जम गया। उनके मुँह से कोई शब्द नही निकल सका। चुपचाप उन्होने अपनी किताबे अपने थैले मे रखनी शुरू की।

डायरेक्टर साहब बोले—"पण्डित जी किताब लिखकर छपा देना कुछ मुश्किल नही है। यहाँ फिल्म में तो हमें स्टूडियो के भीतर ही सैकडो क्रिटिको का मुँह बन्द करना पडता है, स्टोरी को जिन्दा करना पडता है। चुप बिना आवाज की किताब कम्पोजिटरो के हाथ मे जाती है वैसे ही चुप टाइपो को जोडकर वह अपनी मजदूरी पूरी कर लेता है।"

भन्नन जी जाने लगे।

डायरेक्टर साहब बोले—"मैं देता हूँ आपको एक सबजेक्ट। देखिए अगर आपका दिमाग काम कर जाए तो लाइए लिखकर।"

कुछ आश्वासन पाकर भन्नन जी का मुँह खुला—"क्या सबजेक्ट है?"

"सबजेक्ट है—'काला बाजार।'"

"काला बाजार में कैसी स्टोरी होगी?"

"यही तो सोचने और लिखने की बात है।"

"कास्ट मे कौन-कौन होंगे, हीरो-हीरोइन कौन?"

"इन्ही में तो स्टोरी बनेगी पण्डित जी यही तो सोचने की बातें है। सबजेक्ट आपको बता दिया। जो आता है मेरे पास स्टोरी के लिए मैं यही कहता हूँ उससे और अभी तक कोई माई का लाल नही ला सका उसे लिखकर।"

"काला बाजार" भन्नन जी की किसी कल्पना को न उभार सका। थैला हाथ में लेकर उन्होने "नमस्ते"—कहा और विदा हो गए।

वे भारी भरकम डायरेक्टर साहब, तोंद बहुत भारी थी, शायद ही

किसी को विदा देने के लिए उठ सकते होगे। बैठे-ही-बैठे उन्होने उठ जाने का अभिनय कर कहा—"नमस्ते।"

दरवाजा खोलकर बाहर आए भन्नन जी। बॉय ने पूछा—"क्यो कुछ हुआ ?"

"नही।"

"बाते तो बडी देर तक हुई।"

"हाँ, एक कहानी लिखने को दी तो है।"

बॉय ने कहा—"ऊपरी मजिल मे जाओ वहाँ एक लाल तिकोना बना है बाहर से—ट्रैगल प्रोडक्शन। वहाँ का सेठ बडा अच्छा आदमी है, क्योकि अभी नया ही नया आया है। शायद कोई काम बन जाय तुम्हारा।"

भन्नन जी बोले—"भाई, मै तो एक सिरे से चल रहा हूँ नम्बरवार। आज इसी मजिल की परिक्रमा है। ऊपर की बारी कल को।"

उसके बाद के आफिस का द्वार खटखटाने लगे अपनी धुन में। वहाँ बाहर तो कोई बैठा नही था। एक आदमी उधर से आता हुआ बोला—"क्या खटखटा रहे हो ? देखते नही ताला बन्द है।"

भन्नन जी बडे लज्जित हुए। मन मे सोचने लगे—"आज अब भारी मति-भ्रम हो गया है। आते-ही-आते बात बिगड गई। मुश्किल है, सगुन बहुत खराब है। सीधे घर को चल देना चाहिए। जो कुछ अनुभव हुआ है उससे लाभ उठाकर कल आऊँगा तो ठीक होगा।"

वे लौट गए। इतने ही मे पीछे से आवाज आई—"ऐ चनेवाले, चार पैसे के चने।"

भन्नन जी का हृदय धक से हो गया, उन्होने अनुमान लगाया—"शायद यह वही छोकरा है, जो आते-ही-आते मुझसे भिड गया था, जिसके कारण मेरा यह सारा प्रयास धूल मे मिल गया।"

वे बिना पीछे को मुडे अपनी राह चलने लगे। फिर पीछे से आवाज आई—"ऐ थैलेवाले !"

इस बार अपने-आप वे लौट पडे । देखा, कोई न था । फिर जैसे ही वे जाने लगे तो फिर आवाज आई—"क्यो चने नही देगा ?"

भन्नन जी बहुत अपमानित होकर नीचे उतर गए । उन्होने यह सारा दोष अपने वेश की सरलता और हाथ के बोझ पर ही रखा । उन्होने यह पक्का निश्चय किया अब निश्चय ही पतलून पहनकर किसी से बातें करूँगा ।

जैसे ही नीचे आकर वे सडक पर जाने लगे । एक दरबान ने पुकारा—"अजी मिस्टर !"

भन्नन जी उसके निकट गए । दरबान कहने लगा—"इस थैले में क्या माल ले जा रहे हो, यह सब हमारा है ।"

"आप ही रख लीजिए ।" —बडे निष्क्रय प्रतिरोध के साथ भन्नन जी ने वह थैला उसकी ओर बढा दिया ।

दरबान बोला—"क्या है इसमे ? किताबे किसकी हे ?"

झल्लाकर भन्नन जी बोले—"किताबे मेरी है और किसकी है ?"

"सबूत क्या है ?"

"हर किताब में मेरी फोटो छपी है ।" —भन्नन जी ने एक किताब खोलकर उसे अपनी फोटो दिखा दी ।

दरबान कहने लगा—"लेकिन मिस्टर, जब इधर गए थे, तब हमे दिखाना चाहिए था तुम्हे ।"

"अब ऐसा ही करूँगा ।"—भन्नन जी किसी तरह अपना पिंड छुडा-कर भागे ।

सोलह

डेरे पर पहुँचकर भन्नन जी ने देखा, एक महिला द्वार की ओर पीठ किए है। हरीश और कौशल बडी विनम्रा और आदर के साथ खडे होकर उससे बाते कर रहे है। भन्नन जी ने उस महिला की पीठ देखकर अनुमान लगा लिया कि वह फिल्म-स्टार सरिता है।

कमरे का द्वार खोलकर वे भीतर तो घुस गए थे पर सरिता के पास जाने में संकोच कर गए। बाहर भी न जा सके एक क्षण के लिए वही पर खभे-से बने रह गए फिर गुसलखाने की बगल मे उस कबाड़खाने में घुस गए और उनकी बातें सुनने लगे।

सरिता बोली—"कितने दिन हो गए बुखार आते ?"

हरीश ने जवाब दिया—"बहुत दिन।"

"इलाज किसका हो रहा है ?"

"डॉक्टर का।"

"कैसा बुखार है ?"

"मालूम नही।"

सरिता ने पुकारा—"प्रेम !"

कराहते हुए प्रेम बोला—"जी।"

सरिता ने कहा—"कैसे हो ?"

हरीश ने लिहाफ का एक कोना उठकाकर उसका मुँह खोलकर कहा—"प्रेम, सरिता जी आई है।"

प्रेम ने आदरपूर्वक कहा—"नमस्ते।"

"जमीन पर क्यो सोए हो ? चारपाई है उस पर क्यो नही सोए हो ? बुखार मे ?"

"जी ठीक है जमीन पर ही।"

भन्नन जी सरिता के प्रश्न पर घबरा उठे, लेकिन प्रेम के उत्तर पर कुछ धीरज बँधा।

सरिता ने फिर पूछा—"चारपाई पर कौन सोता है ?"

भन्नन जी कलेजा थामकर जवाब सुनने लगे।

कौशल ने जवाब दिया—"जी हमारे देश के एक स्टोरी-रायटर आए है यहाँ, वे सोते हैं।"

"स्टोरी रायटर ? अच्छा ?"—सरिता बोली।

भन्नन जी सरिता के मुख पर के भावो को भी देखना चाहते थे, लेकिन कबाड और पार्टिशन के बीच से कोई सूराख न मिला उन्हें।

"क्या सिनेमा के लिए लिखते है स्टोरी ?" सरिता ने पूछा।

"हाँ।"

"तुम लोगो ने मुझसे नही मिलाया उन्हे कभी। एक स्टोरी का प्लाट मेरे पास भी था।"

भन्नन जी का दिल धड़कने लगा। वे मन में सोचने लगे—"ऐसा जानता तो गलती की जो इस कबाडखाने में सिर छिपाया।—अब क्यो न चला जाऊँ उनके सामने ?" फिर उनको कपडो की हीनता याद पड़ी और वे उसी कबाड़ मे छिपे रह गए।

"वे यही रहेगें अभी जब आप आज्ञा देगी तब आ जावेंगे आपके पास।"—हरीश ने कहा।

सरिता बोली—"कोई जल्दी नही अभी। फुरसत की बात है यह।"

भन्नन जी अपने मन से पूछने लगे—"फुरसत किसकी ? मेरी या इनकी ?"

सरिता ने जाते हुए कहा—"लेकिन प्रेम, तुम्हारा जमीन पर सोना मुझे फिर खटक रहा है।"

प्रेम बोला—"मेरे पास काफी बिस्तर है।"

हरीश ने उसका मुँह ढक दिया लिहाफ से।

"मैं सोचती थी, कोई दूसरा सोता जमीन पर कोई तन्दुरुस्त आदमी।"—सरिता चली गई।

हरीश और कौशल उसे कमरे से बाहर उसके प्रवेश की सीढियो तक पहुँचाने गए। इस अवकाश में भन्नन जी कबाडखाने से बाहर निकल अपने कमरे की कुर्सी पर जाकर जम गए । किताबो का थैला मेज पर रख दिया।

हरीश और कौशल लौट आए आते ही उन्होने पूछा—"क्यो पडित जी, आप कब आए ?"

"अभी।"

"किस रास्ते ?"—कौशल ने पूछा।

"मै गुसलखाने में था।"

हरीश ने कहा—"अभी सरिता जी आई थी यहाँ।"

भन्नन जी ने पूछा—"किसलिए ?"

"प्रेम की तबीयत का हाल पूछने।"

हरीश ने कहा—"हमने तुम्हारे बाबत भी कह दिया उनसे।"

"क्या कह दिया ?"—भन्नन जी ने पूछा।

"अब एक दिन तुम्हे उनके पास ले चलेंगे।"—कौशल ने कहा।

"ऐसे कपड़ों से ?"

"कपडे बनवा लो न।"

हरीश को कुछ याद आई—"गए थे वहाँ ? क्या कुछ हुआ ?"

"कुछ नही हुआ।"

"क्यो ?"

"ये कपडे !" भन्नन जी ने अपने कपडो पर दृष्टि की—"मैं समझता हूँ, कुछ मैले भी पड़ गए ये।"

"तो जैसी मर्जी हो पडित जी, यह तो आपकी ही पसद और विश्वास की बात है।"

भन्नन जी ने अपनी जेब के रुपयो का मानसिक हिसाब लगाया—"पाँच रुपए जेबकट के और बीस रुपए किरसन जी नामक दूसरे जेबकट के, बीस रुपए खाने के लिए। पच्चीस रुपए यात्रा का व्यय। फुटकर खर्च तीन रुपए, पच्चीस रुपए के लगभग अभी बाकी है, दो रुपए की खिरीज भी होगी ही।"

हरीश बोला—"क्या सोचते हो ?"

"कुछ नही, चलो। दो पतलून और एक कमीज तो बनवा ही लेता हूँ। बहुत आवश्यक है इतना। फिर यह किसी शौक की प्रेरणा नही—है। रुपया कमाने के लिए पैसे का खर्च है।"

कौशल बोला—"मैं भी चलता हूँ, कपडे सीने को दे देंगे अभी।"

जाते समय प्रेम से कहा तो वह बोला—"पाव-भर दूध ला देना मेरे लिए।"

हरीश ने एक गिलास उठा लिया। तीनो बाजार को चले।

कपडा खरीद लेने के अनतर हरीश बोला—"मेरे पास दूध है, उसे पिला दूंगा, फिर ठडा हो जाएगा। फिर रात के भोजनो का भी हिसाब लगाऊँगा।"

"तुम कुछ मत करना। रोटी मैं खुद पका लूंगा।"

"दाल तो चढा दूंगा।"—हरीश चला गया।

कौशल भन्नन जी को लेकर एक गली के भीतर घसा। दोनों एक

गन्दी चाल की सीढियो पर चढ़ने लगे। सीढियो के किनारो पर कूड़ेदान रखे हुए थे, पर कूडा फेकनेवाले बडी लापरवाही से फेंकते थे—ऐसा स्पष्ट था।

तमाम सीढ़ियो पर राख-कोयला ही नही, साग-सब्जी के छिलको के साथ केले के भी छिलके पडे थे। कौशल ने कहा—"पडित जी जरा सावधानी से पैर रखकर चढना ऊपर। नही तो एक सीढी ऊपर चढने के बदले चार सीढी नीचे रपट जाओगे।"

पडित जी बोले—"मैं तो बबई को बहुत साफ-सुथरा समझता था।"

"यह सामने की चौडी खास सडको की बात है। गलियो की और उनसे भी तग गलियो की ऐसी ही तसवीर है।"

दोनो ने उस दरजी के यहाँ प्रवेश किया। एक छोटा-सा कमरा, आधे में उसका रसोईघर और आधे में उसकी दूकान। रसोईघर के आधे मे गुसलखाना भी था और कई तरह के आले-जाले, अल्मारी-कबार ठोक-ठाककर, छीके और डडे बाँध-बूंधकर थाली-बर्तन, चमचे-चिमटे, रकाबी-प्यालो और भडार के लिए जगह बनाई गई थी।

भन्नन जी ने कहा—"हरीश, बम्बई मे समय के एक-एक क्षण के उपयोग के साथ जगह के एक-एक वर्ग इंच को भी काम मे लाया गया है। फर्श और दीवाले ही नही, हवा के भीतर भी छेदकर लिए गए हे।"

दरजी ने मशीन रोक ली और नाक की डडी पर से चश्मा उतारकर बोला—"नमस्ते। अगर ऐसा न करें तो गरीब कहाँ से खायें?"

"नमस्ते मास्टर साहब, फुरसत है न?"—कौशल बोला।

"आपके काम के लिए फुरसत निकाल दी जाएगी।" —मास्टर ने एक हाथ में चश्मा लेकर दूसरा हाथ अपनी केश-विहीन चिकनी खोपडी पर फेरा।

दो मिट्टी तेल के कनस्तरो पर एक फुट-भर चौडा तख्ता डालकर उसने एक बेंच बना रखा था। कौशल हरीश को लेकर उस पर बैठ गया। कपड़ा दर्जी के आगे फेंककर बोला—"इन पडित जी को बाबू

साहब बनाना है, दो पतलून और एक कमीज। कल सुबह तक मिल जाए।"

मास्टर ने फिर चश्मा खोस लिया कानो पर, गज निकालकर कपडा नाप सतोष किया—"कल सुबह तक मुश्किल है। यह कोट देना है एक आदमी को कल ही जाएगा वह बरात मे। रात बारह बजे तक इसी को पूरा करूँगा, फिर कब सोऊँगा और कब उठूँगा।"

सुबह दस बजे तक दे दो, एक पतलून और एक कमीज। कल इन्हे भी एक शादी में जाना है। नाप ले लो, कपडा काटकर श्रीमती जी को दे देना, वे दौडा देगी इस पर मशीन। कौशल ने भन्नन जी की तरफ मुँह किया—"तीसरी शादी की है इन्होने।"

भन्नन जी ने गौर से उसे देखना शुरू किया। कुछ फीका पडकर मास्टर बोला—"सन्तान के लिए की तीनो शादियाँ, सन्तान कोई हुई नही अभी तक।"

"झूठ मत बोलो मास्टर, सन्तान के लिए की या बिना तनखा की नौकरानी के लिए। खाना पकाती है, सौदा लाती है, बर्तन मलती है। दरजी का काम भी सिखा दिया है। मतलब यह है, ये बाजार में काम के बहाने घटो तफरीह मे बिता देते हैं, लेकिन उनके एक मिनट के बाद दूसरे मिनट के बीच साँस लेने की भी कोई जगह नही है। कहाँ है?"—कौशल ने पूछा।

"तरकारी लेने गई है।" मास्टर भन्नन जी का नाप लेने को उठा।

भन्नन जी भी उठे। मास्टर ने नाप ली। कौशल बोला—"खूब बढिया बना देना, ये स्टोरी-रायटर है, नही तो फिर कभी तुम्हारी ही स्टोरी बना देंगे।"

भन्नन जी को न-जाने क्या याद आई, बोल उठे—"मास्टर सोने का क्या इंतजाम है?"

मास्टर हँसा—"इन दोनो कनस्तरो मे आटा-चावल है, इन्हे उधर खिसका देते हैं, इनके ऊपर का तख्ता बिछा देते हैं जमीन पर। मशीन

और कपडे उस सन्दूक पर रख देते है। उस सन्दूक पर का बिस्तर यहाँ बिछा देते है।"

मास्टर ने उत्तर तो दे दिया लेकिन वह मन में सोचने लगा—"कैसा बेहूदा सवाल पूछा इस स्टोरी-रायटर ने ?"

कौशल को भी न-जाने क्या सूझा, वह बोला—"और इस स्त्री को कहाँ रखते हो ?"

मास्टर ने हँसी मे ही उसका प्रश्न उड़ा दिया, उसने दीवार पर टँगी एक फोटो निकाली और भन्नन जी को देकर बोला—"यह तसवीर देखो।"

कोट-पैंट पहने अप-टू-डेट एक हृष्ट-पुष्ट मनुष्य की फोटो थी वह उसके साथ एक महिला भी बैठी थी। भन्नन जी ने पूछा—"कौन हैं यह ?"

"मैं और मेरी पहली शादी की स्त्री।"

भन्नन जी ने फिर उस मास्टर को देखकर उस चित्र पर नजर डाली—"यह तुम्हारी ही फोटो है क्या ? कितने साल पहले की ?"

"पच्चीस साल पहले की। तब मेरी गिरगाँव मे बहुत बड़ी दर्जी की दूकान के साथ कपड़े का बड़ा स्टॉक भी था।"

"वह सब क्या हो गया ?"

"बहुत बडी कहानी है।"

"मैं स्टोरी-रायटर हूँ। कुछ सूक्ष्म रूप से बताओ, बाकी मैं अपनी कल्पना से पूरा कर लूंगा। क्या तुम्हे जुए का शौक था ?"

"नही।"

"शराब ?"

"वह भी नही।"

"फिर क्या हुआ ?"

"दूकान में आग लग गई।"

"कैसे ?"

"दुश्मन पड गए पीछे।"

"वे दुश्मन कौन थे ?"

"फिर बताऊँगा।"

भन्नन जी ने फिर एक बार उस चित्र को देखा और उसे लौटा दिया। दोनो जाने लगे।

कौशल ने ताकीद की—"मास्टर कल दस बजे हाँ, हर्ज न होने पावे।"

"नही होगा। दस बजे आ जाना।"

"ये ही आवेगे।"—कौशल ने कहा।

भन्नन जी ने पूछा—"सिलाई ?"

"इन्हे मालूम है।"—मास्टर बोला।

"हो जाएगा।" कौशल ने कहा—"चलो पडित जी मास्टर वाजिब ही लगा देगे।"

दोनो चले। राह में भन्नन जी बोले—"मुझे तो बड़े मजे का जीव जान पड रहा है यह मास्टर। यद्यपि इसके जीवन के चढाव-उतार के प्रमुख तत्त्वो की जानकारी नही हो सकी है—मुझे तथापि जान पडता तो है मेरी कहानी का आधार मिलेगा यहाँ।"

"कहानी तो आप 'अछूतोद्धार' पर लिख रहे है न ?"

"लेकिन वह कहानी जम नही रही है।"

"कौन कहता है ?"

"एक डायरेक्टर को सुनाई थी मैंने। उसी ने कहा—यह तो प्रोपोगेंडा पिक्चर है। कौशल जी, पब्लिक बड़ी चालाक हो गई है, वह पैसा खर्च करती है अपने मनोरजन के लिए। उसे इस चीनी लपेटी हुई प्रोपोगेंडा की घूंट से बडी सख्त नफरत है।"

कौशल बोला—"पब्लिक की तो एक भेडियाधसान है, किसे पता है, वह क्या चाहती है ? अछूतोद्धार की आपकी कहानी मुझे तो बड़ी

"तुमने पढी थी ?"

"हाँ ।"

भन्नन जी बोले—"प्रेम की हालत दिन-दिन खराब होती जा रही है ।"

"हाँ, बुखार पीछा ही नही छोड रहा है उसका । जाने कैसा बुखार है ?"

"मेरी समझ मे बडा खराब बुखार है, सरनेवाला बुखार । कौशल, अपनी-अपनी जान सबको प्यारी है । उस बिचारे का यहाँ परदेस मे कौन है ? उसके घरवालो को खबर देनी चाहिए हमे ।"

"घरवाले क्या कर देगे ? बिचारे गरीब आदमी । खाने-पीने का ही ठौर-ठिकाना नही । वहाँ गाँव मे डॉक्टर-वैद्य भी नही और गाँव मे पैसा भी नही ।"

दोनो डेरे पर जा पहुँचे । हरीश सिगडी मे कोयले डालकर उन्हे सुलगा रहा था । पूछने लगा—'दे आए कपडे ?"

"हाँ दे आया । कुछ ले भी आया हरीश भाई ।"

"ले क्या आए ?"—बडे आश्चर्य से उसने पूछा ।

"एक स्टोरी ले आया हूँ ।"

हरीश ने भी वही बात कही—"स्टोरी तो आप वह लिख रहे थे ।"

बडे वैराग्य के साथ भन्नन जी बोले—"हाँ लिख तो रहा था, लेकिन उस पर से मेरा मन उचट गया ।"

"देखिए पडित जी, है तो हम बहुत छोटे लोग, बुरा न मानिएगा । एक चीज का उचटा हुआ मन फिर कहाँ पर जाकर जमेगा ?"

"तुम्हारी इस स्पष्टवादिता की प्रशसा करूँगा हरीश भाई । वह कहानी ठीक तो चल रही थी, ऐसा मैं भी समझता था । लेकिन कल जो ठोकर खाई है, उसी से मैंने दूसरी राह पकडी है ।"

"क्या ठोकर खाई ?"

"क्या बताऊँ ? जीवन का ऐसा उपहास कहीं नही देखा, ऐसी

भर्त्सना कही सहन नही की। अपराध मेरा ही है भाई। मैं ही नियम-विरुद्ध काम कर रहा था। भगवान् की विचित्र माया है। ज्यों ही मैंने वेश ठीक करने की ठानी उसी वक्त से मेरे मन में दूसरी ही प्रतिक्रिया जाग उठी। जैसे मै दरजी के पास गया, मेरी कहानी का ठीक-ठीक पात्र मुझे दिखाई दे गया, अब मै सही कहानी लिख डालूंगा।"—भन्नन जी बोले।

कौशल ने एक भगौने मे दाल धोकर अंगीठी पर रख दी। हरीश और भन्नन जी सोने के कमरे की तरफ बढे। मेज पर से एक पत्र उठाकर हरीश ने कहा—"यह आपका एक लिफाफा आया है।"

पत्र खोलकर पढने लगे भन्नन जी, पत्नी का था। इस प्रकार था—"चिट्ठी तुम्हारी मिली। तुम लिखते हो, धीरे-धीरे परिश्रम कर यहाँ काम मिल जाने की पूरी आशा है। लेकिन मैं रोज रात को बडे-बडे भयानक सपने देख रही हूँ, मुझे ऐसा जान पडता है तुम परदेस में बीमार पड गए हो। और तुम्हे यह अच्छी तरह मालूम है, बहुत-सी होनेवाली बातों का मुझे पहले ही पता चल जाता है। मुझे धन-सम्पत्ति सोना-चाँदी कुछ नही चाहिए। तुम अपने घर ही में रहो। हम आधी ही रोटी खाकर सतोष कर लेंगे। इस पत्र को कोरी बकवास नही, तार की तरह समझना और फौरन ही घर का टिकट कटाकर यहाँ को आ जाना। जब तक मैं तुम्हे अपने सामने न देख लूंगी, मेरी नीद और भूख दोनों हराम हैं। थोड़ा लिखा, बहुत समझना और मेरे ऊपर कृपा करना, फौरन घर को चले आना।"

चिट्ठी पढकर भन्नन जी के चेहरे का रग एकदम उतर गया। उनकी ऊपर की सास ऊपर और नीचे की नीचे रह गई। हरीश ने पूछा—"क्यो पडित जी किसकी चिट्ठी है?"

"पत्नी की।"—निरुत्साहित होकर पडित जी ने जवाब दिया।

"ठीक ही होगा सब-कुछ?"

"कहाँ से भाई, यह तो एक बिना बादल की बिजली हो गई।"

"हैं ! है ! क्या ? क्या ?"—हरीश ने पूछा।

"जब यहाँ सब ठीक होने को जा रहा है, वे लिखती है फौरन् घर को आ जाओ।"

"क्या तबीयत खराब है उनकी ?"

"तबीयत तो नही, दिमाग जरूर खराब है।"

"क्या सोचते हो फिर ?"

"सोचूँ क्या ? वह तो सरासर नादानी कर रही है। घर से चलते समय रोक लेना था, उसे अगर रोकना ही था। हरीश भाई, इतनी दूर आकर अब बिना यहाँ से बिना कुछ काम किए घर को चल देना सरासर मूर्खता है। यहाँ के लोग भी बेवकूफ कहेंगे, और घर पर तो फिर सभी रात-दिन हँसी उडायेंगे। तुम्हारी क्या राय है ?"

"अब मालूम नही, वे क्यो आपको बुलाती हैं ? वहाँ अकेले पड जाने मे तबीयत घबराती हो ?"

"कोई ऐसी बात नही है। मेरे मित्र-सम्बन्धी बहुत से लोग है वहाँ। गोपाल दूर के रिश्ते से उनका भाई है, बिचारा मेरी भी बडी इज्जत करता है। केवल एक अंधविश्वास ! वे लिखती हैं, कि वे बडे भयानक सपने देख रही हैं, मै अगर यहाँ रहा तो जरूर बीमार पड जाऊँगा। देखो हरीश भाई, मैं अपनी तदुरस्ती की हर घडी फिक्र रखता हूँ।"

उसी समय कौशल आकर बोला—"पडित जी, प्याज छोड दूँ दाल में, खाते हैं न आप ?"

"हाँ भाई यही बात चल रही थी। प्याज और चाय यहाँ की आब-हवा में ठीक रहने के लिए जरूरी चीज़ है। मैं खाऊँगा और अगर ज़रूरत पड़ेगी तो अडे भी खा लूँगा।"

"हम तो खाते ही हैं पडित जी।"

"तो मेरे भी खाए हुए ही समझो।" भन्नन जी ने कौशल से कहा—"कौशल भाई, तुम तो अपनी राय दो कुछ। मेरी पत्नी की चिट्ठी आई है कि फौरन घर को चले आओ।"

"कारण ?"

"कुछ नही ।"

कौशल हँसकर बोला—"नही पडित जी आप विद्वान आदमी है इतनी दूर मे इतना खर्च कर यहाँ आए हैं । इतनी तकलीफ उठाकर रात-दिन सिनेमावालो के दरवाजे खटखटा रहे हैं । बिना अपनी मेहनत का फल जाने फौरन् ही घर को लौट जाना कोई अक्ल की बात नही है ।"

"हाँ तुम ठीक कहते हो । देखो जाऊँ भी तो कैसे ? सौ रुपए ले कर घर से चला था । खर्च करते-करते कल तीस रुपए और कुछ खिरीज जेब मे रह गई थी । कल भी अगर यह चिट्ठी आ गई होती तो लौटने का हिसाब हो जाता । अट्ठारह रुपए का कपडा लिया, पाँच-छै रुपए उसे सिलाई के देकर छै-सात रुपए बचे रहते है, उनसे क्या होगा ?"

कौशल बोला—"नही पडित जी, साफ लिख दीजिए, मै अभी नही आ सकता । औरत की अक्ल के पीछे दौडकर मैं दुनिया में बेवकूफ कहलाना नही चाहता ।"

"कार्ड है ?"—भन्नन जी ने पूछा ।

कौशल ने उन्हें एक कार्ड निकाल कर दे दिया । भन्नन जी उसी समय पत्र लिखने लगे—"प्रियतमे, तुम्हारे पत्र ने मेरी तमाम गतिविधियों पर भयानक निरोध लगा दिया । मैं यहाँ मेहनत कर सिनेमा के भीतर द्वार तोड रहा था । तुम्हे अगर इस तरह मुझे बाधा पहुँचानी थी तो घर से चलते समय ही रोक सकती थी । मैं तुम्हारी आज्ञा लेकर ही तो चला था, मैंने यहाँ देश-काल के अनुसार कपड़े सिलवा लिए हैं । बहुत-सा रुपया अपने वेश को अप-टू-डेट करने में लग गया । इस समय मेरे पास घर लौट आने को कुछ नही है । यहाँ एकाध महीना रह कर जरूर मुझे सफलता मिल जाएगी, इसमें सन्देह नही है । मै किसी सोने-चाँदी के लालच से यहाँ नही आया हूँ । प्रत्येक लेखक एक संदेश को लेकर आता है, उस धरोहर को वह जनता में फैलाना अपना कर्त्तव्य समझता

है, सिनेमा सबसे बढिया माध्यम है । इसलिए तुम कुछ दिन धीरज रखोगी तो मै अपना संदेश यहाँ देकर शीघ्र तुम्हारे पास हाजिर हो जाऊँगा·· ”

भन्नन जी ने पत्र लिखकर दोनों को सुना दिया । दोनो कहने लगे—“ठीक है ।”

हरीश बोला—“इधर कुछ जगह रह गई है, कुछ इसमें भी लिख दीजिए ।”

भन्नन जी ने इधर भी लिखा—“यहाँ रहने को बडी कठिनाई है, लेकिन भगवान् की कृपा से मुझे गोपाल के मित्रो ने बड़ी सहायता दे रखी है । रहने और खाने की मुझे कोई कठिनाई नही है । गोपाल को मेरा आशीर्वाद । उससे कह देना वह लिखने का अभ्यास बराबर जारी रखे । कहानी के लिए किसी कम्पनी से कन्ट्रैक्ट होते ही मैं तुम्हारे लिए फौरन ही रुपए भेज दूँगा ”

हरीश उसी वक्त उस कार्ड को डाकखाने में छोडने चला गया ।

भन्नन जी को रात-भर श्रीमती जी के पत्र का ही खटका लगा रहा। अच्छी नीद नही आई । जब आती तो वे अपने को भग्गो जी के पास पहुँच उन्हें धीरज देते देखते।

किसी तरह रात कटी और भन्नन जी को दूसरी तरफ की धुन लगी । सिगरेट मे भरकर उन्होने गाँजा पिया तो दूसरा ही दृश्य उनकी नजरो में खुलने लगा ।

चाय पीकर मेज में कुछ लिखने-पढने को बैठ गए । प्रेम फिर उठ गया था । भन्नन जी बोले—“तुम्हे अपने घर को चिट्ठी लिखनी चाहिए ।”

“घरवालो को चिन्ता हो जाएगी पंडित जी व्यर्थ ही । मै धीरे-धीरे ठीक हो जाऊँगा दवा पीकर ।”

“इस पानी से कुछ न होगा । किसी अच्छे डॉक्टर को दिखाकर अपनी बीमारी की जड मालूम करो ।”

"पहली तारीख आने पर यही करूँगा।"

पडित जी फिर लिखने में लग गए। "अछूतोद्धार" की कहानी को फिर एक बार पढने लगे, नही रुचि उन्हे। उनका मन उसी दरजी के व्यक्तित्व की परिक्रमा करने लगा, जिसे वह अपनी पतलून और कमीज सीने को दे आए थे। उनके मन मे ऐसा विश्वास जम गया था कि उस के सिए कपडे पहनकर जरूर उन्हें कहानी लिखने के लिए आपसे-आप प्रेरणा मिल जाएगी।

"बडा अनोखा हीरो रहेगा वह तकदीर के साथ मल्लयुद्ध करनेवाला दरजी। उसके साहस को धन्य है। दिन-रात परिश्रम कर वह सघर्ष कर रहा है। यद्यपि उसने शब्दो में ऐसा कुछ नही कहा, पर उसकी प्रत्येक चेष्टा से यह स्पष्ट प्रतीत हो रहा था, वह एक दिन अपने रूठे हुए भाग्य को फिर मनाकर ले आएगा। उस गली के भीतर से अपनी दूकान को उठाकर फिर शहर के सबसे रौनक-भरे हिस्से में प्रस्थापित करेगा।"

बडी बेसब्री से भन्नन जी दस बजे की प्रतीक्षा कर रहे थे। कौशल, अपने मालिक की मोटर साफ कर लौट आया था। हरीश रोटी पका रहा था।

कौशल बोला—"क्यो पडित जी, चल रही है स्टोरी ?"

"अछूतोद्धार" वाली को तो फिर करूँगा ठीक, क्योकि अभी उसके पात्र सब काल्पनिक है। मेरा विचार है, आम जनता कल्पना को अधिक पसन्द नही करती, लेकिन अब मुझे मेरी कल्पना का पात्र इस ठोस धरती पर हाड-चाम के शरीर मे मिल गया है।"—मेज पर हाथ मार कर भन्नन जी बोले।

"उसी दरजी के लिए कहते होगे आप ? लेकिन आपकी स्टोरी का हीरो कौन है ?"

"कैसी अशुद्ध धारणा जनता में फैल गई है, हीरो जवान और रूप-वान ही होगा, हीरोइन नवयुवती और सुन्दरी ही। यह केवल एक

अन्धविश्वास है । जब तक इन अन्धविश्वासो को तोडकर मिटा न दिया जाएगा—सिनेमा के भीतर कदापि कला नही निखर सकती ।"

"लेकिन पडित जी, अगर जवान हीरो और हीरोइनें न हो तो कौन आपकी पिकचर देखने आएगा ?"

"तुम्हारे मन मे भी उसी अन्धविश्वास की जड हरी है । विदेशो की नई फिल्में यहाँ पास हुई, जिनमें बालक और बूढे ही प्रधान पात्रो में से थे । तुमने नही देखी वह फिल्में ? याद तो करो ।"

"देखी, लेकिन उसके लिए वैसी ही तगडी स्टोरी चाहिए ।"

"हाँ, अब तुमने बात कही । फिल्म की रीढ स्टोरी है। गीतो-नाचो की भरमार, विशाल, खर्चीले सेट और कसट्यूम लाखो रुपयो की एक्ट्रेसे—यह सब चीजे कहानी की कमजोरी को ढकने के लिए काम मे लाई जाती है ।"

"क्यो पडित जी, तो क्या बिना गानो और खूबसूरत एक्ट्रेसो के भी फिल्में चल सकती है ?"

"जरूर चल सकती हैं ।"

"हीरोइन कौन लेगे आप ?"

"जो है वास्तविकता में ।"

"अर्थात् दरजी की वह तीसरे ब्याह की पत्नी ।"

"तब तो ठीक है । बहुत से हमारे फिल्म के पुराने हीरो अधिक पुराने पड गए हैं लेकिन उनके हीरो का पार्ट खेलने का शौक अभी नया ही है । उनमे से एक तो आपकी स्टोरी में बेदाग खप जाएगी ।"

"बच्चा, बूढा-जवान, स्त्री-पुरुष, अमीर-गरीब, सुन्दर-असुन्दर, गोरा-काला—जो भी त्याग और तपस्या, दूसरों के लिए बलिदान, शौर्य-साहस का काम कर सकता है वही हीरो है । नीद और भूख भूलकर उन्होंने विज्ञान के अविष्कार किए हैं, नए देशो को ढूँढ निकाला है, वे भी सभी । हाथ में शस्त्र लेकर जिन्होने अपने देश की रक्षा और आततायियो का सामना किया है, मनुष्यों के कल्याण के लिए जिन्होंने नए

साहित्य और नवीन धर्मों को जन्म दिया है—वे सब हीरो है ।"

"हाँ पडित जी, तो आज मुमकिन है आपको हीरोइन जी के भी दर्शन हो जाएँ ।"

'देखो जो भी हो ।"

"ऐसा न कहिए, उनको देख लेना आपको जरूरी है, तभी तो आप ठीक-ठीक लिख सकेंगे । दस बजे बुला रखा है उसने ? दस बजे तक तो होगी ही वह । आप नौ ही बजे चले जाएँ ।"

'अब क्या बजा है ?"

"पौने नौ । पडित जी आपके पास एक रिस्ट वाच और एक फाऊ-टेन का होना भी जरूरी है ।'

"देखो भाई ।"

हरीश बोला—"रोटी तैयार है पडित जी, मेरी समझ मे खाना खा लीजिए गरम-गरम ।"

"प्रेम खाना खाकर ही गया है क्या ?"—भन्नन जी ने इधर-उधर देखकर कहा ।

"वह अस्पताल गया है । वहाँ से आकर खाएगा । उसके लिए रख देगे ।"—हरीश ने फूली हुई रोटी सिगडी से निकाली और उसे चकले पर पटकते हुए कहा ।

बात मान ली पडित जी ने । कौशल और उन्हे भोजन कराकर हरीश खुद खाने लगा ।

कौशल जाने की तैयारी करने लगा । उसने अगरेजी का प्राइमर निकाली वह हर समय उसके साथ रहती थी । भन्नन जी ने पूछा—"दफ्तर मे भी इसे याद करते हो क्या ?"

"हाँ पंडित जी जब कही इधर-उधर जाना नही होता तो स्टूल में बैठे-बैठे ऊँघने मे यह अच्छा है मनुष्य अपनी तरक्की की राह टटोलता रहे ।"—कौशल ने प्राइमर रखकर उसके भीतर से अपना रेलवे पास निकाला ।

"तुम्हारे उत्साह को देखकर ही मुझे अपनी इस अवस्था मे भी अंग-रेजी बढाने का चाव हुआ है।"

"अभी आप पूरे जवान हैं पडित जी, सौ-पचास बाल सफेद होने से कोई बूढा नही हो जाता। मैं तो समझता हूँ जब-तक वह नए-नए काम करने के लिए कमर कसता रहता है, वह अस्सी बरस मे भी बूढा नही कहलाएगा। यह देखिए, फिर खरीदना पडा मुझे रेलवे पास। अब मै वैसा बेखबर नही रहा। आप भी जरा होशियारी से जेब के नोट सँभाले रहिएगा।"

'हाँ भाई।" भन्नन जी ने अपने कोट की जेब पर हाथ रखा।

"अच्छा पडित जी अब आपमे शाम को अप-टू-डेट भेस मे भेट होगी?"

"हाँ अगर दरजी ने कपडे दे दिए।"

"मास्टरानी से यानी आपकी हीरोइन से आपकी भेट हो या न हो, पर मास्टर जरूर वादे का पक्का है, आपकी एक पतलून और एक कमीज दस बजे तक दे देगा।"—कौशल चला गया।

भन्नन जी मन-ही-मन अपना प्रोग्राम बनाने लगे—"दरजी के यहाँ से कपडे लाना पहला काम है? फिर?"

हरीश खाते-खाते बोला—"क्यो पडित जी, आज कहाँ-कहाँ जाने का विचार है?"

भन्नन जी ने कहा—"अभी नई सूट लाकर नया आदमी बनता हूँ। तुम बेनू साहब और सरिता जी से भेंट कराने को कहो, तो क्या जरूरत है मुझे दर-दर मारा-मारा फिरूँ?"

"पडित जी, बेनू साहब तो आज शूटिंग मे गए हैं चेंबूर के स्टूडियो में। चार-पाँच दिन लगातार शूटिंग है वहाँ दिन-रात। बहुत दिनो मे पिक्चर रुकी पड़ी है। प्रोड्यूसर अब उसे पूरा कर ही चैन लेगा ऐसा जान पड़ता है। मैं भी वही जाऊँगा।"

"करीम चाचा?"

"वे भी नही आवेंगे।"

"मै भी तुम्हारे साथ चला चलूँ ? शूटिंग देख लेता, कुछ कैमरे इत्यादि की आइडिया हो जाती तो कहानी लिखने में मदद मिलती।"

कुछ रुक कर हरीश बोला—"जैसी तुम्हारी मर्जी हो, लेकिन तुम्हे तो अभी कपडे लाने है।"

"तुम कितने बजे जाओगे ?"

"बस खा-पीकर चल दूंगा। बर्त्तन भी आकर मलूँगा।"

"अच्छी बात है फिर किसी दूसरे दिन सही।"

"अजी पडित जी, शूटिंग की क्या परवा हो गई आपको ? आप सबसे पहले अपनी स्टोरी का ही राग जमाइए। भगवान चाहेगे तो उसी की शूटिंग देखने को मिल जाएगी आपको। और बेनू साहब तो अपने घर के ही आदमी है, आप जब कहे मै तब उनसे मिला दूंगा। अजी यहाँ दफ्तर क्या मै आपको उनसे मिला दूं उनके बेड-रूम मे।"

"और सरिता जी से ?"

"अजी सरिता जी से मिलने क्या कही जाना पडेगा ? रोज आप उनके नाच की चापे सुनते है। उनकी चापो से जो मिट्टी गिरती है, वह सब हमारी चाय और हमारे खाने मे पडकर हमारे पेट में पहुँचती है।"

"यह तो बडी भयानक बात तुम कह रहे हो!"

"यह भयानक बात है पडित जी, लाखो आदमी नर्त्तकियो की इस चरण-रज के लिए व्याकुल रहते है। यह हमारी तकदीर है जो बिना कोशिश के ही हमे ऐसा परसाद मिल रहा है।"

"प्रेम के पेट मे कही इस धूल-मिट्टी ने ही जाकर तो उसकी बीमारी नही उपजाई है ?"

"देखिए डॉक्टर साहब क्या बताते हैं ?"

भन्नन जी ने उधर फर्श की तरफ देखकर कहा—"फर्श तो पक्की है, वहाँ से धूल गिरने की तो कोई सभावना नही है।" भन्नन जी हँसने

लगे, हरीश भी।

भन्नन जी ने कमरे की चाबी लेकर कहा—"तुम ताला लगा जाना चाबी मै रख लेता हूँ।"

"प्रेम के पास है दूसरी चाबी।"—हरीश ने कहा मुंह-हाथ धोते हुए।

भन्नन जी सीधे दरजी के यहाँ चल दिए। दरजी तो नही मिला पर एक महिला चूल्हा-चौका कर रही थी। भन्नन जी जाते ही समझ गए यही उनकी हीरोइन है। बोले—"नमस्ते, मास्टर कहाँ हैं ?"

"कमीज-पतलून में काज कराने और बटन लेने गए है। पतलून तुम्हारी है ? बन गई, मुझे तो सोने भी नही दिया उन्होने इसके लिए।"

"धन्यवाद !" बडे गौर मे जब भन्नन जी अपनी हीरोइन को देख रहे थे तो मास्टर आ पहुँचा।

वह आते ही कहने लगा—"क्या बात कर रहे हो ?"

"कुछ नही पूछ रहा हूँ। इनकी कृपा से बन गई मेरी पतलून।"

"इनकी कृपा कैसी ?" चिढकर मास्टर बोला—"नाप-जोख मैंने की, कटर मैं हूँ, कच्चा मैने किया, जरा इन्होने उसपर मशीन चला दी तो इनकी कृपा कैसी हो गई ?"

"तुम दोनो की सही।"

फिर उसी भावना मे मास्टर बोला—"अभी दस बजने मे बीस मिनट है, तुम कही बाजार घूम आओ। मै तब तक इनमें बटन जडता हूँ।"

भन्नन जी बोले—"मास्टर तुमने यह जो दूकान, सोने-खाने का कमरा एक ही कर दिया है इसी से तुम्हारी खोपडी चिकनी हो गई।"

मास्टर ने बडी बुरी तरह से भन्नन जी को देखा—"क्या कहते हो तुम ? मै तो तुम्हे स्टोरी-रायटर होने की वजह से अच्छा आदमी समझता था।"

"मैं बुरा नहीं हूँ। मैने अपनी अगली स्टोरी के लिए तुम्हे ही हीरो बनाया है। मैं उसे ऐसा लिखूंगा, ऐसा लिखूंगा।"

"अच्छा तुम इसी बेंच मे बैठ जाओ लेकिन मास्टरानी की तरफ से मुँह मेरी तरफ फिरा लो । वह बडी सीधी औरत है, गाँव की लडकी। अच्छा तुम क्या लिखोगे उसमें ?"

"जैसा तुम बताओगे वैसा ही। अपने तमाम बीते हुए जीवन की घटनाएँ तुम्हे छल-कपट और परदा-ढकना खोलकर बता देनी होगी।"

मास्टर ने ओट से पत्नी की तरफ इशारा किया और अपने होठो पर हाथ रखकर भन्नन जी को चुप करा दिया। वह जल्दी-जल्दी बटन लगाने लगा। ऐसा जान पडा, पडित जी को ज्यादा देर वहाँ बिठाना नही चाहता था।

भन्नन जी बोले—"मास्टर, मैं बडी बढिया स्टोरी लिख दूँगा तुम्हारी"

मास्टर चुप-चाप बटन लगाने में दत्तचित्त रहा। भन्नन जी ने जेब से बीडी का बडल निकाला। पतलून की जेब में यह बीडी का बडल कैसे रखूंगा—इस सोच-विचार में पड गए वे कुछ देर। लेकिन पैसे की बचत करनी जरूरी थी।

भन्नन जी ने पहली बीडी निकालकर उसे दी—"लो मास्टर बीड़ी पियो।" भन्नन जी ने एक बीडी उधर फेंकी।

मास्टर ने बीडी उठा ली और भन्नन जी के दियासलाई निकालने से पहले ही उसने इस्त्री खोलकर उसके कोयले मे बीडी सुलगा ली।

भन्नन जी ने भी अपनी बीडी उधर ही बढाई—"एक-एक दियासलाई की तीली बचाकर मकान बन सकता है।"

"हाँ भाई, पाँच मंजिल का मकान था मेरा, दो मंजिल मेरे थे और तीन में किराएदार। वह सपना था क्या ? फिर किस दिन वह खडा हो सकेगा ?"

"बडा ताज्जुब है मास्टर, आग बुझाने के इजन भी नही बचा सके तुम्हे ?"

"नही, दुश्मनो ने पहले ही मेल-जोल कर इजन के यहाँ तक आने

मे देर करा दी ।"

"बीमा नही था ?"

"नही ।"

"किराएदारो की कितनी हानि हुई ?"

"पहले किराएदारो को ही बचाया गया । सामान एक जगह से दूसरी जगह ले जाने का भाडा ही उनकी हानि थी । मेरा ही सब-कुछ गया—नकदी, माल-असबाब, बर्तन-भाँडे, मशीन-पुरजे, फरनीचर-मकान ! कुछ बाकी नही रहा ! जो कुछ बचा वह हरजाने मे दे दिया गया ।"

"हरजाना कैसा ?"

"जिनकी सूटें सिलने को आई थी, उनमें से किसी ने नही छोडा । इसी रज मे एक महीने बाद मेरी दूसरी घरवाली जाती रही ।"

देग, थाली-कटोरे-गिलास खगालती हुई उसकी चौथी घरवाली कुछ कहने लगी । अस्पष्ट होने के कारण कुछ समझ में नही आया । मास्टर शायद कुछ समझा हो उसने भी कुछ वैसे ही उच्चारण में कहा । भन्नन जी दोनों की इस भाषा के भीतर प्रवेश पाने से वचित ही रहे ।

"आग कैसे लगी ?"

"कोई कहता है बिजली से, कोई गैस से, कोई स्टोव से । मै कहता हूँ इनमें से किसी से नही । आग लगाई दुश्मनो ने । कपडे की दूकान ठहरी ।"

"कपडे की दूकान में गैस और स्टोव कहाँ से आया ?"

"अरे भाई, दूसरी मजिल में । वहाँ कपडे का बाकी गोदाम भी था, अब तुम मेरी पुरानी याद खोद-खोदकर बाहर मत निकालो इस बखत चुप रहो ।"

भन्नन जी चुप हो गए । मास्टर की पत्नी ने हाथ धोए, बर्त्तन सजोकर रख दिए और बाहर न जाने कहाँ को चली गई ।

मास्टर ने बटन लगा दिए । पतलून और कमीज मे लोहा करने लगा । पतलून को देखकर भन्नन जी खुश हो गए । कल्पना में अपनी

दोनो टाँगे उसमे डालकर खड हो गए। अपने उस नए चित्र पर उन्होने अपने को खुद ही मौन बधाई दी और बोले—"मास्टर अब तो तुम्हारी घरवाली चली गई है, कहो तो दो-चार सवाल और करूँ तुम्हारी स्टोरी के सम्बध मे ?"

"इस बखत नही अब। अपने मन से सोचकर लिख देना।"

"नही मन से नही लिखा जाएगा।"

"फिर कैसे स्टोरी-रायटर हुए तुम ?"—मास्टर ने पतलून और कमीज भन्नन जी की तरफ बढाए।

उसी समय दीवाल पर की घडी ने टन्-टन् दस बजाए, भन्नन जी बोले—"वाह बडे समय पर काम करनेवाले हो, ज्यादे दिन तक अब तुम तकलीफ मे नही रहोगे। तुम्हारी यह घरवाली भी बडी सौम्य और काम करनेवाली जान पडती है।"

मास्टर फिर नाराज हो गया—"मुझे गाली भी दो तो कबूल है, घरवाली के बारे मे कुछ न कहो। तुम्हारे कपडे मिल गए अब चल दो तुम।"

"सिलाई ?"

"है तो दे जाओ। अगले हफ्ते इसी दिन फिर आना अपनी दूसरी पतलून ले जाने।"

भन्नन जी ने एक-एक रुपए के तीन नोट निकालकर उसके सामने रखे।

"ये तो कम है।"

"कौशल जी ने इतने ही बताए है। उस पतलून की सिलाई जब उसे ले आऊँगा तब दूँगा।"

मास्टर बोला—"अच्छी बात है।"

भन्नन जी को पतलून पहनने की जल्दी हो गई और मास्टर का कथानक वही पर छोड़कर वे घर को चलते हुए बोले—"नमस्ते।"

डेरे पर पहुँचकर जैसे ही ताला खोलकर कमरे में पहुँचे थे कि द्वार

पर ही दो पत्र पडे हुए मिले। हृदय में पतलून पहनकर साहब बन जाने का जो भी उत्साह था, उस पर चोट-सी पडती हुई जान पडी। पत्र उठाकर देखे दोनो उन्ही के नाम थे।

कमीज-पतलून मेज पर रखकर पहले पत्र ही पढ डाले। पहला कार्ड पढ़ा। गोपाल का था। " अभी तक आपका कोई पत्र नही मिला। प्रायः नित्य ही दीदी जी के पास जाता हूँ। आपके बिना उनकी तबीयत बहुत घबराई हुई है। आप रोज ही एक पत्र उनके लिए लिख दिया करें। आशा है आपका काम-ठीक चल रहा होगा। किसी कहानी की बातचीत कही तय हुई या नही, शीघ्र लिखिएगा। हरीश भाई से मेरी नमस्ते कह दीजिएगा और भी जो आपके साथी हो उनसे भी। मेरा मन आपकी ही ओर लगा हुआ है। जब आपको कुछ सफलता मिले तो इस सेवक को जरूर याद कीजिएगा। मेरे लायक जो सेवा हो लिखिएगा। अपनी तन्दुरुस्ती का हर समय ख्याल कीजिएगा ।"

"बस अपनी फिकर सबको पडी है। बम्बई मे कैसा भयानक सघर्ष करना पडता है, इसकी किसी को खबर नही है।" उन्होने लिफाफा खोलकर पढा, श्रीमती जी का था—"आज की डाक से भी तुम्हारी कोई चिट्ठी नही मिली। तुम वहाँ कर क्या रहे हो? मै कहती हूँ अगर वहाँ कुछ नही हो रहा है तो तुम घर क्यो नही चले आते हो?"

"अभी यहाँ आए दस दिन भी नही हुए, इनको ऐसा अधैर्य हो गया। अगर यहाँ कुछ नही हुआ तो घर कैसे लौट जाऊँ? आने मे एक सौ रुपए लगे थे, जाने के लिए कहाँ से लाऊँ? कैसी अक्ल है इनकी जाने।" उन्होने फिर पत्र पढा—"मुझे इधर मालूम हुआ है, वहाँ सिनेमा में बड़ी ख़राब सगत है। अगर पहले ऐसा जानती तो मै हरगिज अपनी जञ्जीर बेचने को न देती तुम्हे। हे भगवान् न जाने मेरे किन पापो के फल से मुझे ऐसी मति आई। मुझे तुम्हारी धन-सम्पत्ति कुछ नही चाहिए। मैं अपनी रूखी आधी रोटी और फटी-मैली धोती में ही खुश हूँ। इसीलिए तुम जल्दी से जल्दी घर को चले आओ।"

"चले आओ, घर को चले आओ। बस चिट्ठी भर मे यही एक राग है। कैसी औरत है यह ? इसका दिमाग खराब तो नही हो गया !" फिर चिट्ठी पढी उन्होंने—"जरूर तुम्हारे खाने-पीने का वहाँ कोई ठीक हिसाब नही हो रहा होगा। बखत-बेबखत कच्चा-पक्का खाने को मिल रहा होगा या होटलो मे सब का छुआ और जूठा-पीठा, तेल-वनस्पति का खाना। तुम जरूर बीमार पड जाओगे, फिर उस परदेस में कौन है हमारा ? इसलिए अक्ल की बात एक यही है, तुम फौरन घर को चले आओ। गोपाल भाई यहाँ आता रहता है, वह भी बिचारा बेबस है। मैंने उससे भी कह दिया है, वह तुमको लिख दे कि फौरन चले आओ। और अगर तुम शीघ्र ही नही वापस आ गए तो मैं बम्बई टिकट कटा-कर पूछते-पूछते वहाँ चली आऊँगी और तुम्हे वापस ले आऊँगी। इसमे दूने रुपए खर्च हो जाएँगे और मेरा फजीता अलग होगा। इसलिए अक्ल को काम में लाओ और घर लौटने में देर न करो⋯"

गुस्से मे आकर भन्नन जी ने पत्र जमीन पर फेंक दिया—"कैसी फूहड औरत है ! ठीक ऐसे बखत में इसकी यह मनहूस वाणी मुझे मिली है, जब मैं अपनी काया-पलट कर सिनेमा के क्षेत्र में कूद रहा था। कैसा उत्साह था मेरे ! सब इसने चौपट कर दिया ! अभी तो कल ही इसकी चिट्ठी मिली है मुझे। आज दूसरे ही दिन फिर दूसरी चिट्ठी भेजने को इसे क्या हो गया ? अगर यहाँ पर होती तो मैं इसे बता देता।"

शीघ्र ही सँभलकर भन्नन जी ने मन में कहा—"क्या हो गया मुझे ? कहाँ बह गया मैं ? मैं लेखक हूँ ? दूसरो को प्रकाश देनेवाला ? जरा सयम और शान्ति नही जिसमें वह क्या जनता के लिए कुछ लिखेगा ? क्या उस लेख से लोगो का भला होगा ?⋯ हे भगवन्, क्षमा करो दुर्बल-प्राणा नारी, कभी इस तरह अकेली रही नही जीवन में। क्या करे और पत्र लिखकर ही अपने मन को समझाती होगी। मुझे भी उत्साहवर्द्धक और ढाढस बँधानेवाला पत्र भेज देना चाहिए उसको आज। अब समय

नही है, कल को जरूर ।"

उन्होने भूमि पर तिरस्कृत होकर पडे हुए उस पत्र को प्रेमपूर्वक उठा लिया । अपने मस्तक और हृदय से उसे लगाकर जेब मे रख लिया । फिर पहले का सा उत्साह बटोरते उन्हे देर न लगी, वे नए कपडे बदलने लगे । पुराने कपडो को सँभालकर रख दिया । कोट के कागज और बटुवा पतलून की जेब मे सँभाल लिए ।

खिडकी में छोटा-सा आयना पडा था उसमे मुँह देखने लगे । याद आई पैर की अब । पैर मे चप्पल था । सोचने लग—"चप्पल ! पतलून के साथ ? जूता खरीदूँ तो जेब का सारा बटुवा सूना पड जाएगा । इसलिए अभी ऐसे ही चलना ठीक है ।"

इसी समय प्रेम आ पहुँचा, बोला—"हाँ पडित जी अब जँचे हैं आप । लेकिन जूता नही है आपके पैर मे, मेरा जूता देखिए शायद आपके ठीक हो ।"

"धन्यवाद प्रेम ! मै खरीद लूँगा शीघ्र ही । तुम आज काम मे गए नही ?"

"एक घटे की छुट्टी माँग रखी है । डॉक्टर के पास गया था ।"

"क्या कहा ?"

"कहता है, इजेक्शन लगेग ? बहुत खर्चा बैठेगा । देखिए जो भी होगा ।"

"अच्छा भाई, मै जरा फर्मस का राउड मार आता हूँ, तुम खाना खालो ।"

"जरूर जाइए पडित जी भगवान् आपको कामयाब करें ।"

सत्रह

आज थैला नही लिया भन्नन जी ने हाथ में। अपनी दो सर्वश्रेष्ठ किताबें दबाईं बगल मे कुछ कागज-पत्रो के साथ। पतलून की जिस जेब में बटुवा था उसमें हाथ डालकर चले। एक सिगरेट की डिबिया खरीदी, उसमें कुछ गाँजा खोसकर जोर से दम लगाई। आधी सिगरेट बुझाकर दियासलाई की डिबिया मे रख ली। नशे ने दिमाग में कुछ नई रगत दिखाई, दुनिया कुछ दूसरी तरह से घूमने लगी।

रेल द्वारा सीधे महालक्ष्मी के स्टेशन पहुँच गए। वहाँ से उतर कर फेमस को चल दिए। मार्ग अभ्यस्त था, कोई कठिनाई नही जान पडी। गाँजा घूम रहा था मस्तिष्क में, बद्री से प्रसाद-रूप मे जो मंत्र पाया था, वह भी तो!

फाटक पर दोनो हाथ नई पतलून की जेबों में डाल लिए बगल मे किताबें थी। दरबानो की तरफ देखा भी नही। कोई कुछ न बोला। बद्री के मत्र पर विश्वास बढा। सीधे ऊपरी मजिल पर चढ गए।

"बहुत सोच-समझकर आज पहला कदम रखना होगा।" भन्नन जी ने मन में निश्चय किया—"अंग्रेजी की कहावत बडी सही है, सुन्दर आरम्भ पर ही कार्य की आधी साधना ठहरती है। यह कोई जरूरी नही है कि मैं गणित की गिनती का अनुसरण करूँ।" इधर-उधर देखा उन्होने।

'न्यू सिनेमा"—का साइनबोर्ड नजर आया। वह नाम सुना-सा याद पडा। सोचने लगे—"कहाँ सुना ?"

याद आया—"करीम चाचा ने कहा था 'न्यू सिनेमा'। उसके मालिक दयाल भाई। जरूर यही जाना चाहिए। भीतर से कोई कह रहा है, यहाँ काम बनेगा।"

आफिस के बाहर दो आदमी बैठे बैंच मे बाते कर रहे थे। भन्नन जी आफिस के भीतर घुसने लगे तो एक बोला—"ऑफिस में कोई नही है।"

"दयाल भाई कहाँ है ?"

"उन्ही के इन्तजार मे हम भी बैठे है, आप तशरीफ रखिए न इसी बेंच पर।"

भन्नन जी ने नई पतलून पहन रखी थी। उन लोगो के साथ बैठ जाने में जरा सकोच-सा हुआ उन्हे। वे खडे ही रहकर उनकी बातें सुनने लगे।

फिर दूसरे आदमी ने कहा—"तशरीफ रखिए न कब तक खडे रहेंगे आप ?"

भन्नन जी उन दोनो के आग्रह पर बैठ गए और मन मे सोचने लगे—"देखा, यह सारा प्रताप इस नई पतलून का है।"

एक ने किसी एक्टर के पीने की और उसके गाने की तारीफ करते हुए कहा—"वाह ! क्या पीता था और क्या गाता था ? बारह बजे रात जब मूड में आता था तो गाता था। सारी कॉलोनी की बद खिडकियाँ खटाखट, खटाखट खुल पड़ती थी।"

दूसरे ने किसी को सिनेमा के संगीत में ढोलक मिला देने के लिए बदनाम किया और फिर एक किसी सगीत-निर्देशक की बात कहते हुए बोला—"क्या अजीब सिडी है, बीस वायोलिनो में अगर एक भी कम हुआ तो कह देता है—'पैक अप !' समझ मे नही आता अरे बीस में क्या एक का कम होना या ज्यादे होना ? मैं तो समझता हूँ यह सब पीने के ही रंग हैं।"

पहला बोला—"भाई मेरा तो ऐसा ख्याल है आर्टिस्ट जो भी है सिनेमा के भीतर किसी-न-किसी रूप में नशा करता है। क्या ख्याल है तुम्हारा ?"

"यही बिल्कुल यही। म्यूजिकवाले कहते ही है, बिना नशे के सुर ही नहीं बँधता, ताल में जम ही नही सकते।"

"और पेटरो का भी यही कहना है। बिना नशे के उनके दिमाग मे कोई तसवीर पैदा नही होती।"

"एक्टरो मे भी यही बात है। बडे बढिया पीते हैं और छोटे घटिया।"

भन्नन जी चुपचाप सुन रहे थे। मन-ही-मन बोले—"और लेखको की तो मै जानता हूँ। जहाँ नशा जमा कि जो बात कभी देखी न हो, न सुनी हो, वह सब मस्तिष्क मे आ जाती है। लेकिन यह अनुभव भग का है। गाँजे का भी उससे मिलता-जुलता है। शराब के रग सुना है कुछ और हैं। देखें फिर भगवान सुन लेगा तो सब-कुछ हो जाएगा। पतलून पहन लेने पर फिर गाँजा या भग पीना कुछ ठीक बात नही जान पड़ती। मैंने तो यही सुना है, शराब पी लेने पर ही पतलून की पूरी शोभा मनुष्य पर खुलती है।"

पहला मनुष्य बोला—"भाई, तो बिना नशा किए आर्ट नही पैदा हो सकता ?"

दूसरे ने जवाब दिया—"कुछ लोग आर्ट को योग से मिलाते हैं शायद वह मेल बिना नशे के हो सकता हो। अपने तो इसी आर्ट को देखते

है और हमने जिसे भी मशहूर होते हुए देखा, तब इसी नशे की बदौलत।"

"सस्ता नशा तो बडी खराब चीज है।" पहला अपने हाथो को कँपाकर बोला—"उससे यो हाथ काँपने लगते है। टाँगे काँपने लगती हैं। मेरे भी ऐसे ही होता था जब मै पीता था।"

भन्नन जी ने ताज्जुब से पूछा—"तो क्या अब आपने छोड दी ?"

"हाँ छोड दी।" बडे निश्चय से उसने जवाब दिया।

"अभी तो आप आर्ट के लिए उसे जरूरी बताते थे।" भन्नन जी ने पूछा।

"मैं कोई आर्टिस्ट थोडे हूँ।"

"क्या काम करते है आप ?"

"मैं मेक-अप-मैन हूँ।"

"दयाल भाई कहाँ गए हैं ?"—भन्नन जी ने पूछा।

"मीटिंग में।"

"आवेंगे कब ?"

"आ जाना चाहिए था। आप क्या काम करते है ?"—पहले ने पूछा।

"मैं स्टोरी-रायटर हूँ।"

"दयाल भाई के लिए स्टोरी लिख रहे हैं क्या ?"

"नही, आज ही उनसे मिलने आया हूँ।"

"कैसे आदमी है ?"

"बड़े बढिया।"

पहले ने अपनी जेब से एक बीड़ी का बडल निकाला। उसने एक बीडी अपने साथी को दी एक भन्नन जी की तरफ बढाई। भन्नन जी बोले—"धन्यवाद मैं बीडी नही पीता।"

पहले ने दूसरे से पूछा—"दियासलाई है ?"

दूसरे ने जेब टटोलकर जवाब दिया—"नही।"

उसने भन्नन जी की तरफ इशारा किया। भन्नन जी ने चट से

अपनी पतलून की जेब से दियासलाई की डिबिया निकालकर उसे दे दी। जब उसने डिबिया खोली तो उन्हे होश हुआ और वे मन-ही-मन बहुत कुढे। उनका हाथ उधर बढने लगा दियासलाई की डिबिया छीन लेने के लिए। लेकिन वह उसे खोल चुका था।

भन्नन जी ने शरमाकर अपना हाथ खीच लिया और पतलून की जेब से सिगरेट् निकाल ली। उसे मुँह मे देकर वे दियासलाई की तरफ बढे।

मेक-अप-मैन ने दियासलाई की डिबिया में से भन्नन जी की आधी सिगरेट् निकालकर उन्हे देते हुए कहा—"लीजिए मिस्टर, आपकी एक आधी सिगरेट् इस दियासलाई की डिबिया में पडी है। पहले उसे खतम कर लीजिये, फिर साबुत मे मुँह मारिए।"

भन्नन जी बहुत झेंपे, लाचार होकर उन्होने वह आधी सिगरेट् लेकर जला ली और अपनी दियासलाई की डिबिया जेब मे रखते हुए मन-ही-मन कसम खाई—"अब जो चीज जहाँ की होगी, उसे वही रखा करूँगा।"

मेक-अप-मैन कहने लगा—"अजी स्टोरी-रायटर साहब, क्यो छोडी जाए कोई चीज ? हम तो बीडी को भी बुझाकर रख लेते है। जब इधर उगली और उधर होठ जलने लगते हैं तभी छोडते है।"

भन्नन जी सोचने लगे—"यह मूर्ख तभी उन्नति नही कर सका है। थाली को चाट जाना, आम की गुठली के बाल भी दाँतों से नोच-नोचकर उडा जाना और केले की खाल भी हडप कर जाना यह कोई बुद्धिमानी की बात नही है। भानुदेव शर्मा ! इस दुनिया में बहका देनेवाले बहुत हैं। तू अब से सिगरेट् बचाकर नही रखेगा। बकने दे इन्हे, ये छोटे दरजे के मनुष्य जान पडते है।"

मेक-अप-मैन बोला—"भाई, इस इडस्ट्री के भीतर सबको तरक्की दी गई। सिर्फ मेक-अप-मैन और स्टोरी-रायटर ये दोनों जैसे थे, वैसे ही रह गए। कोई इनका पुरसां हाल नही। ये दोनो ही सिनेमा के लिए

जरूरी चीजे है।"

भन्नन जी बोले—"मैं छापेखाने का स्टोरी-रायटर हूँ, फिल्म में हाल ही मे आया हूँ।"

वह मेक-अप-मैन बोला—"लेकिन आपकी दियासलाई की डिबिया खोलने से मुझ पर आपका सारा मकान ही खुल पड़ा! आप छापेखाने के स्टोरी-रायटर हो चाहे किसी खाने के, आपकी माली हालत ठीक नही जान पडती।"

"क्यो ?"—जरा बिगडकर भानुदेव शर्मा ने कहा, नई पतलून की जेब मे हाथ डालकर।

"क्योंकि आप क्वारी दियासलाई की डिबिया में जले मुँह की सिगरेट रखते है। कैसी स्टोरी-रायटरी है आपकी ? आपकी किताबे बिकती होती तो क्या ऐसा नकशा होता आपकी जेब मे ?"

"अजी किताबें तो बिकती ही है। बुकमेलर कहते है एजेंट खा जाते है और हम कहते हैं बुकसेलर हडप जाता है। लेकिन मेक-अप-मैन साहब, हम साहित्यिक हैं। साहित्य एक साधना और तपस्या की वस्तु है।"

"आपके बाल-बच्चे नही है क्या ?"

"क्यो नही हैं ?"

"फिर आप उनको क्या खिलाते है ?"

"भगवान् सबको दे ही देते है। पैसा नही है तो क्या हुआ मेरा नाम तो है चारो तरफ।"

"अजी नाम को क्या घोलकर पिया जाता है ? भूख लगने पर पेट को तो अनाज ही चाहिए। लेकिन जब आपकी किताबें बिकती ही थी तो आपने गलती की जो इतनी भीड से भरी बंबई में आने की तकलीफ की ? अजी यहाँ तो दूध-पानी, बस-रेल, सिनेमा-थियेटर, राशन-चक्की ······ सभी जगह क्यू-ही-क्यू है।"

"सिनेमा के लिए मैं एक नया सदेश लेकर आया हूँ। मेरा लक्ष्य जनता की भलाई है, अपना रुपया-पैसा पैदा करना नही। जनता की

भलाई का सबसे बढिया और आकर्षक माध्यम सिनेमा ही है।"

"आप तो बड़े सत मालूम देते है।"

"अजी बस ऐसा ही है। दयाल भाई ने बडी देर लगा दी, अभी तक नही आए ? लोग तो इनकी बडी तारीफ करते है।"

"हॉं भाई, जिसका काम चल गया, वह तारीफ ही करनेवाला ठहरा। सभी का काम कोई कहाँ तक कर सकता है ? बिचारो का हाथ जरा आजकल तग हो गया है। देनदारी बहुत हो गई। जायदाद तो बहुत है, चौक-का-चौक है इनका बबई में। एक साथ का कोई खरीदार इन्हे नही मिलता, टुकडे-टुकडे कर बेचने को ये राजी नही हैं।"

"इनका सिनेमा और स्टूडियो भी तो है ?"—भन्नन जी ने पूछा।

"जब एक चीज चलती है तो सभी चीजो पर आकर्षण रहता है, एक चीज रुक गई तो फिर सभी-कुछ दब जाता है।"

इतने ही मै दयाल भाई आ पहुँचे। भारी-भरकम शरीर के थे। मुख और वेश में साधुता और सरलता थी। बडे आस्तिक। रोज सुबह उठ नहा-धोकर देवताओ की पूजा करते थे षोडशोपचार से। कुछ भी हो जाडा-गरमी-बरसात—उनका कोई नियम नही टूटता था। कितना ही जरूरी काम हो, सबकी उपेक्षा कर अपने देवताओ की पूजा में किसी मिनट की देर नही करते थे।

समय की पाबदी सबसे बडा गुण था उनका। ठीक समय पर खाते-पीते, सोते और उठते, काम पर जाते और काम से लौटते थे। राह मे जितने देवी-देवताओ के मदिर मिलते उनको हाथ जोडते। जो भी जान-पहचान के दिखाई देते उनसे दुआ-सलाम करते। गरीब हुआ तो उसके साथ मोटर रोककर भी दो मिनट बात कर लेते। अपनी मोटर खुद चलाते थे। घर पर कभी नौकर न हुआ तो अपने प्याले भी धो लेते, कमरे में बुहारी दे लेते यही नही जूते में पॉलिश भी करने में हिचकते न थे।

चाय जरूर पीते थे, लेकिन सिगरेट् और पान का कोई व्यसन नहीं

मे बडी सुन्दर-सुन्दर कला की प्रतिमाएँ थी, सब. साफ कर दी। कैमरे साउड इक्विपमेंट में की बहुत-सी चीजे गायब कर दी गईं। सोलार लाइट फल्ड प्लग, बल्ब, बिजली के तार—कहाँ तक कहा जाए, जो जिसके हाथ लगा ले चला। दरी, गलीचे, कालीन—फरनीचर किसी का निशान बाकी न रखा।

ऐसा वह लूट-खसोट से विश्री कर दिया गया स्टूडियो—एक विधवा नारी की तरह शृ गार-विहीन दयाल भाई ने खरीद लिया। कहते हैं, बिलकुल मिट्टी के मोल मे! पुराने मालिक के समय में फाटक से ही एक अद्भुत प्रकाश स्टूडियो मे चमकता था। प्रत्येक ऋतु में फुलवाडियाँ महँकती और दमकती रहती थी। एक-से-एक बढिया फूल, सारे भारत-भर के फलो के वृक्षो से शोभित कुँज सब स्टूडियो के भीतर! बाहरी दृश्यो के लिए कही जाना ही नही पडता था। वही सरोवर था—सरोवर ही नही छोटी-मोटी सरिता भी बना ली जाती थी।

कुछ लोग कहते है पुराने मालिक के जाते ही स्टूडियो की सारी आभा और सारी लक्ष्मी उड गई, लेकिन कुछ लोगो का ख्याल है उसका प्रताप दिन-दिन छीजने लग गया था, इसी से वह मालिक उसके पूरे अस्त होने से पहले ही नौ-दो ग्यारह हो गया।

एक अतिभौतिक कारण बताया जाता है। स्टूडियो की लेबोरेटरी के पीछे एक कुवाँ है, जो अब पाट दिया गया है। पहले वह खुला हुआ था। स्टूडियो के एक माली की नवयुवती पत्नी की न जाने एक रात को पति से क्या तकरार हुई कि उसने कुएँ मे कूदकर आत्महत्या कर ली। दूसरे दिन सुबह उसकी लाश निकाली गई।

इस घटना को बीते एक सप्ताह भी न होने पाया था कि एक दिन स्टूडियो के मालिक को, जब वह अकेले कुएँ के पास से अपने बँगले को जा रहे थे—वह मालिन बहुत साफ दिखाई दे गई।

घर जाकर उन्होने इस घटना का उल्लेख किसी से नही किया। वह समझे शायद कई दिन के जागे होने के कारण आँखो मे कोई वहम समा

किसी से कहकर बात को बढा देना ठीक नही समझा ।

दूसरे दिन दिन-दोपहरी में जब वह ऑफिस मे बैठे थे, वही मालिन चिक उठाकर हँसती हुई आई और चुपचाप एक कुर्सी में बैठ गई। अब तो शक करने की कोई जगह नही रह गई थी। मालिक ने एक चीत्कार छोडी और बेहोश होकर कुर्सी से नीचे गिर पडे नौकर-चाकरो ने उन्हे सँभाला । उसी वक्त टेलीफोन से डॉक्टर बुलाया गया, तब कही उन्हे कुछ होश हुआ । डॉक्टर ने एक हलका-सा दिल का दौरा बताया ।

इसी बाद मालिक ने वहाँ से जाने का निश्चय ही नही एलान कर दिया । उनकी उस मानसिक कमजोरी का स्वार्थी लोगो ने लाभ उठाया और बिकने से पहले स्टूडियो को तहस-नहस कर दिया । जो कुछ पैसा उन्हे मिला, उसी को लेकर वह चलते बने ।

दयाल भाई को यह घटना एक दलाल ने बता दी थी, इसी से उन्होने नाममात्र के पैसे लगाए थे और लोग तो इतना पैसा भी देने को तैयार न थे ।

स्टूडियो के नए सेठ ने भी कुछ देखा बताते है, तभी तो उन्होने आते-ही-आते वह कुवाँ पाट दिया—सात दिन तक वहाँ पर हवन-यज्ञ किया, कई ब्राह्मणो को भोजन खिलाया । अब उस कुएँ की जगह पर महावीर जी की एक मूर्ति की स्थापना हो गई है । दशमलव बिन्दु एक कैंडल पॉवर का एक छोट-सा लाल बल्ब वहाँ पर दिन-रात जलता रहता है ।

दयाल भाई स्टूडियो में आकर मोटर से उतरने पर सबसे पहले वही जाते है । बडे आदर से बाहर ही जूता उतार देते है । वही पर एक पानी का नल लगवाया है उन्होने । वहाँ हाथ-पैर धोकर वह महावीर जी के चरणो में माथा नवाते हैं, फिर उनकी एक परिक्रमा कर अपने और धन्धे मे लगते हैं ।

दयाल भाई के आते ही वह तीनो बडे आदरपूर्वक बेंच पर से उठ

गए। "क्यो कब से बैठे हो ?"—बडे मीठे स्वर मे उन्होने पूछा।

'कुछ देर हो गई है।"—मेक-अप-मैन बोला।

"क्या कोई जरूरी काम है ?"

"सरकार मेरी बहन की शादी है, अगले हफ्ते। कपडे और जेवर बनवाने हैं। दो महीने से तनखा नही मिली है। मैं तो एक महीने की और पेशगी चाहता हूँ।"

"भाई मैं भी तो देने की नीयत रखता हूँ। क्या करूँ सब को दे नही पाता। तुम यहाँ क्यो आए फिर ? जाओ थियेटर मे जाओ। आज के शो का जो कुछ होगा सब तुम्हे दे देने के लिए मैं एकाऊटेंट को अभी फोन करता हूँ। अब तुम्हारी तकदीर—एक महीने की तनखा मिल जाए या दो महीने की।"

मेक-अप-मैन के कोई आशा नही बँधी—"सरकार वह तो पुराना खेल है।"

दयाल भाई बोले—"तुम्हे पता ही नही है। आज नया खेल लगा दिया है और मैंने उसकी अच्छी पब्लिसिटी की है। सब बडे-बडे अख-बारो मे भी और वैसे भी शहर में मोटरों और बाजो के द्वारा भी जो-कुछ हो सकता है, कर चुका हूँ। तुम जाकर देखो तो सही।"

मेक-अप-मैन जानता था, दयाल भाई वादा कर देने में बडे सरल हैं, लेकिन कुछ उनकी कमजोरी, कुछ उनके मातहतो की कुटिलता और सबसे बडी बात पैसे का अभाव—उनके वादो पर फूल नही लगने देता था, फल की कौन कहे ? वह बोला—"सरकार, फिर आप कही भूल जावेगे। मेरे सामने ही फोन कर दीजिए।"

दयाल भाई ने भन्नन जी की तरफ इशारा कर पूछा—"ये साहब कौन है ?"

"लाई, लाई, पतलून जरूर रग लाई! एकदम आकर्षित कर लिया इस बार मेरे व्यक्तित्व ने। मुझे पूछना ही नही पडा।" भन्नन जी मन-ही-मन सोचने लगे।

मेक-अप-मैन ने जवाब दिया—"ये एक स्टोरी-रायटर हैं, बिचारे अभी आए हैं उत्तर भारत से।"

"जी मैंने बहुत-सी किताबे लिखी है, साहित्य मे मेरा नाम बहुत प्रसिद्ध है उधर।"

दयाल भाई ने फिर तीसरे आदमी की ओर मुँह किया—"तुम भी वही जाओ। तुम्हारे लिए तो मैंने कल ही कह दिया था। कुछ नही मिला तुम्हे ?"

वह बोला—"नही सरकार, मेरी घरवाली के पेट मे फोडा हो गया है, उसकी बडी नाजुक हालत है।"

"अस्पताल मे भरती कराओ न ?"

"हजूर वहाँ जगह खाली नही है। कोई जान-पहचान का भी नही। प्राइवेट इन्तजाम कराने से होगा। उसके लिए पैसा चाहिए। मेरे लिए भी फोन कर दीजिए।"

वह असिस्टेंट कैमरामैन था। दयाल भाई के स्टूडियो मे ट्रॉली खीचता और फर्श पर चौक के निशान बनाकर वहाँ तक उसकी राह बनाता। मौका मिल जाने पर कमरे के लैस में भी कभी दाहिनी और कभी बाईं आँख जमा देता। कैमरामैन ज्यादा हौसला बढने नही देता था। दस-दस, पाँच-पाँच कर तनखा मिलती थी। क्या करता बिचारा ? एक दूसरे स्टूडियो में मौका मिल गया वहाँ घुस पडा। दो महीने की तनखा उसकी बाकी है, उसी को माँगने आया था।

दयाल भाई के ऑफिस बॉय ने आकर ऑफिस का ताला खोला उनकी मेज के काँच पर जमी धूल अपने झाडने से पौछ दी थी। दयाल भाई बड़ा कष्ट मुख मे दिखाकर ऑफिस के भीतर घुसे। मेक-अप-मैन और ट्रॉलीमैन हाथ बाँधे खडे रहे। दयाल भाई के कुर्सी में बैठते ही भन्नन जी भी एक कुर्सी पर जा डटे। बद्री के मंत्र की स्मृति आ गई थी उनके—"जहाँ पूछोगे वही अटकोगे। अभी मै इनका नौकर थोडे हूँ, जब तनखा माँगने आऊंगा तो बात दूसरी है। अभी तो मैं इनके मित्र

की हैसियत से आया हूँ ।"

दयाल भाई ने टेलीफोन उठाकर उन दोनो को रुपया दे देने के लिए कह दिया । लेकिन ट्रॉलीमैन जमा ही रह गया । मेक-अप-मैन बोला—"चलो ।"

ट्रॉलीमैन बडी नम्रता से बोला—"हजूर मैं बडी कठिनाई मे पड़ा हूँ। एक पुरजे मे मैनेजर साहब के लिए भी लिख दीजिए, अक्सर अकाऊटेट उन पर बात रख देता है ।"

मेक-अप-मैन बोला—"चलो जी, जब मालिक ने खुद उनसे कह दिया है तो फिर बीच में मैनेजर कौन चीज है ?"

दोनो चले गए । दयाल भाई ने वह उस घूम जानेवाली कुरसी को जरा-सा चक्कर देकर भन्नन जी की तरफ मुँह किया—"हाँ आप स्टोरी लिखते है ?"

"जी हाँ ।"

"कही और भी चास मिला है आपको ?"

"अभी तो आया हूँ मैं ।"

"ठहरे कहाँ है ?"

"बेनू प्रोडक्शन के ऑफिस मे ।"

"ऑफिस मे ठहरने की जगह ? बेनू बाबू से जान-पहचान है क्या ?" कुछ अचरज में पड़कर दयाल भाई ने पूछा—"उनसे नही की कोई बात ?"

"अभी तो दो-तीन स्टोरी ले रखी है उन्होंने, जब उनका शूटिंग शुरू हो जाए तो फिर करें वे बात । अभी तो उन्हे सबसे बडी फिक्र शूटिंग की हो रही है ।"

"हाँ, हमारे स्टूडियो के लिए बातें करने आए थे । मैंने स्टूडियो दिखा दिया था उन्हे । किराया कम-से-कम बता दिया था । लेकिन फिर कोई जवाब नही मिला ।"

"आप स्टूडियो किराए में ही लगाते है ? अपना प्रोडक्शन आरम्भ

करने का विचार क्यो नही होता ?"

"आपको कुछ मालूम नही है। मै तो तीन पिक्चर बना चुका हूँ। लेकिन अफसोस है, तीनो में से एक भी नही चली।"

"आपका तो अपना थियेटर है।"

"अपना थियेटर होने से क्या होता है ? पिक्चरो में कोई नुक्स था, वे रह गईं। मै तो पब्लिक को सबसे बडा जज समझता हूँ। इस बात को हरगिज मानने को तैयार नही हूँ कि प्रोपेगैडा पर फिल्म की पॉप्यूलेरिटी ठहरी हुई है।"

"स्टोरी किस की थी ?"

"बम्बई में क्या स्टोरी-रायटरो की कमी है ?"

"किस विषय की थी ?"

"सोशल। एक की स्टोरी कमजोर थी, दूसरे का डायरेक्टर किसी काम का न था और तीसरे की साउड खराब हो गई। क्या किया जाए तकदीर हम लोगो की।"

"नही सेठ जी, तकदीर कोई चीज नही है, अगर हम लोग सच्चे परिश्रम से काम करे तो विधाता के अक्षरो पर दूसरे अक्षर लिख सकते है।"

दयाल भाई ने अपना चश्मा आँखो से उतारकर भन्नन जी को देखा—"अच्छा ? हाँ, आपका क्या नाम है ?"

"मेरा नाम है पडित भानुदेव शर्मा।"

"आप पडित हैं ?"

"जी हाँ—हिन्दी में दो दर्जन किताबें लिखी है। आप हिन्दी जानते है ?" उन्होने अपनी दोनो किताबें उनके सामने रख दीं।"

"क्यो नही जानता ? हिन्दी और गुजराती में कोई फरक थोडे है। मैं हिन्दी पढ लेता हूँ, लेकिन ज्यादे पढने की प्रैक्टिस नही है।"—सेठ जी ने किताबो को देखा।

बड़ी प्रसन्नता खिल उठी भन्नन जी के मुख में—"सेठ जी, आपके श्रीमुख से निकले इस वाक्य से कितना सुख-संतोष मिला मुझे। लोगो

ने मुझसे यहाँ कह दिया था कि सिनेमा की सारी इडस्ट्री में कोई भी हिन्दी जाननेवाला नही है। मुझे इस बात को सुनकर घोर निराशा हो गई थी। हिन्दी—हमारी राष्ट्रभाषा, भारत के इतने बडे शहर मे उसकी ऐसी उपेक्षा हो, राष्ट्र की इतनी बडी इडस्ट्री के भीतर उसका ऐसा अपमान! सेठ जी आपने बडा आश्वासन दे दिया मुझे।"

"आपने कैसी पुस्तके लिखी है।"

"कहानियाँ और उपन्यास।"

"कैसे उपन्यास लिखे है ? ये दोनो उपन्यास ही है ?"

"जी हाँ, सामाजिक ही लिखे है। मुझे क्या मालूम था ? आप हिन्दी के इतने प्रेमी है। मै पूरा गट्ठा उठा लाता आपकी सेवा मे। अब ले आऊँगा। अभी ये दोनो किताबे आप रख लीजिए।"

"अजी मुझे दिन भर के काम से ही फुरसत नही रहती। थियेटर और स्टूडियो के कागजात देखना ही मेरे लिए बडा भारी हो जाता है।"

"सुबह-शाम घर पर देखिएगा।"

"अजी सुबह-शाम घर पर भगवान का भजन करता हूँ। जिस प्रभु ने जन्म दिया है। एक-दो घडी उसकी याद मे बिताना अपना सबसे खास फर्ज है।"

भन्नन जी मन-ही-मन समझने लगे—"है, मैं समझता था यहाँ सिनेमावाले भगवान की पूजा को बेगार समझते है।"

सेठ जी कुछ सोचकर बोले—"पडित जी कोई पौराणिक कहानी नही लिखी है आपने ? धार्मिक कहानी अगर अच्छी बन गई तो वह शहर ही नही गाँवो से भी स्त्री-पुरुषो को खीच लेती है। युवक-युवतियाँ ही नही, वह तो बूढो को भी लाठी के सहारे सिनेमा हॉलों तक खीच लाती है। हमारा यह देश धर्मप्राण है। कितना ही साइंस फैल जाए, इसकी धार्मिकता जा नही सकती।"

भन्नन जी को वह दर्जी याद आया। वे बोले—"लेकिन सेठ जी, वैसे तो मैं आपके अनुभव के सामने कुछ बोल नही सकता। पौराणिक

चित्र मे काफी खर्च लग जाता होगा। फिर कोई सामाजिक चित्र ही बनाइए न ?"

"ना भाई !" दोनो कान पकडकर सेठ जी बोले—"नही भाई, सोशल बनाने की मैंने अब कसम खा ली है। मेरे स्टूडियो में पौराणिक चित्रो के बैकग्राउड के लिए अब भी बहुत सामान है। पौराणिक चित्रो के लिए कास्ट भी मुझे सस्ते दामो मे मिल जाएगा।"

"मैं एक नई सामाजिक कहानी लिख रहा हूँ।"

"कैसी ?"

"एक कर्मवीर दर्जी की।"

"हूँ हूँ, रामायण-महाभारत में से निकालो न कोई कथानक।" अगर तुम्हारा मन लगे तो कहो मुझसे। तुम घर जाकर इस बात को सोच लो। अपने जान-पहचानवालो की राय ले लो। मैं किसी को अँधेरे में रखना नही चाहता, इसीलिए तो खुद तकलीफ में रहता हूँ।"

भन्नन जी कुछ सोचकर बोले—"बात पहले ही साफ कर लेनी ठीक होती है। पारिश्रमिक का क्या हिसाब होगा ?"

"अजी हम आपको माहवारी वेतन मे भी रख लेगे। पूरी कहानी का कट्राक्ट करेंगे तो वह भी हो जाएगा।"

"कट्राक्ट पर कुछ पेशगी भी मिलता रहेगा।"

"क्यो नही ?"

"वेतन कितना मिलेगा माहवारी ? कट्राक्ट पर क्या देंगे आप ?"

"अजी यह तो आप पहले स्टोरी का नमूना दिखावेंगे तब होगा। मुझे अपने डायरेक्टर, कैमरामैन और घरवालो की भी राय लेनी होगी। अभी इतनी जल्दी कुछ नही कहा जा सकता।"

भन्नन जी ने मन में समझा था दयाल भाई बडे दयाल और सज्जन है। अभी कुछ रुपया दे देंगे, लेकिन रुपए के बारे में वैसा सुनकर उन्हे निराशा हो गई। फिर उन्हे वो नौकर-चाकर याद आए जो पैसे के लिए झीख रहे थे।

सेठ जी बोले—"पौराणिक चित्र भी तो सोशल ही है, वह हमारी पुरानी सोसाइटी की तसवीर है। कही स्वर्गलोक, कही पाताललोक, कही देवता प्रकटे, कही अप्सराएँ प्रकटी, कही राक्षस आए, कही पहाड फटे और कही पेडो से आदमी निकले। कोई एक साँस मे समुद्र पी गया, किसी ने एक फूँक मारकर शहर का शहर जला दिया। ये बढिया बातें हैं। पब्लिक को खीच लेती हैं।"

"लेकिन सेठ जी लिखने को तो मै लिख दूँगा ऐसी कहानी। मेरा क्या जाता है? कलम की नोक चाहे जिधर घुमा दी। आपके तो उसे कर दिखाने में लाखो रुपए खर्च हो जावेगे।"

"तुम लिखो तो सही। हमारे कुछ खर्च नही होता। हम सब ट्रिक फोटोग्राफी से कर लेंगे। हमारा कैमरामैन बडा होशियार आदमी है।"

"अच्छी बात है।" लेकिन भन्नन जी के मन में वह दर्जी गड गया था। बीच ही मे ये पुराण आ गए। वे उठकर जाने लगे।

सेठ जी बोले—"खूब बढिया प्लाट सोचकर लाओ। जो अभी तक कोई नही बना सका है ऐसा ढूँढ निकालो। जो कोई नही लिख सका है, ऐसा लिखकर लाओ। कितने दिन में लिख लाओगे—सिर्फ कहानी, आउट लाइन।"

"लिख लाऊँगा, जल्दी ही लिख लाऊँगा।"

"लिख लेने पर न्यू स्टूडियो मे जाकर हमारे डायरेक्टर से मिलना। मैं भी उससे कह दूँगा, तुम भी कह देना, सेठ जी के कहने पर मैंने कहानी लिखी है। वे तुम्हे टाइम देंगे कहानी सुनने का। मुमकिन है वे मुझे फोन करें और मैं भी मौका लगेगा तो वहाँ हाजिर रहूँगा।"

भन्नन जी सेठ जी के पास से विदा हो गए। मार्ग में सोचने लगे—"पतलून पहनकर एक सेठ जी से भेंट तो हो गई। नौकरी या कंट्राक्ट का सिलसिला भी लग जाने की आशा है, लेकिन यह जो पौराणिकता से भिड़ना पड गया यही एक बेढब बात जान पडती है। पौराणिक चित्र लिखना और पतलून पहनकर? दो विरोधी दिशाएँ हैं? क्या करूँ?"

डेरे पर पहुँचे तो ताला बन्द था, विवश होकर घूमने निकल गए। दर्जी के यहाँ जाने का विचार किया। फिर सोचने लगे—"वह बड़ा शक्की आदमी है, अभी पतलून उसने बनाई भी न होगी।"

आधे रास्ते से लौटने का विचार करने लगे थे कि एक थैला हाथ में लिए उन्हे वह दर्जिन दिखाई दी। झट से उसके पास जा पहुँचे, दोनो हाथ जोड दिए और बडी भक्तिपूर्वक बोले—"नमस्ते।"

उसने भी हँसकर हाथ जोडे—"नमस्ते।"

जब वह कुछ सोचती-सी जान पडी तो भन्नन जी ने कहा—"आपने नही पहचाना मुझे?"

"देखा तो है जरूर आपको कही।"

"अजी मैंने आप ही के यहाँ तो यह पतलून और कमीज सिलाई है, अभी एक और वहाँ बाकी है। आपने भी इसमें परिश्रम किया और ठीक समय पर मुझे मिल गईं।"

"ठीक! ठीक! इसी पतलून की वजह से मैं आपको नही पहचान सकी, उस दिन आप धोती कुरते मे थे और इसी पतलून की वजह से मैं आपको पहचान गई, रात को मैने इसके जोड लगाए थे।"

"सौदा खरीदने जा रही है? कितनी दूर का विचार है?"

"हाँ कुछ बटन-धागा और कुछ चाय-चीनी लेने जा रही हूँ।"

"आप अच्छी मिल गईं। मैं सिनेमा का स्टोरी-रायटर हूँ। समझती है न आप?"

"क्यो नही समझती। मैं आठ दरजे पास हूँ, तकदीर खराब थी!" —उसने एक ठंडी सांस ली।

"है! कैसी तकदीर खराब थी।"

"बस कुछ न पूछो स्टोरी-रायटर साहब।" वह मास्टरनी भूमि पर इधर-उधर देखने लगी।

भन्नन जी बोले—"चलो कही चाय पी ली जाए। दो-चार बातें भी हो जावेंगी। कुछ जरूरी पूछना है।"

कुछ हिचकिचाकर उसने कहा—'चलिए।"

भन्नन जी धीरे-धीरे बोले—"वे तुम्हारी तीसरी शादी के पति है या चौथी के ?"

मास्टरनी ने बडी तेज आँखे कर भन्नन जी को तरेरा—"तुम क्या कह रहे हो यह ?"

भन्नन जी को अपनी भूल समझ पडी—"मुझे माफ करो, मै भूल गया।"

"तुम ऐसे ही स्टोरी-रायटर हो क्या ?"

"मै बार-बार आप से क्षमा चाहता हूँ। चलिए।"

"नही, मैं नही चलूंगी तुम्हारे साथ।"

"मास्टरनी जी, मैं घर-गिरस्ती आदमी हूँ, पढा-लिखा हूँ। भूल से मुँह से कुछ का कुछ निकल गया बार-बार माफी माँग रहा हूँ आपसे।" बडी दीनता से भन्नन जी बोले—"आपको माफ कर देना चाहिए। फिर मै जो आपकी स्टोरी लिखनेवाला हूँ। उससे आप ही का एडवर्टाइजमेंट होनेवाला है। आप लोग कुछ ही दिन मे फिर सारी बम्बई मे प्रसिद्ध हो जायेगे।"

मास्टरनी जी खुश हो गई—"मैं उनकी तीसरी शादी की स्त्री हूँ।" वह भन्नन जी के साथ चलने लगी।

दोनो पास ही के एक विश्रांति-गृह के चाय की मेज पर बैठ गए। भन्नन जी ने दो प्याले चाय के मँगाते हुए उनसे कहा—"कुछ खाना भी मँगा दूं ?"

"नही। क्या पूछना है आपको, जल्दी कीजिए।"

"तुम्हारे मास्टर जी की दूकान में आग कैसे लगी ?"

"मुझे कुछ नही मालूम। मेरी शादी तो अब हुई है।"

"फिर भी कुछ सुना तो होगा।"

"मास्टर जी कहते हैं, उनके दुश्मनो ने लगा दी।"

"कौन थे उनके दुश्मन ?"

"उन्ही के पेशे के। जो उनकी बढती को नही देख सकते थे। लेकिन—"

होटल का बॉय दो प्याले चाय के रख गया। मास्टरनी प्याला उठाकर पीने लगी। उसने चाय की एक-दो घूंट पीकर जब प्याला मेज पर रख दिया और चुप हो रही तो भन्नन जी बोले—"क्यो तुम कुछ और कहना चाहती थी।"

"जाने दीजिए उस बात को।"

"नही. बाते तो तुम्हे सभी बतानी पडेगी। कोई सत्य छिपा देने से काम न चलेगा।"

"उसके सच होने में कुछ शक है। और वह सच हो भी सकती है।"

"कहो भी तो। मै भी तो तोल कर ही बात को आगे बढाऊँगा। और क्या सबब बताया जाता है आग के लगने का ?"

"कुछ लोग ऐसा कहते है कि इनकी पहली औरत ने मिट्टी का तेल बदन मे छिडक कर आग लगा ली और वही से वह आग तमाम दूकान में फैल गई।"

"अपना ये कहाँ थे ?"

'किसी काम से पूना चले गए थे।"

"औरत की आत्महत्या का क्या कारण बताया जाता है ?"

"आपसी झगडा।"

"मास्टर किसी नशे का तो सेवन नही करते ?"

मास्टरनी ने सकुचाकर अपनी साडी का छोर अपने मुख पर रख लिया।

"उनका स्वभाव कैसा है ?"

"क्या बताऊँ ?"

"गुस्सेबाज है बहुत ?"

"हाँ कभी-कभी जब पैसे की कमी हो जाती है, तब बात-बात में बिगड उठते है।"

दोनों ने चाय के प्याले खाली कर मेज पर रख दिए। भन्नन जी ने पूछा—"दूसरी औरत की मृत्यु कैसे हुई ?"

अचानक मास्टरनी बड़ी घबराहट के साथ उठी। उसने बाहर सडक पर किसी को देखा, भन्नन जी की उधर पीठ थी। पीठ फिराकर उन्होंने भी देखा। मास्टर बहुत गुस्से में विश्रातिगृह के भीतर चला आया—"तू क्या कर रही है यहाँ ? तुझे शरम नही आती ? बटन अभी तक नही लाई ? शाम को कपडे देने है।" अचानक उसकी नजर भन्नन जी पर पड़ी।

"जैराम जी की मास्टर साहब।" भन्नन जी ने कहा।

"अच्छा तुम हो ? तुम्हे शरम नही आती ? दूसरे की औरत को फुसलाकर यहाँ ले आए तुम ?"—बडे क्रोध से उसने भन्नन जी की तरफ देखा और बाहर जाती हुई मास्टरानी का अनुसरण किया।

भन्नन जी अपनी सफ़ाई देते हुए बोले—"मास्टर जी!"

"बहुत बदमाश आदमी जान पडते हो तुम।"

भन्नन जी ने मास्टर की पीछे से कोहनी पकडकर कहा—"सुनिए तो सही।"

मास्टर ने कोहनी झटक कर हवाली—"कभी पक्की मरम्मत हो जाएगी तुम्हारी। मैं कुछ नही सुनता। मैं ही तुम्हारी मरम्मत कर देता लेकिन—"

"देखो मास्टर मैं तो तुम्हारी कहानी सोच रहा हूँ और तुम मुझे अपना दुश्मन समझते हो।"

"क्या कहानी सोच रहे हो तुम ? मेरी औरत को बहका रहे हो ?"

"भगवान साक्षी है। पूछिए न उनसे।"

"उनसे क्या पूछते हो, मुझसे पूछो न।"

"आपसे भी पूछूंगा।"

"तुम कहानी खत्म कहाँ करोगे ? पहले यह बताओ।"

"वही फिर तुम्हारी कोठी, तुम्हारा पहले ही का-सा कारोबार हो

जाएगा।"

फिर एकाएक न-जाने मास्टर को क्या सनक सवार हुई कि फिर बिगड गया—"नही, तुम बहुत बदमाश जान पडते हो। कल तक धोती पहनते थे, ग्राज एकदम तुमने पतलून पहन ली। नही, मैं तुम्हारी कोई बात नही सुनूंगा। खबरदार मेरी दूकान पर भी मत ग्राना। ग्रपने दोस्त को भेज देना, मै उसी को तुम्हारी पतलून दे दूंगा।"

अट्ठारह

कुछ दिन और बीत गए। भन्नन जी बड़ी अजीब दुबिधा मे पडे रह गए। दर्जी के प्लॉट मे उधर गाडी रुक गई, अछूतोद्धार का कथानक इधर अटक गया। पतलून पहनकर जो एक नई दुनिया मे प्रवेश खुल जाएगा सोचा था, ऐसा भी नही हो सका। उसे पहनकर दयाल भाई ने तो उन्हे फिर पौराणिकता की ओर हॉक दिया।

शाम को कौशल ने आकर कहा—"क्यों पडित जी, कौनसी स्टोरी लिख रहे हैं ?"

"क्या बताऊँ भाई! दर्जी की स्टोरी मे मन लग रहा था। करीम चाचा कहते हैं, दयाल भाई बडे अच्छे आदमी है—उनका काम जरूर करो। वैसे अछूतोद्धार की स्टोरी भी अच्छी थी।"

कौशल कुछ चिंता के साथ बोला—"प्रेम की तदुरुस्ती दिन-दिन खराब हो रही है। डॉक्टर कहते है उसे बडी खराब बीमारी हो गई है।"

घबराकर भन्नन जी ने पूछा—"कैसी खराब ? कोइ मरनेवाली

तो नही !"

"हाँ सरनेवाली ही।"

"तब हमारी मुश्किल है। क्या करे, हमारा उसका तो रात-दिन का ससर्ग है। किसी अस्पताल मे भरती नही करा सकते उसे ?"

"उस बीमारी के खास अस्पताल होते है।"

"फिर क्या होगा ? मकान मालिक को पता चलेगा तो वे तुम पर नाराज होगे।"

"मैंने उसके घर को पत्र लिख दिया है, उसे आकर ले जाएँ।"

"अगर इतनी खराब बीमारी है तो वह काम पर क्यो जाता है ?"

"न जाए तो खाएगा क्या ? दवा और खाने-पीने का खर्च आजकल बहुत बढ गया है उसके।"

भन्नन जी बोले—"आज से उसका बिस्तर उधर दूर दरवाजे के पास कर लेने को कह देंगे।"

"नही पडित जी, आप अछूतोद्धार की कहानी लिख रहे है।"

"तो फिर हम दोनो को वह बीमारी चिपट गई तो ?"

"सबका भगवान् मालिक है। उसका बिस्तर उतनी दूर कर देने से उसके मन मे उसकी बीमारी के लिए बडी डर बन जाएगी और उसके अच्छे होने की आशा टूट जाएगी।"

भन्नन जी ने कुछ सोच-विचार कर कहा—"हाँ भाई, यह तो ठीक है। उसे हटाने के बदले अगर हम हटे तो भी वही बात हो जाएगी। तब क्या करे ? इसी से तो मैंने लाचार होकर—"

प्रेम आ पहुँचा ज्वर से हाँफता हुआ भन्नन जी ने अपना वाक्य अधूरा ही रख दिया। प्रेम विवश होकर भन्नन जी की पलग की ओर बढ गया और उन्होने उसकी पीठ पर हाथ रख उसे सहारा दे दिया। उनके भीतर से प्राणो का स्वार्थ बोला—"भयानक बीमारी है इसके, तुझमे कीटाणु अगर सर गए तो फिर इस परदेस में कौन है तेरा ? इसलिए सावधान हो ! यह मनुष्य की घृणा नही है, उस गदे रोग से दूर रहना है।"

फिर मानवता कहने लगी—"भानुदेव ! तू अपने को लेखक कहता है। साधारण मनुष्यों से तेरा दर्जा बड़ा है। विश्वास की दृढ़ता के सामने कीटाणु कोई चीज नही है। सहारा दे उस परदेसी को किसी समय तुझे भी सहारे की जरूरत पड़ जाएगी।"

भन्नन जी ने उसे अपनी पलंग पर बिठा दिया। प्रेम ने उनकी दरी अपने हाथ से लौटा दी और वह लोहे के डंडे पर ही बैठने लगा। कौशल ने एक कोने मे उसका कंबल बिछा दिया। प्रेम उसपर बैठकर दीवाल के सहारे हो लिया।

"कैसी है तबीयत ?"

"कुछ ठीक नही है पंडित जी।"

"डॉक्टर क्या कहते है ?"

"कुछ नहीं, सब जगह पैसा ही बोलता है।"

"मेरी समझ मे तुम घर चले जाओ।"—भन्नन जी ने कहा, जरूर उनके मन में प्रेम के रोग के विलग होने की कामना इतनी प्रबल न थी जितना उनसे प्रेम के विलग होने की।

"घर कैसे जाऊँ अकेले ? अब तो मेरी कमजोरी बहुत बढने लग गई।"

"किसी को साथ के लिए बुला लो घर से।"

"किसे बुला लूँ ? एक आदमी के आने-जाने का खर्च कहाँ से लाऊँगा ? फिर मेरे पिताजी बूढे है। भाई बहुत छोटे हैं।"

कौशल बोला—"भाई, कारखाने में काम करने तो रोज जाते ही हो। घर पैदल थोड़े जाना पड़ेगा।"

प्रेम कहने लगा—"क्या बताऊँ ? न जाने किसके पैरों से चला जाता हूँ और किसके हाथो से मशीनें चलाता हूँ ? कुछ मालिकों के जरूरी काम की शरम और कुछ अपने खाने-पीने और इलाज के लिए खर्च की जरूरत।"

कौशल बोला—"अभी काम और कितना बाकी है ?"

प्रेम ने उत्तर दिया—"काम तो हो गया।"

"मालिक वापस आ गए ?"

"हाँ।"

भम्नन जी अपनी पलँग से उठकर मेज की कुर्सी पर बैठकर कुछ लिखने लगे।

कौशल ने पूछा—"मालिक क्या कहते हैं ?"

"कुछ नही कहते। भाई, दुनिया मे मरनेवाले का साथ कौन देता है ? कोई नही देता। भगवान् भी नही।"

"हैं ! हैं ! ऐसी खराब बात तुम्हे नहीं निकालनी चाहिए मुँह से।"

"क्या करूँ भाई चाहता तो न था। लेकिन होनी अपने-आप कहलवा लेती है, मेरा क्या कसूर ?"—प्रेम कराहने लगा।

"क्या बुखार चढने लगा ?"

"हाँ शाम को तेज हो जाता है हर रोज ही।" प्रेम ने भम्नन जी से पूछा—"पंडित जी आप किसकी स्टोरी लिख रहे हैं ?"

"भाई रामायण मे से कोई कथानक ढूंढ रहा हूँ।"

"रामायण तो बन गई। एक मेरी कहानी लिख दीजिए मैं बताता हूँ।" प्रेम बुखार की पीडा में बडी कठिनाई से बोला—"एक मजदूर की कहानी, सुबह से शाम तक जो लोहे की सख्ती से खेलता था। उसे कुरेदता, उसपर रेती चलाता, उसपर छेद करता था। उसे लाल कर उसे काटता और पीटता था। छहों दिन ओवरटाइम कर इतवार को भी नागा नहीं करता था।"

कौशल ने पूछा—"प्रेम ओवरटाइम का पैसा नही मिलता था क्या तुम्हे ?"

"उस पैसे पर थू है कौशल, कहाँ गया वह तनखा से ऊपर कमाया गया पैसा ? फिजूलखर्ची और फैशन ही में बह गया वह। और बडा दर्द है।"

"कहाँ ?"—कौशल ने पूछा।

"कहीं पैर हैं।"

"सिर में ? पेट में ?"

"नही सिर-पेट में तो नही। छाती में कही पर, ठीक जगह का अन्दाज नही लगा सकता। पडित जी आप अछूतोद्धार की कहानी लिख रहे थे। मेरी जैसी बीमारी का मरीज सबसे बडा अछूत है। उसकी कहानी लिख दीजिए, ओह !"

कौशल ने उसके माथे पर हाथ रखकर कहा—"प्रेम, ज्यादे बोलो मत तुम्हारा बुखार तेजी पर है।"

"उसी से तो ताकत मिल रही है। कौशल, मुझे बोल लेने दो भाई। मैं आज जरूर अपनी कहानी लिखा जाता हूँ पडित जी को, फिर वह मेरे ही साथ चली गई तो तुम्हे क्या फायदा होगा ?"

"तुम्हारा बिस्तर बिछा दूँ जमीन पर ?"

"पहले मेरी कहानी पूरी तो हो जाने दो। पडित जी, लोहे की बहुत महीन धूल मेरी साँस के साथ मेरे पेट मे चली गई, हजम नही हुई वह किसी तरह बाहर भी नही निकल सकती अब।"—प्रेम ने कहा।

"यह क्या डॉक्टरो ने बताया है ?"

"नही वह मिले हुए हैं।"

"किससे ?"

"होगे जरूर किसी से। मेरे कारखाने के मालिक मुझसे बोलने मे डरते है। मेरी तरफ सीधा मुँह कर बात नही करते। क्यो आप समझे ? कही मेरी बीमारी के जर्म उनके पेट में न चले जाएँ। मैंने उनकी मशीनो से तमाम जर्म अपने मुँह मे रख लिए।"

"तुम आराम करो प्रेम।"—भन्नन जी ने कहा।

"पहले आप मेरी स्टोरी तो सुन लें। मेरे मालिक अब मुझसे कहते हैं मैं काम पर न जाऊँ। क्यो कहते हैं ? और कामदारो ने उनसे शिकायत की है कि मुझे बडी गन्दी बीमारी हो गई है छूत की। वे जिन मशीनो पर मैं काम करता हूँ, उनको दवा से धोते हैं, मेरी सीट पर डी॰ डी॰ टी॰ छिडकते है। मैं क्या ऐसा मूर्ख हूँ। कहते है मेरे सामने

कुछ दिन आराम करने की बात।"

भन्नन जी बोले—"प्रेम आज से तुम इसी पलग पर अपना बिस्तर बिछा लो। बुखार में यह सीमेंट का फर्श ठीक नही होगा।"

"आप कहाँ सोएँगे ?"

"जमीन पर।"

"नही पडित जी। ऐसा नही हो सकता। बीमार मर जाएगा, कहानी बहुत दिन तक अमर रहेगी। आप मेरी कहानी लिख दीजिए। अभी बहुत लम्बी-चौडी है। बुखार की गर्मी से कई दिन तक आपसे कहता जाऊँगा, तब कही पूरी होगी, अभी नही।"—वह उठ गया और जमीन पर अपना बिस्तर बिछाने लगा।

कौशल ने खुद उसका बिस्तरा उठा लिया और बिछा दिया। प्रेम उसमे सो गया फिर उठा। जेब से उसने एक दवा की शीशी और एक पुडिया निकालकर कौशल को देते हुए कहा—"लो ये दवाएँ है। होगा कुछ नही इनसे लेकिन पीनी पडेगी ये, चार-चार घन्टे मे कौशल भाई, पिला देना। अभी तो पीकर आया हूँ चार बजे। आठ बजे याद करा देना।" फिर वह करहाता हुआ सो गया।

कौशल और भन्नन जी बडी देर तक चुपचाप बैठे रह गए। अन्त में कौशल ने कहा—"क्या करें पडित जी ?"

"क्या बताऊँ ? जो उचित हो वही किया जाए। मेरे पास पैसा और समय होता तो मैं पहुँचा आता। और अभी कोई आशा भी नही है।"

"न आप जा सकते है न मैं ही। शायद प्रेम से कारखाने के मालिक ने कल से वहाँ न आने के लिए कह दिया है। एकाध दिन मे वे इसका पूरा हिसाब चुकता कर देनेवाले है। होगा कोई सवा सौ रुपया। एक सौ रुपया इसे अपनी ओर से बख्शिश के तौर पर देंगे। उसमें यह इलाज करे या घर को जाए।"

"मेरी समझ मे इसे घर ही चला जाना चाहिए। यहाँ इलाज का

कोई ढग नही है। हममे से किसके पास समय है जो इसकी सेवा में यहाँ बैठ सके । और अगर कहीं पेरंसी या बेनू साहब को इसकी बीमारी का पता लग गया तो हमारी जान की आफत हो जाएगी । इसके साथ हमको भी निकल जाना पडेगा। मेरी समझ में हम सबको इसे यही राय देनी चाहिए कि पैसा मिलते ही घर का टिकट कटा ले।"

"अकेले जा तो सकता है ?"

"जरूरत आ पडने पर हिम्मत बँध जाती है और हिम्मत से सभी काम आसान हो जाते हैं।"—भन्नन जी ने कहा। वे मेज पर रखे हुए कागज पर अपनी कलम दौडाने लगे।

"कौन सी कहानी लिख रहे है आप ?"

"क्या बताऊँ बडी कठिनाई में फँस गया हूँ।"

"क्या कठिनाई है अब ? दयाल भाई ने अब आपको आशा दिलाई है। करीम चाचा कहते हैं वे बढिया आदमी है।"

"बढिया आदमी होगे लेकिन पैसा नही है उनके पास।"

"कौन कहता है ? वे लखपति मशहूर है।"

"जमीन-जायदाद से क्या होता है ? नकद पैसा नही है उनके पास मैंने उनके नौकरो को तनख्वाह के लिए झींकते देखा है।"

"पडित जी, आपको पहला चांस तो मिला है, इसे गनीमत क्यों नही समझते आप ? बम्बई में किसे इतनी आसानी से पहला चांस मिल जाता है ?"

"लेकिन उनकी कहानी मेरी पतलून से मेल नही खाती। दुनिया आगे बढ रही है, वे उसे पीछे घसीट ले जाना चाहते है।"

"धार्मिक कहानियाँ खूब चलती हैं और उनसे पब्लिक का फायदा होता हैं।"

"धार्मिक कहानियों की आड़ में भी तो वही व्यापारिक नीति है। पब्लिक का कोई फायदा नही होता।"

"फिर कौनसी कहानी लिखने का विचार है ?"

"यही तो भाई, इसी दुबिधा मे पड गया हूँ।"

"जो कहानी सबसे पहले सोची थी वही लिखो—वही 'अछूतोद्धार' वाली।"

"उसके लिए मन मे ईमानदारी नही है"

"कैसी ईमानदारी ?"

"इतना न्याय नहीं है।"

"तो फिर वही दर्जीवाली कहानी लिखो, उसमे तो तुम्हारा बड़ा मन लग गया था।"

"वह दर्जी कहानी देने को तैयार नही है, बड़ा शक्की है।"

"उसे शक्की ही लिख दो। शक्की भी तो इन्सान होता ही है।"—कौशल ने कहा।

"लेकिन वह कहानी देने को तैयार नहीं है।"

"कैसी कहानी ? कहानी तो तुम बनाओगे न।"

"कहानी तो मैं ही बनाऊँगा, उसके लिए सामान तो उसे ही देना पड़ेगा न ? जैसे मैंने उसे कपडा दिया, उसने मेरी पतलून बना दी।"

"हाँ उसने तुम्हारी दूसरी पतलून दी या नही ?"

"बन तो गई होगी। पर मैं सोच रहा हूँ, पतलून लाऊँ या नही।"

"क्यो-क्यो ? पतलून के लिए उतना उत्साह था तुम्हारे, आज क्या हो गया यह ?"

"पतलून पहन कर यह पौराणिक कहानी मिल तो रही है, पर मेल नहीं बैठ रहा है।"

"चलो पतलून ले आएँ उसके यहाँ से। शायद वह कुछ अपनी कहानी भी खोल दें।"

"नही मैं नहीं जाऊँगा उसके यहाँ। तुम ला दो। वह बडा शक्की है।"

"कैसा शक्की है ?"

"क्या बताऊँ ?"

इतने में प्रेम ने मुँह पर का एक ओढना दूर किया—"ओह ! बडी

गर्मी है।"

कौशल ने उसके पास जाकर पूछा—"क्या बात है ?"

"बहुत गरम हो गया।"

"शायद दवा की गरमी होगी।"

प्रेम के कारखाने के एक चपरासी ने आकर कहा—"चिट्ठी लाया हूँ तुम्हारी, साहब ने दी है। लो पियन-बुक में दस्तखत कर दो। तबीयत कैसी है ?"

प्रेम ने उसके हाथ से लिफाफा लेकर कहा—"बस कुछ पूछो मत तबीयत का हाल।"

"तुम्हारी बीमारी एकदम बढ गई। और तुमने उन दिनो काम भी बहुत किया।"

प्रेम उठ बैठा था। उसने लिफाफा फाडकर पत्र पढना शुरू किया। पत्र पढते-पढते उसके मुँह का रग बदल गया। कौशल ने पूछा—"क्यो, क्या लिखा है ?"

बडी निराशा से प्रेम ने कहा—"मैनेजर साहज ने लिखा है आज से मेरी नौकरी कारखाने मे खतम हो गई।"

"है ! नौकरी खतम हो गई।"—कौशल चिल्लाया।

चपरासी बोला—"इसमें दस्तखत कर दो।"

"भाई मै इनकार थोडे कर रहा हूँ कि मुझे तुम्हारी चिट्ठी नही मिली। बुखार में पडा हूँ। हाथ-पैरो मे ताकत नही है।"

"यह तो सब ठीक है, लेकिन मुझे भी अपना काम पूरा दिखाना होता है। तुम जानते ही हो फिर मैनेजर साहब कैसे आदमी हैं।" चपरासी ने पियन-बुक में बँधी हुई कॉपीइग पेसिल प्रेम की ओर बढाई।

प्रेम ने किसी तरह उसपर दस्तखत कर दिए और बोला—मुश्किलें अकेली नही आती।"

चपरासी अपनी किताब बन्द करता हुआ बोला—"और प्रोप्राइटर साहब ने कल तुम्हे हिसाब ले जाने को बुलाया है, ग्यारह बजे।"

प्रेम फिर अपने बिस्तर में पस्त होकर पड गया था। कहने लगा—"अगर मै नही आ सका तो ?"

"टैक्सी कर आजाना, तनखाह की बात ठहरी।"—चपरासी चला गया।

भन्नन जी बोले—"जब चाहे तब नौकरी से अलग कर सकते हैं क्या ?"

कौशल बोला—"पद्रह दिन की तनखा देनी पडेगी।"

प्रेम कहने लगा—"पडित जी लिख रहे है आप मेरी कहानी ? यह अत्याचार और दलित की कहानी है। आप सोचते होगे इसमें कोई खूबसूरत औरत भी नही है, इसमे नाच-गाने भी कैसे फिट हो सकेंगे ? इसमे एक गरीब की कहानी है, उसका रोना है। क्या रोना गाने से कम सुन्दर है ? लिख दीजिए न।"

"हाँ लिख दूंगा भाई।"

"आप भी मुझसे परहेज करेगे, मेरी कहानी मे भी भयानक छूत के जर्म है। जब तक मुझमे ताकत थी मेरी किसी ने छून नही मानी। मैं-ने अपने रक्त की आखिरी बूंद से काम किया, जब नही कर सका मैं अछूत हो गया। क्या शिकायत हो सकती है ? ऐसा ही कायदा होगा, यही नियम होगा।"

भन्नन जी बोले—"नही, यह अनियम है, अत्याचार है, इसे मिटाना होगा।"

"फिर क्यो हिचकिचा रहे हो ऐसी कहानी लिखने से ?"—कौशल ने पूछा।

"कौन तैयार होगा इसे लेने को ?"

"हाँ पंडित जी, तभी तो मैंने पहले ही कह दिया मेरी कहानी में भी छूत के जर्म है।"—प्रेम फिर मुँह ढककर सो गया।

भन्नन जी बडी व्याकुलता से हरीश की प्रतीक्षा कर रहे थे। कहने

"सिनेमावालों की कोई स्कूल की नौकरी थोड़े है कि समय से गए और समय से आए । ज्यों-ज्यों रात होती है, त्यों-त्यों उनका दिन निकलता है । सब्जी लाने को कह गया था । आग जलाकर दाल ही रख देता हूँ चुरने को । क्यों आपका उससे क्या काम था ?"

"मैंने भी एक चीज मँगा रखी थी । कुछ लिखना चाहता था । कलम ही नहीं सरक रही है ।"

"क्या गाँजा मँगा रखा है ?"—हँसते हुए कौशल ने पूछा ।

"हाँ । आदत है क्या करूँ भाई ।"

"नशा लिखता है इसके माने यही हुए आप नहीं लिखते ?"

"कहा जा सकता है ऐसा । इस समय मैं अजीब चौराहे पर खड़ा हूँ । किधर से जाऊँ, कौन-सी कहानी हाथ मे लूँ नहीं सूझ रहा है । एकदम गाँजे की लगा लेने पर रास्ता अपने-आप निश्चित हो जाएगा ।"

"और वही ठीक रास्ता होगा ?"

"रास्ते सभी ठीक है, मन लग जाने की बात है ।"

"पंडित जी फिर इस गरीब की कहानी मे मन क्यों नहीं लगा देते ? रोना गाने से कम सुन्दर नहीं है और नाच से क्या यह बुखार की कँप-कँपी—क्या यह कुछ कम तासीर रखती है ?"

"सच पूछो तो हर चीज अपनी जगह पर ठीक है । लिखने की ताक़त से उनमे रंग दिए जा सकते हैं । हरीश को आने दो तब ।"

"एक बात बड़ी गलत कर रहे है आप ।"

"कौनसी ? इसी को कहते होंगे । क्या करूँ ? आदत की लाचारी ।"

"नहीं, मेरा मतलब है पतलून पहनकर आपका गाँजा पीना शोभा नहीं देता ।"

"फिर क्या करूँ ?"

"आपको तो दूसरी चीज पीनी चाहिए ।"

"तुम्हारा मतलब मैं समझ गया ।"

हरीश आ पहुँचा । प्रेम के पास जाकर बोला—"कैसी है तबीयत ?"

"क्या बताऊँ ?"

कौशल ने कहा—"आज मेरी नौकरी से भी नोटिस आ गया है ।"

"दुनिया मतलब की है ।"

"कल को हिसाब भी हो जाएगा ।"

"प्रेम, मेरी समझ में तुम्हे कल को अपने घर चल देना चाहिए । नौकरी के कारण है हम सब यहाँ । तुम्हारे नौकरी तो यह गई और उसके बदले लग गई यह बीमारी । बहुत साफ बात कह रहा हूँ मैं, शायद तुम्हे अच्छी नही लग रही होगी । बदन की ताकत पर ठहरी हुई है नौकरी और जेब के पैसे पर लगे है दोस्त तुम्हारे साथ । दोनो चीजो के चले जाने पर क्या हाल होगा ?"

प्रेम बोला—"मुझे मालूम है हरीश, तुम इससे आगे नही कह सके । मैं बताता हूँ, क्या हाल होगा । फुटपाथों पर ये जो अपाहज भिखारी पडे हुए है, उन्ही में मेरा भी शुमार हो जाएगा । एक दिन जरूर ये भी मेरी-सी उमगें लेकर बंबई आए होगे । एक दिन ये भी कही-न-कही काम करते होगे । हरीश, भीख माँगना कोई भी पसद नही करता । लेकिन लाचारी सब कुछ करा देती है । जब काम करने के लिए ताकत नही रहती, लेकिन एक झूठी आशा पर पेट खाने को माँगता है । उसे देना ही पडता है । जब मेहनत से न मिल सका तो भीख माँग कर ।"

तीनो चुपचाप प्रेम की बातें सुन रहे थे । उसने फिर अपने मुँह पर का ओढना अलग कर दिया था ।

हरीश ने उसके माथे पर हाथ रखा—"बुखार तेज है ।"

प्रेम बोला—"मेरी ही तरह ये भी कही नौकर होंगे और मेरी ही तरह लूट लिए गए । मेरा मतलब इनकी ताकत के लूट लिए जाने से है । इंसान की कमजोरी में ही बीमारी का घर है । ये लुटेरे ही क्या हमें बीमार नहीं कर देते ?"

हरीश ने उसका मुख ढकते हुए कहा—"सो रहो प्रेम । लेकिन हम सबके ऊपर जो भगवान है वे जरूर न्याय करते है । अब सिर्फ इसी बात

को सोचना है, तुम्हे जल्दी-से-जल्दी घर पहुँचा देने का उपाय करना है।"

प्रेम बोला—"कहाँ पहुँचाते हो भाई ! अब तो मैं तुम्ही लोगो की शरण हूँ।" वह फिर शब्दो में अपनी पीडा की अभिव्यक्ति बंद कर सिर्फ कराहने लगा।

भन्नन जी ने हरीश के कधे पर हाथ रखकर कहा—"मेरी चीज लाए ?"

हरीश ने कौशल से कहा—"सब्जी बनाओगे तो मेज पर आलू रखे हैं।"

कौशल सिगडी सुलगाने चला गया। भन्नन जी ने फिर हरीश से—"मेरी चीज भूल आए क्या ?"

"बहुत तलाश की पडित जी, नही मिली।"

"तब क्या होगा ? मेरे लिखने-पढने का हर्ज हो रहा है। घर से वैसी चिट्ठी आ रही है, यहाँ के ये हाल है। दयाल भाई के लिए स्टोरी लिखनी है लेकिन—"

"मुझे ताज्जुब लगता है पडित जी, लिखने के साथ इसका क्या सम्बध ?"—हरीश ने पूछा।

"तुम यह बात पूछो अपने स्टोरी-रायटर मजनू से, गोबर्धन से।"

"वे गाँजा थोडे पीते हैं। वे बढिया चीज पीते है। आपने जब पतलून पहनी है तो आपको भी उसी का इस्तेमाल करना चाहिए।"

"उतने पैसे कहाँ से आएँगे ?"

हरीश हँसकर बोला—"तो कुछ शुरू में घटिया ही सही। जब कुछ फायदा होने लगे तो फिर बढ़िया आ जाएगी।"

"घटिया कितने की आ जाएगी ?"

"जितने की कहो।"

"नमूने के लिए।"

"कम-से-कम पाँच रुपए तो खर्च करने ही पडेंगे। पंडित जी, मजनू तो मूड में आ जाने पर आनन-फानन में स्टोरी लिख डालता है, मुझे

खूब मालूम है। नुसखा यही है उसका खूब पी लेता है और सामने बिठा लेता है।"

"किसको ?"—भन्नन जी ने भर्राई हुई आवाज से पूछा।

"हीरोइन को, जिसके ऊपर उसे अपनी कहानी खडी करनी होती है।"

"मै प्रेम की कहानी लिख देता, इसे देख-देखकर। यह बुखार में पडा मेरे सामने है। लेकिन हीरोइन कौन हो सकती है इसकी ? हरीश, तुमने कोई कहानी ऐसी भी देखी है जिसमें कोई हीरोइन न हो।"

'ऐसी कोई नही देखी।"

"हम ऐसी लिख नही सकते ?"

"मैं क्या जानूं लिखनेवाले आप हैं। लेकिन बिना हीरोइन की स्टोरी बिना औरत के घर की तरह अँधेरी न रह जाएगी ?"

"फिर हीरोइन कौन है ?"

हरीश हँसकर बोला—"हीरोइन सरिता है, तुम्हारे सिर के ऊपर। तुम्हे ताकत हो तो तुम खीच लो उसे अपने सामने।"

"तुम्हारे ऑफिम मे उसकी तसवीर तो है। हमें किसी के हाड-चाम से क्या करना है ? हमे हीरोइन की आत्मा से मतलब है। चित्र मे उस की आत्मा है और वह क्षुद्र मिट्टी का ससर्ग नही है, जो हमें कलुषित कर पतित कर देता है।"—भन्नन जी ने अपनी जेब मे हाथ डाला।

"रुपए निकालिए फिर, देर हो जाने पर वह मिले या नही ! ब्लैक का मामला ठहरा।"

"भन्नन जी ने पाँच रुपए का एक नोट निकालकर कहा—"हरीश भाई, बस यही आखिरी नोट बचा है। दो-चार रुपए और होगे। दो रुपए दर्जी को देने होगे। फिर क्या बचेगा ? लो यही आखिरी दाँव है।"—एक अजीब भावना मुख में व्यक्त कर भन्नन जी ने कहा।

"पंडित जी, घबराते क्यो हो ? तुम स्टोरी-रायटर हो। जरा तुम्हारा पैर नहीं जम रहा है। जब जम जाएगा तो सिनेमा के सेठ रुपयो की

थैलियाँ लिए-लिए तुम्हारे पीछे दौडते फिरेंगे और तुम नाही-नुकुर रकते हुए नखरे दिखाओगे अपना भाव बढाने के लिए।"—हरीश ने कहा। अब भन्नन जी के साथ उसकी गाढी दोस्ती हो गई थी

"लो फिर।" भन्नन जी ने वह पाँच रुपए का नोट हरीश के हाथ मे रखकर कहा—"जल्दी आना।"

हरीश नोट लेकर चला गया और उसके द्वारा दरवाजे के भिडने की आवाज के साथ कौशल के तरकारी छौकने की आवाज मिल गई—"छयाँ ऽऽ" और उन दोनो ध्वनियो के ऊपर प्रेम के बुखार की कराह बैठ गई।—"आँ ऽऽ!"

पडित भानुदेव शर्मा हाथ मे लेखनी लेकर कहानी के लिए रास्ता ढूँढ रहे थे। चारो दिशाओ में चार कहानियाँ खडी थी—१. अछूतोद्धार की कहानी, २ दर्जी की कहानी, ३ प्रेम की कहानी, ४. दयाल भाई की पौराणिकता।

"किस पर हाथ लगाऊँ?" यही उनकी दुविधा थी—"बिना लक्ष्य को स्थिर किए रास्ता ही कैसे मिलेगा मुझे? हे भगवान् इस परदेस में बडी बुरी तरह आ फँसा हूँ, तुम्हारी शरण हूँ, मार्ग दिखाओ।"

अपनी ही कोशिश से सब-कुछ होता है। भगवान् ने हमारे हाथ-पैरों मे शक्ति दी है और मन को दिया है बुद्धि-विवेक। सभी कुछ कैसे कर देगा वह हमारे लिए?"

भन्नन जी एक-एक कथानक को अपने सामने रखकर उसकी जाँच करने लगे। सबसे पहले उन्होने 'अछूतोद्धार' को लिया—"एक गंदे सैक्स का रग देकर मैं उसमें आकर्षण पैदा कर रहा हूँ, यह मेरा कपट है। अछूतोद्धार मेरे व्यवहार मे आने की चीज है इस तरह अपना नमूना दिखाकर ही मैं दूसरो की उधर अभिरुचि जगा सकता हूँ। बॉक्स ऑफिस की तरफ ध्यान रखकर जो मैं किसी उद्धार के ढोल पीटना चाहूँ वह मेरा पाखड है, उससे किसी का भला न होगा। सिनेमा की गदी वृत्ति में मैं साहित्य का सस्कार देने आया हूँ। क्या यही है वह? लोग यही कहेंगे

किस गदे गटर में बह गया भानुदेव !"

फिर उन्होने दर्जी की कहानी सामने रखी—"इसमें भी वही बात है। कुछ मनोवैज्ञानिक बनाई जा सकती है यह। लेकिन यह भी एक उलझन की चीज है। साधारण जनता इसे नही समझ सकती और ऊँचे दरजेवाले भी मूर्ख नही बनाए जा सकते। फिर प्राकृतिक घटनाओ की खोज में टेलरमास्टर ने अपनी इस्त्री खीचकर मार दी तो ?"

उन्होने फिर प्रेम की कहानी हाथ मे ली—"और यह शोषण की कहानी ! सारा ससार इसी पर दृष्टि जमाए बैठा है, सब जगह समानता हो। बजर भूमि पर नहरो की काट से हरियाली उगाई जा रही है। अणु-शक्ति से पहाडो की ऊँचाइयाँ बराबर कर दी जाएँगी। लेकिन जो बारह आने भर महासमुद्रो की मेखला है उसको कैसे ठोस बनाया जाएगा ? कहानी अच्छी बनाई जा सकती है लेकिन हीरोइन कौन होगी इस के लिए ?"

लौट फिरकर दयाल भाई चमकने लगे उनकी आँखो मे—"पुराणो मे प्लाटो की क्या कमी है ? पैसे की अब मुझे बडी सख्त जरूरत है। अगर उनके मन के योग्य कहानी बन जाए तो वही दे भी सकते हैं। लेकिन उनके पास पैसे की कमी है। अजी सौ-पचास रुपए की कोई बात नही है।"

भन्नन जी इसी तरह विचारो के चढाव-उतार में डगमगाते रहे। कौशल रोटियाँ पटकाने लग गया था। बोला—"पडित जी, गरम-गरम रोटी खा लीजिए।"

'हरीश को आ जाने दो।"

"हरीश आपके हिस्से का थोडा खाएगा ? न आप ही उसके हिस्से का खाएँगे।"

"बात ऐसी है, मुझे आज रात-भर जागकर कहानी लिख डालनी है खाना खा लेने पर पेट भारी हो जाता है और दिमाग की शक्ति भी उधर ही खाना हजम करने मे लग जाती है। इसलिए मेरा खाना रख देना

जब मुझे अवकाश मिलेगा, मैं खा लूँगा।"

भन्नन जी हर मिनट में हरीश की वापसी देख रहे थे, और वह बडी भारी होती जा रही थी। उन्होने कौशल से पूछा—"और अभी कितनी देर लगेगी हरीश को ?"

"बीडी या सिगरेट का डिब्बा होता तो एक की दूकान न सही, दूसरे के यहाँ से लाया जा सकता। वह तो किसी खास ही जगह मिलेगी।"

रोटी पका लेने के बाद, कौशल ने प्रेम का दूध गरम करने के लिए रख दिया। अचानक उसे याद आई उसकी दवा की, पंद्रह मिनट ज्यादा हो गए थे। उसने उसे दवा पिलाकर पूछा—"दूध कितनी देर में पियोगे ?"

"अभी तो दवा पी है।"—प्रेम ने जवाब दिया।

"अडे कितने छोडें दूध में ?"

"नही, उनके लिए इच्छा नही है।"

"नही तो ताकत कैसे आएगी ?"—कौशल ने पूछा।

"एक तो तब भी लो।" भन्नन जी बोले—"कल को अगर तुम्हारे घर को जाने की ठहर गई तो यात्रा का झटका सहन करने के लिए कुछ बल तो चाहिए ही।"

"पडित जी, आप भी ऐसा समझते हैं कि अडे खाकर ताकत आती है।"—प्रेम ने कहा।

"भाई जरूरत पडने पर वे खाए भी जा सकते है। शरीर की शक्ति पर तो हमारी बुद्धि ठहरी है।"—भन्नन जी ने कहा।

और उसी समय हरीश आ पहुँचा। उसके हाथ में एक झोला था उसमें हरी पत्तियाँ दिखाई दे रही थीं। भन्नन जी ने बड़ी उत्तेजना से पूछा—"लाए ?"

हरीश ने सिर हिलाकर कहा—"हाँ, दो आने की मूलियाँ भी खरीदनी पडी।" उसने दरवाजे पर साँकल चढ़ा दी और झोले मे से मूलियाँ निकाल अखबार में लिपटी हुई एक बोतल निकाली।

कौशल ने हरीश के हाथ से बोतल छीन ली और उसका काग निकालकर सूंघा—"वाह पंडित जी! अब बने आप असली स्टोरी-रायटर!"

"हरीश बोला—"हाँ मै भी सोचता था पतलून पहनकर यह गाँजे की दम खीचना बडी बेसुरी बात है।"

कौशल ने कहा—"अब आप हरएक की आँख-से-आँख मिलाकर बात कर सकेंगे।"

हरीश ने उसके हाथ से बोतल छीन ली—"तू सिंधी सेठ की मोटर साफ करनेवाला, और मैं पंजाबी सेठ की मेज पोंछनेवाला हमे क्यो इसके मोह में पडने की जरूरत है? लीजिए पंडित जी, जरा सँभाल कर रखिएगा।" उसने बोतल भन्नन जी के हवाले कर दी।

कौशल ने हरीश से कहा—"चल खाना खा ले। पंडित जी के लिए रख देना है।"

दोनो खाना खाने चले गए। भन्नन जी अपनी मेज पर जमकर बैठ गए सामने कागज रखा था। एक हाथ मे लेखनी और दूसरी मे बोतल लिए सोचने लगे—"हे बोतल के भीतर निवास करनेवाली देवी! अब मैं तेरी शरण मे आया हूँ। मेरी दुविधा का हरण कर मुझे ठीक-ठीक मति दे कि मैं ऐसी कहानी लिख सकूं जिसकी सारे भारत में धूम मच जाए।" उन्होंने बोतल का काग खोलकर उसे सूंघा और खोपड़ी हिला कर असीम तृप्ति प्रकट की।

'इसके सामने भंग क्या चीज है, यही सुनता चला आया हूँ। आज परीक्षा हो जाएगी इसकी शक्ति की। लेकिन जब ये लोग सब सो जाएँगे तब ही इसका चक्र जमाऊँगा। अपना इनके सामने अकेले पीना भी ठीक नहीं और इन्हें देकर इनकी आदत बिगाडना भी पाप।"

खा-पीकर हरीश और कौशल आ पहुँचे। हरीश बोला—"क्यो पंडित जी ठीक है न?"

"हाँ भाई, क्यो नही?"

"कुछ लिखने में लग रहा है मन?"

"जरूर लग जाएगा।"

कौशल बोला—"ऐसे उन्हे गडबडा मत। जा चला जा सोने को—जब एकात होगा तभी तो।"

हरीश बोला—"और तू जागता ही रहेगा क्या ? तू भी मुँह बन्द कर सो जा।"

कौशल ने कहा—"मै तो जागता ही रहूँगा क्योकि मै जिस मेज पर सोता हूँ। उसी पर तो पडित जी लिख रहे है।"

भन्नन जी बडी असमजस मे पडे फिर बोले—"कौशल, तुम मेरी पलग मे बिछा लो अपना बिस्तर। मेज पर मै सो जाऊँगा आज लिख लेने के बाद, लेकिन मै तो रात भर लिखते रहने के ही विचार मे हूँ। तुम दिन भर के हारे-थके हो सो जाओ।"

हरीश दूसरे कमरे मे चला गया सोने को और कौशल ने पडित जी की पलंग पर अपना कब्जा जमाया। कुछ देर अगरेजी की प्राइमर के पेजो को उलटकर उसने उसकी पक्तियो में अपनी नजर दौडाई। फिर सो गया।

भन्नन जी चौकन्ने हुए। शहर का कोलाहल अब शान्त पडने लगा था। दूर पर चलनेवाली लोकल ट्रेनो के बीच का समय अब अधिक विलबित हो गया था। निशा की शून्यता में दूर ट्राम की मेन लाइन पर चलनेवाली गाडी की खड खड से यह सहज ही समझ मे आ रहा था, अब उसकी तमाम सीटें प्राय. खाली ही चली जा रही है। ड्राइवर के श्रम मे चाहे कोई कमी नही हुई हो, लेकिन कण्डक्टर अपने कैश के बटुए में हाथ जमाए गाडी के कोने मे दिन के श्रम को मिटा रहा है, या छुट्टी के बाद के प्रोग्राम का नकशा बना रहा है।

धीरे-धीरे पास-पडोस के रेडियो बन्द हो गए और उसके कुछ देर बाद बिजली की बत्तियाँ भी बुझ गईं। रात में अधिक गम्भीरता आ गई। भन्नन जी के श्रीमुख से निकल पडा—"या निशा सर्वभूताना तस्या जागर्त्ति सयमी—सब भूतो के लिए जो निशा है उसमें सयमी

जागता है।"

उन्होने सयम के उस सबसे उज्ज्वल प्रतीक को उठाया, जिसका काग पहले ही कौशल और हरीश ने ढीला कर दिया था। लेकिन वहाँ पर पीने की उनकी हिम्मत न हुई। वे उठकर गुसलखाने मे गए। वहाँ अँधेरा था। उन्होने काग खोला। अब पीएँ कैसे यह समस्या हुई। गिलास काँच का ढूँढना पडेगा। चुल्लू से पीना को स्थिर किया। फिर बोतल ही मुँह से लगा ली। किसी दूसरे का हिस्सा करना तो था नही। अच्छी लगी। थोडी देर बाद कुछ और पी ली। फिर डर गए न जाने पहली मर्त्तबा है, तेजी दिखा दी तो मुश्किल हो जाएगी। बोतल को कागज़ में लपेट कर कबाडखाने मे रखे हुए एक टूटे सोफे के नारियल के रेशो के बीच मे छिपा दिया—"यहाँ कौन देखने आ रहा है ?"

भन्नन जी ने अपनी मेज पर आकर एक बीडी जलाई। पैसे कम रह गए थे और सिगरेट को हाथी के दिखाने का दाँत बना लिया। धीरे-धीरे नस-नाडियो मे विचित्र स्फूर्त्ति, हृदय मे सतुलित स्पदन और मस्तिष्क के स्तरो मेंदबी हुई स्मृतियाँ जाग पडी—"क्या यही शराब की मादकता है ?" उनका मन उठकर बाहर जाने को होने लगा, सघर्ष के बीच।

आँखो मे मीठी मादकता चढ गई, कानो में दूर-दूर का शब्द सुन लेने की शक्ति जाग उठी। बुद्धि तीखी हो गई, भावना उनकी लेखनी की नोक से कागज पर उतर आने के लिए छटपटा उठी—"अब कोई नही रोक सकता मुझे। अब मैं इस सेलुलॉइड-जगत के प्लाइउड निर्मित दरवाजो को तोड़कर उसके भीतर घुस जाऊँगा। अब उसका मन्त्र मेरे हाथ लग गया है। लेकिन कौन सी कहानी लिखी जाएगी ?"

नीचे फर्श पर सोए हुए प्रेम की साँस उसकी नाक या गले मे जमे हुए कफ पर बजने लगी थी। उसमे पडित जी की कल्पना फँस गई— "इस गन्दी बीमारी की कहानी में क्या रखा है ? मुझे स्वास्थ्यकर मनोरंजन देना है। जिस तरह यह बीमारी सरनेवाली है, उसी प्रकार

इसकी कहानी भी भयानक जर्मों से खाली न होगी।"

उनके मस्तिष्क में किरसन जी आए—"चोर! लफगा! इन्हीं जैसों ने इतनी अच्छी इंडस्ट्री को बदनाम कर रखा है।" ब्लैक बोर्ड पर चॉक से लिखे हुए नाम की तरह उन्होंने उसे एक ही हाथ फेरकर मिटा दिया।

दर्जी की कहानी भी एक संशयग्रस्त अहंकारी का चित्र जान पड़ा। उसे भी छोड़कर दयाल भाई उनके सामने आए—"दयाल भाई से पहला चांस मिल जाने की आशा है···पर अगर मेरी कहानी में जान पड़ गई तो कोई भी प्रोड्यूसर उसे निकालने के लिए तैयार हो जाएगा। जान कैसे न पड़ेगी? इस विचार की आवृत्ति घोर पाप है। पौराणिकता में क्या रखा है? जब मैं पतलून पहन कर प्रगतिवादी हो गया तो फिर पीछे को लौट जाना सरासर मूर्खता है। मैं सामाजिक कहानी ही लिखूंगा। उसी की माँग है और उसी में सफलता मिल सकती है।"

हठात् उनके मानस में एक स्फुरणा जाग पड़ी। मन के अन्धकार में कोई तारिका उदय होने लगी। ठीक उसी समय उनके सिर के ऊपर की छत पर किसी की नियमित चापें बजने लगीं। भन्नन जी का खिला हुआ मुख और भी खिल पड़ा—"सरिता! सरिता! आज कई दिनों के बाद सरिता को नाच की याद आई है।"

सरिता की उन चापों की ताल में भन्नन जी भी मेज पर अपनी उँगलियाँ बजाने लगे—उनके अंग-प्रत्यंग का एक-एक सेल् उल्लास से भर उठा—"वाह! किस तरह यह नृत्य-बाला एक ही साथ मेरे मन और इस बाहरी जगत में सजीव हो उठी। जिस शून्य निशा में सारा विश्व विश्राम करता है, उसमें कलाकार कहाँ सोता है?" शीघ्र ही सरिता के नृत्य का अभ्यास बन्द हो गया। पंडित जी सोचने लगे—"वह जरूर नीचे उतर गई अपने प्रेमी के चित्र से मिलने। चलूँ मैं भी चलूँ। मैं उससे भेंट करूँगा आज। उसने उस दिन मुझसे अपनी कहानी लिखाने को कहा था। आज आई वह घड़ी अपने-आप।"

भन्नन जी धीरे-धीरे उठे। उन्होंने बत्ती बुझा दी और बाहर को

चले। उनकी ठोकर प्रेम से लगी। वह जागकर बोला—"कौन पडित जी, इस घोर अँधेरे में आप कहाँ जा रहे है ?"

"बाहर।"

"बाहर किससे मिलने ? आपको किसी की डर नही ?"

"मै पेशाब करने जा रहा हूँ।"

"जलती हुई बत्ती क्यो बुझा दी ? शायद इस गरीब का सिर ठुक-राने को। अच्छा पडित जी।"—बडी दर्दभरी आवाज में उसने कहा।

पडित जी ने बत्ती बुझा दी और बाहर जाकर आँफिस तक हो आए, लेकिन वहाँ घुप अँधेरा था।

उन्नीस

रात फिर कुछ न हो सका था भन्नन जी से । उनका पक्का विश्वास था, सरिता जरूर अपने प्रेमी से मिलने गई थी उस समय । वह अँधेरे में ही तो जाती है । उन्होने मूर्खता की जो तुरन्त ही लौट गए । कितनी बढिया रात ! कितना बढिया जमा हुआ रग । कहानी और हीरोइन दोनो एक साथ मिल जाते । इसका मुख्य दोष उन्होने प्रेम के ही सिर पर मढ दिया ।

वे सोचने लगे—"क्या इसको मेरे आने पर ही बीमार होना था ? अगर यह पलँग पर सोया होता तो शायद यह घटना न घटती । लेकिन मैने कहा छीनी इसकी पलँग ? जो हुआ, सो हुआ । कल को प्रेम को इसके घर भेज देना ही पहला काम है । तभी यह मेरे मार्ग की ठोकर दूर होगी और तभी इसका भी कल्याण होगा ।"

दूसरे दिन इतवार था । कौशल को दफ्तर से छुट्टी थी, लेकिन सेठ जी के घर के कामो में कुछ अधिक विस्तार था । कौशल बोला—"इत-

करतूत है यह।"—भन्नन जी ने कहा।

"तो बम्बई किसे कहते हो तुम ? इस खारे समुन्दर से घिरी हुई इस मिट्टी का नाम बम्बई था क्या ? भाई, इसे इन्सान ने कोई तरतीब देकर जमीन पर लोहे की पटरियाँ और नल बिछाकर हवा में जो बिजली के खभे उठाए हैं—क्या उसका नाम है बम्बई ? या यह जो आसमान मे सिर उठाए सूरज और चाँद-तारो से बातें करनेवाली कोठियाँ है—क्या इसे बम्बई कहते है ?"

प्रेम कुछ आशान्वित होकर कहने लगा—"नही चाचा जी !"

"जिस तरह हमारे भीतर यह बोलनेवाली हवा ही हम हैं, ऐसे ही बम्बई इन बेजान चीजो का मजमूआ नही है। बम्बई इस फितरती-इन्सान का ही नाम है।"—चाचा ने कहा।

कौशल हँसकर बोला—"खराबी बम्बई की आबहवा की है चाचा जी।"

"नही इसी इन्सान ने मजदूरी का भुलावा देकर हमे बेवकूफ बनाया है। मशीन और बिजली की जादूगरी से हमारे हाथ-पैर तोड दिए।"

"चाचा जी, घर जाकर मैं अच्छा हो जाऊँगा।"

"दुआ माँगता हूँ खुदा से ऐसी ही। कही पहाड पर चले जाओगे तो और जल्दी आराम पहुँचेगा तुम्हे।"

गद्गद् होकर प्रेम ने कहा—"आपने बडी मदद की यहाँ मेरी। तकदीर ही में नही था तो किसका वश ? मुश्किल है।"

करीम ने उसकी पीठ पर हाथ रखकर कहा—"ऐसे हिम्मत तोडने से काम न चलेगा। तुम अच्छे हो जाओगे और बहुत जल्दी हमारे बीच में आ जाओगे। हम यही दुआ माँगते रहेगे। खत भेजना। हमें भूलना मत, कहा-सुना माफ करना। गाडी रात को जाएगी ? देखो मौका मिला तो स्टेशन पर आने की कोशिश करूँगा।" चाचा जी प्रेम को अभिवादन कर रेलवे स्टेशन को चल दिए।

हरीश बोला—"प्रेम, तो अब देर करनी फिजूल है। सबसे पहले

तुम अपने कारखाने में जाकर अपना हिसाब साफ करा लाओ। पन्द्रह दिन की तनखा अलग रखवा लेना। जा सकोगे तुम ? नही तो मैं चलूँ तुम्हारे साथ ? कुछ सौदा-पत्ता भी खरीदना है ?"

"हाँ हरीश भाई, जरूर चलना पडेगा। कल से बडी कमजोरी जान पडती है, बुखार से नही भाई। एकदम जो नोटिस भिजवा दिया उन्होने। मालिक तो बडी अच्छी बाते कर रहे थे मुझसे कल तक। कारखाने की तरफ से मेरे इलाज करा देने तक को कहते थे। एक ही दो घटे में मालूम नही उनके विचारो ने क्या पलटा खाया।"

कौशल ने कहा—"इनका मैनेजर ठीक आदमी नही है। उसी ने यह बचत की मद दिखाई होगी। चलो मैं भी चलता हूँ तुम्हारे साथ।"

भन्नन जी लिखते हुए बोले—"मै भी चलता, लेकिन कहाँ से ? जब तक मेरी कहानी नही लिख जाती मै किसी के कुछ काम का नही हूँ।"

खाना-पीना हो गया था सबका। वे तीनो चल दिए और भन्नन जी अकेले अपने कागज-कलम और विचारो के साथ रह गए।

"अब तक कई पेज कहानी के लिख गए होते। यह प्रेम ही मेरे राह की ठोकर बन गया। कल रात क्या बढिया बानक बन गया था। सब चीज अपने-आप अपनी जगह पर जम गई थी। मै सरिता को कमरे का द्वार खोल देने के लिए ही विवश नही कर देता। वह अपने हृदय का द्वार भी मुक्त कर मुझे अपनी सारी कहानी बता देती। मैं दिन-रात एक कर उस कहानी में प्राण भर कागज पर चमका देता। एक एक्ट्रेस के जीवन का रहस्य, उससे बढकर आकर्षण भरी कहानी और कौन हो सकती है ? कौन उसे बनाने के लिए तैयार न हो जाएगा ? जो सबसे चिंता की बात है अर्थात् प्रोड्यूसर को ढूढने की, वह इस कहानी को लिखने में अपने-आप तय हो जाती है।"

रात अच्छी तरह नीद नही आई थी भन्नन जी को। आंखो की पलकें एक दूसरी के साथ चिपकने लगी। कुछ देर मेज पर ही सिर रखकर सो गए थे फिर द्वार बन्द कर पलँग पर लेट गए। खुली हुई खिड़की से

अखड हवा की धारा बह रही थी, लेटते ही उन्हे नीद आ गई।

हमारी अधूरी कामनाएँ ही स्वप्न के जगत मे खुल पडती है। भन्नन जी ने वही देखा—आधीरात में सरिता फिर नाचती हुई उसी कमरे में पहुँची जहाँ उसके प्रेमी की फोटो टँगी हुई थी। भन्नन जी जैसे ही उसका अनुसरण करने के लिए उठे बीच मे बडी तेजी से एक रेल दौडने लगी। रेल दौडती ही रही, उसका कोई अन्त ही नही दिखाई दिया।

भन्नन जी सोचने लगे—"बडी अजीब रेल है यह ? रेल नही हुई यह तो एक नदी हो गई ! नदी को तो तैर कर पार किया जा सकता है, इस पर से कूद जाना असम्भव बात है। फिर क्या करूँ ? सरिता उस एक्टर की पूजा कर शीघ्र ही अपने कमरे को लौट जाएगी। वहाँ रात को उससे मिलने जाना कोई चतुराई की बात नही है।"

बडी देर तक सोचते रहे वे, गार्ड का डिब्बा ही नजर नही आता था। कभी तीसरे दर्जे, तीसरे खतम हुए तो दूसरे, पहले, मालगाडी—फिर तीसरे और दूसरे ! ऐसा ही चक्कर चलता रहा ! अब क्या हो ?

भन्नन जी ने सोचा— 'बिना साहस के कोई बड़ी चीज नही मिलती। क्यों न होशियारी से कूदकर गाडी पर जाऊँ ? डिब्बे में चढकर फिर उधर कूद जाऊँ ? एक क्षण नष्ट करना नही है।" उन्होने ऐसा ही किया झट से गाडी का डंडा पकड लिया।

मुसाफिर चिल्लाए—"है ! है ! कहाँ चढा चला आता है ? गाडी में बिलकुल जगह नही है। और फिर यह गाडी कहाँ जा रही है, उसका भी तो कोई ठिकाना नही है।"

"भाई, मुझे कही जाना नही है। इधर से रास्ता दे दो उस पार उतर जाऊँगा।"

एक बुड्ढा बोला—"ऐसे कही चलती गाडी में किया जाता है। वह तो तुम ठहरी हुई गाड़ी की बात करते हो।"

दूसरा बोला—"इसके पास टिकट नही होगा, इसीलिए ऐसा कर रहा है।"

तीसरे ने कहा—"या किसी की गठरी-मोटरी टच कर कूदने का विचार होगा।"

चौथे ने दरवाजा खोल दिया—"हमारा क्या हर्ज है ? सब देखते रहो भाई अपना-अपना सामान। कूद जाएगा तो अपनी हड्डी तोडेगा, हमारे बाप का क्या नुकसान होगा ?"

भन्नन जी ने गाडी मे प्रवेश किया। सबकी आँखे उनकी तरफ थी। वे दूसरी खिडकी खोलकर कूद गए—बहुत साफ ! लेकिन उधर जाने पर पता चला बेनू साहब का ऑफिस तो गाडी के उस पार ही है। अब बडी मुश्किल में पडे वे। गाडी उसी तरह अपनी चाल मे चल रही थी। वे सोचने लगे—"अब बडा बेवकूफ बनावेगे गाडीवाले जो भी होगा देखा जाएगा।"

उन्होने फिर कूदकर गाडी का डडा पकड लिया। फिर कोई दरवाजा खोलने को तैयार नही हुआ। एक मुसाफिर कहने लगा—"मैंने कहा न था, देखो यह फिर आ गया इसकी नीयत ठीक नही है। खबरदार इस बार कोई मत खोलना।" कोई खोलने को तैयार नही हुआ।

भन्नन जी बराबर बाहर से दरवाजा खटखटाते रहे। एक आदमी को क्रोध आ गया। वह बोला—"इसने नीद हराम कर दी हमारी।" उसने खिडकी खोली।

भन्नन जी वही पर आ धमके और उसके मना करने पर भी खिडकी की राह डिब्बे मे घुस गए। सबके बिस्तर और हाथ-पैरो पर जूते रखते हुए दूसरी तरफ निकल गए, और उधर की खिडकी से नीचे कूद गए।

कई लोग बोले—"आदमी चोर नही है बेवकूफ है।"

कपडे झाड़कर जैसे ही उठना चाहते थे कि गार्ड का डिब्बा आ गया और उसके दरवाजे पर हरी झंडी हाथ मे लिए प्रेम बोल उठा—"पडित जी ! बाइ-बाइ।"

भन्नन जी ने बहुत खुश होकर जवाब दिया—"नमस्ते, क्यो भाई प्रेम, चल दिए क्या ? तबीयत तो ठीक है न ?"

'हाँ पडित जी, दूसरी नौकरी मिल गई ! फिर तबीयत कैसे न ठीक होती ? बेकारी सबसे बडी बीमारी है।"—प्रेम हरी झडी हिलाकर भीतर चला गया। गाडी निकल गई।

भन्नन जी ने आगे बढकर देखा तो ऑफिस का कही कोई पता ही नही—"अरे, गाडी में चढकर न जाने कितने मील आगे बढ आया। अब तो फिर पीछे को लौटना पडेगा।" वे रेल की लाइन-ही-लाइन पीछे को दौडने लगे। बडी मुश्किल से दादर का स्टेशन आया। किसी तरह टिकट कलक्टर को चकमा देकर वे पुल पर चले गए और सीधे दादर मेन रोड पर के अपने डेरे पर पहुँच गए। वहाँ जाकर उन्होंने जब देखा सरिता अपने हृदय के देवता की आरती कर ही रही थी तो उनकी जान-में-जान आई।

दरवाजे पर हटे हुए परदे की राह पर अपनी एक आँख जमाकर वे देखते ही रहे उस अभिनेत्री का अनुराग। बार-बार वह उस चित्र की आरती उतारती, बार-बार उसके चरणों पर अपना मस्तक रखकर न-जाने क्या कहती।

भन्नन जी मन मे कहने लगे—"इस नटी का अनुराग भी बडा अजीब, उस रेल के ही चक्कर-सा हो गया। आरती, फिर दडवत्, फिर हाथ जोडकर प्रार्थना ! लेकिन मै भी सुबह तक छोडूँगा नही, जब तक यह थक न जाएगी ?" भन्नन जी धरना देकर बैठ गए दरवाजे पर। कुछ देर बाद जब उन्होने भीतर झाँका तो अधकार ! आरती बुझ गई थी।

हृदय धक-धक करने लगा। सोचा—"दरवाजा खटखटाएँ तो सही, संभव है अभी गई न हो।" वे जोर-जोर से दरवाजा खटखटाने लगे। इसी समय उन्होने सोते-सोते सुना कोई उनका दरवाजा खटखटा रहा था।

"पडित जी ! पडित जी ! खोलिए दरवाजा, हम कबसे चिल्ला रहे है, बडी गहरी नीद में सो गए आप ?"—कौशल ने कहा।

भन्नन जी ने आँखें मलते हुए द्वार खोला—"ओ हो ! आ गए आप लोग। भाई कल रात भर किसे नीद आई ?"

हरीश हँसकर बोला—"बादशाह बनकर सारी रात लिखते गुजारी होगी, मेरी तो बात ही नही हो पाई।"

हरीश के हाथो मे नया थैला था, एक कौशल के भी, उनमे बहुत-सा सामान था। एक बडल उसके दूसरे हाथ में था। एक-दो चीजें प्रेम भी लिए हुए था। सब चीजें मेज पर रख दी गईं।

भन्नन जी ने कहा—"हो गया हिसाब ?"

प्रेम ने जवाब दिया—"हाँ पडित जी, मालिक बड़े अच्छे है हमारे। एक महीने की तनखा अलग से दे दी और कहा, इससे अपना इलाज करा लेना। जैसे ही तुम अच्छे होकर यहाँ आ जाओगे, तुम्हारी नौकरी फौरन दे दी जाएगी।"

"तुम जल्दी ही अच्छे होकर आ जाओ, भाई, यही हमारी भी कामना है।" भन्नन जी ने अपने दिवा-स्वप्न का स्मरण कर कहा—"और भाई मैं तो स्टेशन तक हो भी आया—तुम पैसेंजर होकर नही गार्ड बन-कर जा रहे थे।"

तीनो अजीब तरह से भन्नन जी को देखने लगे। हरीश बोला—"रात की खुराक का असर क्या अभी तक है ?"

कौशल बोला—"जूते मे एक रुपया अधिक ले लिया।"

भन्नन जी ने अपने सपने का वर्णन कर उनके शक मिटाते हुए कहा "क्या क्या खरीद लाए ?"

"घर जा रहे है। कुछ कपडा, कुछ सिंगार का सामान, कुछ बच्चों के लिए खिलौने-मिठाई।"—कौशल ने जवाब दिया।

हरीश ने कहा—"पिताजी बीड़ी बहुत पीते है इनके। उनके लिए एक सिगार लाइटर लाए है।"

"यह तो फिजूल चीज है। पत्थर घिस गया तो बार-बार बदलना पड़ता है। वहाँ गाँव मे कहाँ से मिलेगा ?"—भन्नन जी ने पूछा।

"यहाँ से एक दर्जन तो रख ले गया हूँ।" प्रेम ने कहा।

भन्नन जी ने देखा प्रेम को घर जाने का बडा उत्साह हो गया था।

दिन भर खरीद-फरोख्त, बाँध-बूँध में ही बीत गया। शाम होने को आई। कुछ तबीयत भारी होने लगी थी उसकी, लेकिन रेल की यात्रा ही उसके मस्तिष्क में एक खास चीज होकर बस गई थी, बीमारी की तरफ ज्यादे ध्यान नही गया उसका।

भन्नन जी ने जब देखा प्रेम का जाना अब निश्चित ही है, तो उन-के मन मे भी बडी प्रसन्नता छा गई। उसका सामान जुटाने और बिस्तर बाँधने मे भी जो मदद हो सकती थी, उन्होने दी।

गाडी के समय से बहुत पहले शाम होते ही वे लोग स्टेशन को चल दिए अधिक दूर तो था नही। सामान के लिए एक कुली कर लिया गया था। स्टेशन पहुँचकर भन्नन जी टिकट खरीद लाए। गाडी के आने से जरा देर पहले करीम चाचा भी एक लोकल ट्रेन से आ धमके। एक रूमाल मे बँधे हुए कुछ फल ले आए थे वे प्रेम के लिए। बोले—"भाई, रास्ते मे काम आवेगे।"

गाडी आई, भीड भी थी ही लेकिन तीन-चार आदमियो के साथ होने से प्रेम को कोई कठिनाई नही हुई। गाडी मे दो साथियो ने बैठकर उसके पैर फैलाने की भी गुजायश कर ली थी।

गाडी के चलने का समय आया। प्रेम ने हाथ जोडकर कहा—"आप लोगो ने जो मेरी मदद की है, वह कभी नही भूल सकता। देखिए अगर जीता रहा तो यह कर्ज अदा करूँगा।"

करीम चाचा बोले—"ऐसे दिल तोडने की बात नही है प्रेम, तुम्हे घर की आबहवा से जरूर जाते ही फायदा होगा। जन्मभूमि की मिट्टी-पानी बडी-बड़ी दवाओ का मुकाबला करती है। तुम बहुत जल्दी ही हम लोगो के बीच में आ जाओगे।"

"कोई चिंता मत करो प्रेम। तुम्हारे आने तक जरूर मेरी कोई-न-कोई कहानी कही तय हो जाएगी। अगर भगवान् सहायक हुआ तो कही अच्छा मकान ढूंढ लेंगे और सब उसी में साथ-साथ रहेंगे।"—भन्नन जी ने कहा।

प्रेम बोला—"पडित मेरी कहानी पर कोई ध्यान नही दिया ग्रापने ?"

"नही उसे भूला तो नही हूँ। वह अकेले मेरे ही हाथ की बात तो नही है । भाई उमका निर्माता भी तो कोई चाहिए । फिर भी मैं कोशिश करूँगा।"—भन्नन जी बोले ।

गाडी ने सीटी दी ग्रौर वह चली गई । प्रेम के सभी साथी बडी देर तक उसे हाथ जोडते रह गए। जब गाडी ग्राँखो की ग्रोट में हो गई तो सब घर को लौट चले।

भन्नन जी ने राह मे कहा—"ग्राज हमारे कमरे का एक साथी कम हो गया। उसकी जगह सूनी-सूनी लगेगी।"

कौशल बोला—"लेकिन ग्रापकी कहानी लिखने मे तो सूनापन मदद देता है।"

हरीश ने कहा—"पडित जी, कल की दास्तान तो सुनाइए। ग्रकेले-ही-ग्रकेले गटक गए। हम तो देखते ही रह गए, उमेद-ही-उमेद मे!"

"कहाँ से ? कुछ नही हुग्रा कल बिचारे प्रेम की खोपडी से टकरा गया था मैं। चलो अच्छा हुग्रा घर चल दिया ग्राज।"

करीम चाचा ने पूछा कौतूहल से—"दास्तान कैसी ?"

"चाचा जी, ग्रापसे कोई बात नही छिपाऊँगा, मैंने जरा ग्रंदाज के लिए मँगा ली थी मूड जगाने को। उसी के लिए कह रहे है।"—भन्नन जी बोले।

"तब तो कदम-मे-कदम मिलाकर चलोगे किसी से पीछे नही रहोगे।" करीम चाचा बोले—"मैं इधर खुदादाद सर्कल से ट्राम पकडकर जाऊँगा।"

सभी उनसे नमस्ते कर दादर मेन रोड को चले। घर ग्राकर भन्नन जी बोले—"भाई कल को इस कमरे मे फिनाइल या डी० डी० टी० छिड़ककर कुछ सफाई कर लेनी जरूरी है।"

"क्यों बहम बढाते हैं पडित जी! कुछ नही होता।"—हरीश ने कहा।

वे दोनों रोटी बनाने में जुट गए ग्रौर पडित जी नए सिरे से

कमरे की सजावट में लगे। मेज़ की दराज खोली तो उसमें चार अडे दिखाई दिए। वे बोले—"हरीश, प्रेम बिचारा चार अडे भूल गया यहाँ। मुझे भी याद नही रही।"

"वह कुछ नही भूलता, यही जान-बूझकर रख गया।"—हरीश ने उत्तर दिया।

"यहाँ किस लिए रख गया ?"

"आपको पूरा साहब बनाने के लिए।"—कौशल ने कहा।

"हत्तेरे की ! मैं क्या अडे खाता हूँ ?"

"आप लाल शर्बत भी कहाँ पीते थे ? इससे वह हजम हो जाएगा।"—हरीश ने कहा।

"और उससे यह। अदाज तो कीजिए पडित जी। देखिए फिर कैसी बिजली आपकी नसो से पैदा होती है। आनन-फानन मे एक नही दर्जनो कहानियाँ लिखकर रख देंगे आप।"—कौशल ने कहा।

भन्नन जी ने अडे वही रहने दिए। अलमारी झाडकर उसकी किताबें नए सिरे से लगाईं। सारे कमरे में झाड लगाया। पलग के नीचे बहुत-सा कूड़ा-कबाड जमा हो गया था, वह सब ठीक किया। तमाम जूतो को सिलसिलेवार एक जगह रखा। इनके छुट्टी पाने तक हरीश और कौशल भी खा-पीकर फुरसत पा गए। वे दोनो भन्नन जी के पास आकर बैठे ही थे कि कोट-पतलून डटे हुए एक साहब आ गए।

हरीश और कौशल ने नमस्ते की उससे। फिर हरीश ने उसका परिचय दिलाते हुए कहा—"पडित जी, आप मिस्टर यूसुफ है। बेनू साहब के ड्राइवर।"

"आप मुसलमान है क्या ?"—भन्नन जी ने पूछा।

"नहीं मैं ज्यू—यहूदी हूँ। बाप-दादे यही पैदा हुए और मर गए। मैं कल्याण में रहता हूँ अपनी माँ के साथ, वहाँ मेरा एक भाई रेल में नौकर है। मैं बेनू साहब की नौकरी करता हूँ यहाँ। रोज सुबह-शाम का आना-जाना भी खलता है और ठीक समय पर मालिक का काम करने भी नहीं

आ सकता । बेनू साहब यही डेरा कर लेने को कहते है ।"

भन्नन जी घबराए, बोले—"कहाँ इस कमरे में जगह कहाँ है ?"

"अजी साहब, बम्बई मे किसी कमरे मे जगह नही, सिर्फ समुन्दर में है । ट्रक और अटेची इस पलग के नीचे डाल दूँगा । नीचे फर्श मे सोने को बिछा लूँगा । खाना किसी होटल मे हो जाएगा छुट्टी हुई ।"

भन्नन जी बोले—"अजी ड्राइवर साहब, इस जगह पर तो एक आदमी सोता ही है । अभी एक महीने की छुट्टी में गया है ।"

"कौन प्रेम ? छुट्टी पर गया है क्या ? बीमार है ? एक ही महीने तक सही । फिर बाद को देखा जाएगा ।"—यूसुफ ने कहा ।

हरीश बोला—"कब आ रहे हो तुम यूसुफ भाई ?"

"अगले हफ्ते ।"

"भन्नन जी के जरा ठीक-ठीक साँस चलने लगी । वे सोचने लगे—"सात दिन मे कहानी लिख डालूँगा ।"

यूसुफ बोला—"हरीश, भाई तुमने तो मेरी पोल खोल दी, लेकिन पडित जी की कोई तारीफ नही की ?"

"आप श्री भानुदेव शर्मा हैं । सिनेमा के स्टोरी-रायटर, आपने कई दर्जन किताबें लिख डाली हैं । आप यही हमारे साथ रहते है । हमारे ही सूबे के हैं ।"

"तकदीर खुली मेरी जो आपकी संगत नसीब होगी यहाँ । पडित जी, कौनसी फिल्में निकली हैं आपकी ?"

"अभी तो कोशिश कर रहा हूँ ।"

"अजी मैं ले जाऊँगा आपको । पैदल आप किसी भी स्टूडियो के भीतर नही घूम सकते । मोटर मे चढकर चाहे जहाँ सबसे बातें कर सकते हैं ।"—यूसुफ ने कहा ।

"धन्यवाद ।" मतलब की बात सुनकर भन्नन जी कहने लगे—"आ जाइए यूसुफ भाई, जब आपकी इच्छा हो । जो जगह हमारे एक साथी के जाने से सूनी पड गई थी, वह आपके आ जाने से भर जाएगी ।"

यूसुफ ने जेब से सिगरेट् केस निकाल कर भन्नन जी की तरफ बढा-या, उन्होने धन्यवाद देकर सिगरेट् सुलगाई। हरीश की तरफ बढाने पर उसने कहा—"बस हो गया यूसुफ भाई अभी बीडी फेकी है।"

कौशल ने ले ली एक सिगरेट्। वह बोला—"लेकिन यहाँ जमीन ही मे सोना पडेगा तुम्हे।"

"अरे मै ले आऊँगा चोर बजार से एक सेकिंड हैंड पलग। मैंने देख रखी है। अच्छा मुझे अभी अँधेरी पहुँचना है।"

"क्या गाडी लाए हो ?"

"हाँ सेठ जी का कुछ सौदा ले जाना था। माफ करना जरा जल्दी मे हूँ, बस यही कहने आया था।"—वह चला गया।

उसके जाने के बाद हरीश बोला—"बम्बई में कोई जगह खाली नही रहती। एक जाता है तो चार वहाँ आकर भर जाते है।"

कौशल बोला—"एक तो आ गया यह, तीन अभी बाकी है।"

"अच्छा आदमी जान पडता है यह।"—भन्नन जी ने यूसुफ की दी हुई सिगरेट् बुझाकर कहा।

"हाँ पडित जी ये सब बोल-चाल के अच्छे ही है। जब मतलब पड़ा तभी असलियत खुलती है।"—कौशल बोला।

भन्नन जी ने कहा—"बस सिर्फ कहानी लिख लेने की देर है अब। कही-न-कही ठिकाने से लग ही जाएगी।"

कौशल बोला—"हाँ यूसुफ कह तो गया है, वह मोटर में आपको पहुँचा देगा हर स्टूडियो के भीतर।"

हरीश ने कहा—"लेकिन पडित जी तुमने पूछा नही किसकी मोटर में ले जाएगा वह तुम्हे ?"

"क्यो ?" भन्नन जी चकराए—'उसकी मोटर ?"

"उसके क्या बाप की मोटर है ?"

"बेनू साहब के काम से जब खाली रहेगी तब तो जा सकते है ?"

"खूब कही यह बात आपने ?" हरीश बोला—"और अगर उसी

वक्त उनको जरूरत पड गई तो ?"

"शूटिंग मे जब वे किसी फिल्म में काम करते हो तब तो दो-चार घन्टे की छुट्टी मिल सकती है।"—भन्नन जी ने कहा।

"शूटिंग का राग ग्रभी तुम्हारी समझ में ग्राया ही नही पडित जी, वह देखी भी है ग्रापने ? शूटिंग डायरेक्टर की सनक पर ठहरी रहती है। किसी एक्टर का पार्ट किसी वक्त खतम हो सकता है। न भी हो तो उसके किसी दोस्त को लाने या पहुँचाने के लिए मोटर की जरूरत पड़ सकती है। दोस्त न हो ग्रौर भी बहुत-सी चीजें है जिनको ठीक समय पर लाना होता है।"—हरीश ने कहा।

"होता होगा। हरीश भाई, फिर एक दिन शूटिंग दिखा दो न कही।"—भन्नन जी ने बडी नम्रता से कहा।

"सिनेमा के ज्यादेतर ऐसे ही लोग है बातो के बडे उदार, लेकिन जब काम का समय ग्राता है तो बगलें झाँकने लगते है।"

"मैं किसी का विश्वास नही करता हरीश भाई। सुन लेता हूँ सभी की, ग्रपने ही कर्म पर भरोसा रखता हूँ। जब मेरी स्टोरी मे ही कोई जान न होगी तो भला किसकी मोटर में बैठकर मैं किस प्रोड्यूसर के हृदय में ग्रधिकार कर लूंगा ?"—भन्नन जी बोले।

हरीश ग्रौर कौशल ने खाना खाकर भन्नन जी के लिए रख दिया। फिर हरीश तो ग्रॉफिस मे चला गया ग्रौर कौशल ग्रपनी ग्रग्रेजी की प्राइमर निकालकर बोला—"क्यो पडित जी, मेज पर कितनी देर लिखेगे ग्राप ?"

"बहुत देर तक लिखता रहूँगा। तुम इसी पलग पर कब्जा कर लो।"

"नही जब ग्राप लिख चुकें, मैं तब इस मेज पर सो सकता हूँ।"

"नही, सोए हुए की नीद तोडना मुझे ग्रच्छा नही लगता। ग्रगर स्वर जम गया तो मैं रात-भर लिखता ही रहूँगा।"

'स्वर जमेगा कैसे नही ?"—कौशल ने कुछ रहस्य-भरी मुसकान के साथ कहा।

कुछ मुसकाकर भन्नन जी ने उतर दिया—"अगर ऐसी बात होती तो भाई सभी पीकर लिखने लग जाते। भीतर के मस्तिष्क का विकास ही जरूरी है। बाहर से यह उसको जगाने के लिए एक चिकोटी है।"

दरवाजा बन्द कर कौशल ने भन्नन जी की पलग में अपना बिस्तर बिछाया और किताब हाथ में लेकर लेट गया—"प्रेम पहुँच गया होगा अब बम्बई राज्य की हद के बाहर।"

भन्नन जी कागज पर टूटी-फूटी पक्तियाँ लिख रहे थे। उन्होने जान-बूझकर कौशल की बात का जवाब नही दिया।

कौशल ने फिर कहा—"कल तक इस फर्श पर बिचारा प्रेम रात भर कराहता और खाँसता रहता था। आज एकदम उसको यह जगह खाली कर देनी पडी। अपना सभी कुछ वह ले गया।"

भन्नन जी ने उसे चुप करा देने के मतलब से फिर कोई प्रत्युत्तर नही दिया। झूठमूठ एक नकली एकाग्रता का चेहरा पहन कागज पर लिख-लिखकर काटने लगे।

"उसका कोई निशान बाकी नही रह गया। पुराने छोटे पड गए कपडे और जूता भी उठा ले गया वह। क्या करता गरीब आदमी? घर पर छोटे-छोटे भाई-बहने है। सिर्फ दीवाल पर पडे हुए थे कुछ दाग—"
—कौशल जान-बूझकर चुप हो गया।

अब न रह सके भन्नन जी विभक्त होकर, फौरन् ही उसकी तरफ मुडकर बोले—"कौन से दाग?"

"ये दीवाल पर उस बीमार के थूके हुए दाग पडित जी। कभी-कभी ख्याल इन पर जम जाता है तो इनमें अजीब-अजीब शकलें-सी दिखाई देने लगती हैं, बड़ी विकराल और डरावनी।"—कौशल ने बिस्तर पर उठकर भयानक अभिनय करते हुए कहा।

"यह तो बडी खराब बात है। मैं तो उसे पढा-लिखा और सभ्य समझता था।"

"बीमार पढ़ा-लिखा होने पर भी सब-कुछ भूल जाता है। मैं उसे

बराबर मना करता रहता था पडित जी । लेकिन असल बात तो जब हम बीमार पडते हैं तभी जानते है ।"

पडित जी जरा रोष मे भरकर बोले—"बीमार क्यो पडेंगे हम ? नियम से काम करनेवाला कभी बीमार नही पडता । भगवान् के नियम तोडनेवाले को ही प्रकृति रोग-रूपी दण्ड देती है कौशल इस बात को अच्छी तरह समझ लो ।"

"बुखार की कमजोरी मे बिचारा सिर उठा ही नही सकता था और पडे-ही-पडे थूक देता था ।"

"मैंने उसे ऐसा करते हुए नही देखा ।"

"आपको नीद आ जाती होगी ।"

"बडी गन्दी आदतें थी उसकी, तभी बीमार पडा ।"

"पहले नही था वह ऐसा ।"

"जरूर होगा ।"

"पडित जी रोग के जर्म तो हवा मे उडते रहते हैं, कही से भी आ सकते है । नाई के उस्तरे से, धोबी के यहाँ से धुले हुए कपडो से या जमादार की झाड से उडाई हुई धूल से, मक्खियो से और भी तो हजारो ऐसे जरिए हैं । अगर कभी इन चीजो से वास्ता पड गया तो सभी नियम कायदे आपके धरे नही रह जाएँगे ?"—कौशल बोला ।

"कौशल मैं लिखने का मूड जगा रहा था, तुमने यह किस नरक का दरवाजा खोल दिया ?"

"क्या बताऊँ ऐसे ही बात निकल आई, आप बोल उठे तभी तो । अच्छा अब मैं चुप हो जाता हूँ ।"—कौशल ने किताब बन्द कर मुँह ढक लिया ।

बीस

कुछ देर बाद भन्नन जी को यह विश्वास हो गया कि उसे नीद आ गई तो वे उठे और कबाडखाने से बोतल निकालकर उन्होने उसकी पूरी खुराक निगली बाकी फिर वही रख दी।

मेज पर आकर उन्होने यूसुफ की दी हुई सिगरेट् फिर सुलगाई और ध्यान से कौशल की तरफ देखा। यह जानने को कि उसे नीद आ गई है या नही ? उसके गहरी साँस चल रही थी। एकाएक उनकी दृष्टि वहाँ से प्रेम की सूनी शय्या की जगह पर पडी, वहाँ से वह खिच गई दीवार पर उसके थूके हुए एक धब्बे पर ! छोटा-सा ही तो दाग था वह ! लेकिन एक उपन्यासकार की कल्पना पाकर वह फैलने लगा। भन्नन जी को उसमें एक भयानक दानव दिखाई देने लगा। उसके आँख-नाक, मुँह हाथ-पैर सभी तो—साफ-साफ !

वे सोचने लगे—"कल सुबह होते ही यह सारा कमरा धो डाला जाएगा 'लेकिन ये दीवार और कमरे में इतने दिन से रहनेवाले कीटाणु

क्या अपना काम न कर चुके होगे ?"

नगर का कोलाहल शात हो गया था। भन्नन जी बेचैनी से कमरे मे इधर-उधर टहलने लगे। उनका उद्वेग बढता ही गया। कई बार उनकी इच्छा हुई कौशल को उठाकर उसी समय कमरा धोया जाए, लेकिन खाली पानी के धोने से मतलब ही क्या था! वे इस घोर चिंता मे पड गए कि प्रेम की बीमारी के कीडो ने उनपर भी छापा मार दिया है। व निराश होकर मेज पर दोनो हाथ रख उनमें अपना सिर देकर अपने काले भविष्य को देखने लगे।

इसी समय मानो काली रात के आवरण को चीर कर सूर्य की सुवर्णमई आभा निकल पडी। ऊपर फर्श पर धीरे-धीरे सरिता के नृत्य-चालित चरण बज उठे। पडित जी की तमाम भयानक कल्पनाओ पर मनोहर प्रकाश चमक उठा! उन ठुमको की ताल पर उनका हृदय भी नाचने लगा। उन्होने बिजली की बत्ती बुझा दी। आज फर्श पर उनके लिए कोई ठोकर नही थी।

उनका सारा मानसिक जगत उस छत और लोहे को पारकर ऊपर सरिता के पास पहुँच गया। वे मन में बोले—"ये प्रेम की किरणें ऐक्सरे से भी अधिक सूक्ष्म और शक्तिशाली है। क्या मैं उस नृत्यबाला को नाचता हुआ नही देख रहा हूँ। नही, नही, मेरी कामना ही ने उसे नाचने के लिए विवश किया है। किसी के प्रेम से खिचकर वह अभी ऑफिस के कमरे में जाएगी। क्या उसकी वह चित्र-पूजा कोरा पाखड है ? नही मैं नही मानता। हृदय के सच्चे प्रेम से जो कुछ भी किया जाए वह फलदायक है। मैं भी उस अभिनेत्री को प्यार करूँगा। कोई भी किसी को प्यार कर सकता है—यदि उसकी भावना मे कोई स्वार्थ नही है तो। मैं भी उस सुन्दरी को प्यार करूँगा। बिना प्रेम के कोई कला की साधना फलीभूत नहीं होती।"

अचानक थोड़ी देर बाद ऊपर का नाच समाप्त हो गया। भन्नन जी ने धीरे-धीरे कमरे का द्वार खोला और दबे पैर वहाँ से बाहर निकल

गए । ऑफिस के कमरे के बाहर जाकर खडे हो गए । कमरे में बिलकुल अंधकार था । सावधानी से द्वार पर के जोड पर कान देकर सुना—पूरी जडता छाई हुई थी । भन्नन जी का मन वही पहुँच गया सरिता के कमरे में । उन्होने कल्पना के नेत्रो से उसे देखा, वह सुविशाल दर्पण के आगे अपना शृगार ठीक कर रही थी । नाचने के कारण उसके मस्तक पर के केश अव्यवस्थित हो गए थे उन्ही को वह कानो के पीछे खोस रही थी । होठो पर की कुछ लाली फीकी पड गई थी, उसमे वह नया रंग दे रही थी । नृत्य के श्रम से उसके कपोलो पर कुछ पसीने की बूंदे उभर आई थी । उनमे पखा कर वह फिर से पाउडर लगा रही थी ।

फिर उनका मानसिक आग्रह बढा, वे ऑफिस की सीढियो पर उसके उतरने की ध्वनि सुनने के लिए बेचैन हो गए । पूरे मनोयोग, पूरी धारणा से और पूरे विश्वास से सुनने के कुछ ही देर बाद उन्होने सबसे ऊपर की सीढी पर उसकी आहट सुनी । क्रमश. एक के बाद दूसरी सीढी उतरती हुई सरिता ऑफिस के कमरे मे आ गई ।

भन्नन जी ने कमरे के भीतर परदे के छेद से झाँका, उसने कोई प्रकाश नही किया, लेकिन अस्पष्ट शब्दो में वह कुछ कह रही थी । पंडित जी की कल्पना शराब का वेग पाकर न जाने कहाँ से कहाँ पहुँच गई थी । क्या मालूम क्या सोचकर उन्होने अपने हाथ मे एक चाबी लेकर धीरे-धीरे दरवाजे को खटखटाया । भीतर से आवाज आई—"कौन ?"

"मै हूँ ।"

"कौन ? सुधीर ?"

"हाँ ।"

"इस समय कौन-सी ट्रेन आती है ? मैं न जाने कब से बुला रही थी तुम्हे और मुझे पक्का विश्वास था तुम आओगे ही । लेकिन इतनी रात में कहाँ से ?"—सरिता द्वार के पास आ गई थी और वह द्वार खोलने का प्रयत्न करने लगी थी ।

"प्रेम की ट्रेन बराबर चलती रहती है । उसके मार्ग मे रात, ठीकर

और काँटे कुछ भी नही हैं ।"

सरिता ने द्वार खोलकर भन्नन जी का स्वागत कर कहा—"हाँ, इसीलिए तो मैंने प्यार के लिए केवल तुम्हे ही छाँटा ।" उसने उनके कधे पर अपना कोमल हाथ रख दिया ।

सारा कमरा सरिता के अग और वस्त्रो की सुगधो के सम्मिश्रण से महक रहा था । कुछ सुध पडित जी की शराब ने छीन ली थी कुछ उस अन्धकार में एक सुन्दरी का स्पर्श और प्रेम सम्बोधन पाकर चली गई । कदाचित् उनके लिए कुछ भी बाकी नही रहा ।

"सुधीर ! ओह ! तुम उस तरह मुझे छोडकर चल दोगे यह तो नही जानती थी मैं, लेकिन तुम इस तरह मेरे पास लौट आओगे इसका जरूर भरोसा था मुझे ।"—शायद सरिता भी प्रेम के सिवा किसी और मादकता मे थी ।

भन्नन जी क्या जवाब दे, यही सोचते रह गए । बिजली के बटन को दबाकर बिना शब्द-व्यय के वे सत्य को प्रकाशित करने के लिए इधर-उधर हाथ बढाने लगे । लेकिन उन्हे उसकी स्थिति अज्ञात थी ।

सरिता ने उनके कधे पर अपना मस्तक रख दिया—"क्यो ? सुधीर ! तुम चुप क्यो हो ? क्या इतने दिनो से बिछुडने के बाद तुम सब-कुछ भूल गए ? चलो ऊपर ।"

इसके आगे अब भन्नन जी का साहस न बढ़ सका । उन्होने अपने कंधे पर से सरिता का हाथ हटाकर कहा—"मैं आपकी कहानी लिखने आया हूँ ।"

"इस रात में मेरी कैसी कहानी ?"

"दिन में मेरे जैसों को आपके दर्शन कहाँ मिल सकते हैं ?"

"कौन है तू ?"—खीझकर सरिता बोली ।

"हरीश के कमरे में रहता हूँ मैं आप जिस दिन प्रेम को देखने आई थी आपने मुझसे मिलने की बात कही थी ।"

"वह जो धोती पहनता है और भग पीता रहता है । वही है तू ?"

"हूँ तो वही, लेकिन मैंने अब पतलून पहननी शुरू कर दी है। और भग पीनी भी छोड दी है।"

"फिर क्या पीता है ?"

"कुछ नही।"

सरिता ने खीचकर एक थप्पड जड दिया भन्नन जी की गाल पर—"झूठा बदमाश ! तू क्या कहानी लिखेगा मेरी ? तेरे मुँह पर मैने सस्ते नशे की बदबू पहले ही सूँघ ली थी।"

भन्नन जी गाल पर हाथ रखकर धीरे-धीरे बोले—"मुझे माफ कीजिए, ज्यादे शोर न मचाइए।"

"जा चला जा।"

द्वार पर साँकल नही पडी थी, वैसे ही बद था। भन्नन जी चुपचाप उसे खोलकर चले गए। सरिता हँसी—बेवकूफ कही का ! मेरे प्रेम का धोका बनकर चला आया मेरी कहानी लिखने। कब कहा मैंने इससे मेरी कहानी लिख दे। एक्ट्रेस चौबीसो घटो में सैंकडो बाते कहती है, क्या वे सब-की-सब सही होती हैं ? उसे कई तरह का मेक-अप बनाकर कई तरह के डायलॉग बोलने पडते है।" सरिता ने द्वार बंद कर साँकल चढा दी।

उस अँधेरे मे रूपगर्विता वह नटी धीरे-धीरे पुराने अभ्यास की विश्वस्त सीढियो पर चढती चली। वह अपने कमरे मे आई, वहाँ बिजली जगमगा रही थी। वह अपने विशाल दर्पण के आगे जाकर खडी हो गई। उसने उसमे अपने प्रतिबिंब को देखा। वह फिर मुसकाई, भन्नन जी पर की उसकी घृणा अब लज्जा मे बदल गई थी। अवसन्न होकर उसने मन मे सोचा—"गरीब पर दया आनी चाहिए थी मुझे, यह क्या कर दिया मैंने ? अफसोस है स्टोरी-रायटर, तू सिनेमा के भीतर राजा बना होता। क्योकि तेरी ही कहानी के ऊपर सबका दारोमदार था, लेकिन तेरी छोटी-छोटी खामखयालियो ने तुझे बहुत छोटा बनाकर रख दिया। तुझे जब खुद ही अपने स्वरूप का ज्ञान नही है तो फिर दूसरे को कैसे

होगा ?" वह बिजली बुझाकर सो गई।

एक एक्ट्रेस के हाथ का चाँटा खाकर जब भन्नन जी अपने कमरे को लौटे तो उनका सारा नशा काफूर हो गया था। धीरे से द्वार खोलकर उन्होने मेज पर अपना बिस्तर बिछाया और चुपचाप सो गए लेकिन आँखो में नीद कहाँ ? आज वे प्रेम के सिर की उस ठोकर को वरदान समझने लगे। अगर पहले दिन प्रेम न जाग उठा होता तो शायद यह चाँटा उन्हे एक दिन पूर्व ही मिल जाता।

वे सो जाने के लिए बार-बार कोशिश करने लगे, लेकिन जीवन का सबसे भयानक अपमान सहन कर कैसे नीद आ जाती ?—वे सोचने लगे—"अब सुबह होते ही यह खबर तमाम कोठी में फैल जाएगी और शाम होते ही बम्बई के समस्त फिल्म-जगत में ! हे भगवान, क्या हो गया था मुझे ? कौन-सा शैतान सवार हुआ मेरे सिर पर ?"

फिर करवट बदली उन्होने—"सरिता जरूर मेरे साथियो से मुझे इस कमरे से निकलवा देने को कहेगी। लेकिन मैं निर्दोष हूँ। मैं किसी बुरी नीयत से सरिता के पास नही गया था। केवल उससे उसकी कहानी माँगना ही मेरा खास मतलब था · पर कौन इस बात का विश्वास करेगा ? जो भी सुनेगा, वह यही कहेगा, इस कहानी-लेखक का मुख्य उद्देश्य सरिता को छेडना और उसके शील के अपहरण के सिवा और क्या हो सकता है···क्या करूँ अब कहाँ जाऊँ ? कितनी आशाएँ और उमगें लेकर मै यहाँ आया था वे सब-की-सब एक एक्ट्रेस के एक ही चाँटे मे समाप्त हो गई।"

फिर ठडी साँस ली उन्होंने—"क्या करूँ ? अगर कोई झूठे ही बद-नाम करे तो मुझे पूरी ताकत से उसका विरोध करना चाहिए। मै कहूँगा सरिता ने मुझे खुद ही कहानी लिखाने को बुलाया था। मै हरीश और कौशल को गवाह बनाकर रख दूँगा। उन्हे जरूर अपने एक देशवासी की मदद करनी पडेगी। · नही, इस तरह आत्मरक्षा से कुछ न होगा। मुझे सुबह उठते ही किसी वकील के मार्फत उस घमडी एक्ट्रेस को एक नोटिस

देकर उसका दर्प चूर्ण करना होगा। मैं उस पर मानहानि का दावा करूँगा।···लेकिन वकील को देने के लिए रुपए चाहिएँ। कहाँ से लाऊँगा? नही, कोई और उपाय करना चाहिए। चुप ही रह जाऊँ तो क्या हानि है?"

उस अपमान की निशा मे सभी जान-पहचान के याद आए उन्हे। खिन्न होकर कभी वे सोचते, रेल की पटरी पर सो जाएँ। कभी समुद्र मे कूद जाने को उनका जी करता। फिर भग्गो की याद आने पर अपनी उस कल्पना को धिक्कारने लगे—"उस बिचारी का क्या अपराध है जो मैं जान-बूझकर उसे वैधव्य का इतना कठोर दड देने जा रहा हूँ। नही, भानुदेव, तू इतना कायर नही है। अगर इतना कायर है तो जरूर तूने भारी पाप किए है।"

इसी प्रकार सकल्प-विकल्पो से सारी रात कट गई। अब तो शहर मे चहल-पहल जाग उठी। ट्राम और ट्रेन के पहिए लोहे की पटरियों पर लुढकने लगे और सडको पर भोपू बजाती हुई मोटरें दौडने लगी। लोगो में कही नौकरी-चाकरी की और कही खाने-पीने की भाग-दौड मच गई।

भन्नन जी, उस कोठी में सबसे पहले उठ जानेवाला आदमी, अभी तक नही उठा। अडे और रोटीवाला आवाज देकर चला गया, कौशल ने मुँह खोलकर देखा, भन्नन जी अभी तक सोए ही थे। ऊँची अट्टालिका के ऊपरी हिस्सों पर धूप चमक उठी थी। वह उठ गया। बिस्तर लपेट-कर रख दिया उसने। भन्नन जी के पास आकर कहने लगा—"क्या बात है पंडित जी, सूरज सिर पर आ गया और आप अभी तक नही उठे। क्या सारी रात लिखते रहे?"

भन्नन जी तो जाग ही रहे थे। नीद से जागने का बहाना करते हुए बोले—"नही भाई, कुछ नही लिखा।"

"फिर उठ जाइए और रोज तो आप चार ही बजे उठ जाते थे, आज क्या बात हो गई?"

"क्या बताऊँ? बुखार आ गया।"

"कैसा बुखार ?"

"जैसा प्रेम को आ गया था।"

"वैसा बुखार क्यो आने लगा आपको ?"

"कौशल, इन दीवारो पर उस बुखार के चित्र अकित है । वे सबके सब मेरे शरीर के भीतर प्रवेश कर गए।"

"ऐसे बहका नही करते, उठो। मैं चाय के लिए दूध लाता हूँ।"

कौशल मुँह-हाथ धोकर चाय के लिए दूध लेने चला गया। मार्ग में उसने देखा, हरीश का कमरा खुला था, वह उठ गया था और अपने बिस्तर को लपेट रहा था।

"क्यों आज तो बडी जल्दी उठ गया ? सेठ जी के यहाँ हाजिरी देनी है ?"—कौशल ने पूछा।

हरीश ने बिस्तर एक सोफे के नीचे डाल दिया और हाथो से अपनी हँसी को दबाकर बोला—'क्या बताऊँ रात बडा मजा आया।"

"क्या कही पिक्चर देखने गया था ?"

"यही बडी पिक्चर देखी।"—हरीश के मुख पर एक रहस्यभरी हँसी प्रकट हुई।

"कौनसी ?"—कौशल बडी दिलचस्पी लेकर सोफे पर बैठ गया।

हरीश ने एक बीडी उसे दी और अपने मुँह की सुलगाता हुआ बोला—"कहानी भन्नन जी की थी और हीरोइन थी मिस सरिता।" हरीश सोफे पर कौशल की बगल मे बैठ गया।

कौशल ने उसकी जली हुई बीडी के मुख से अपनी बीडी सुलगाई। उसकी बीड़ी लौटाकर उसके कधे पर हाथ रख धीमे स्वर मे बोला—"क्या-क्या ? क्या बात हो गई ?"

"मैं समझता था, भन्नन जी कुछ न जानते होगे भाई इनपर तो कुछ ही दिन मे फिल्मी दुनिया के सारे रग समा गए।"—फिर कुछ हँसा हरीश।

कौशल ने हरीश की बाँह पकड़ी—"पी-पाकर कही सरिता के कमरे

में तो नही घुस गए ?"

"नही, यही ऑफिस में । कहानी की शुरूआत मुझे मालूम नही आखिर का हिस्सा मालूम है। दोनो की बातचीत से मेरी नीद टूट गई। ऑफिस में कौन घुस आया, यह देखने को मैं अपना दरवाजा खोल बाहर आया। उधर जाकर देखा—भीतर बिलकुल अँधेरा था। भन्नन जी कह रहे थे कि उन्होने भग पीनी छोड दी है। सरिता गुस्से मे थी उसने पूछा —फिर क्या पीता है ? पडित जी का जवाब था—कुछ नही पीता। उनके मुँह से इन लफ्जो के निकलते ही मैंने एक जोर के चाँटे की आवाज सुनी। अँधेरे में देखा कुछ नही, लेकिन अदाज है—हाथ सरिता का था और गाल भन्नन जी का। फिर भन्नन जी के शब्द थे—मुझे माफ कर दो, ज्यादे शोर न मचाओ, पडोसी जाग उठेंगे।"

दाँतो के नीचे जीभ दबाकर कौशल कहने लगा—"बाप रे ! ये इस कमरे में घुस कैसे गए। सरिता ने खोला क्यों कमरा ?"

"इसी राज को समझने की कोशिश कर रहा हूँ। उठ गए या नही ?"

"नही, कहते है मुझे बुखार आ गया।"

"यही रात का बुखार है और कुछ नही।"

"चलो जाकर पूछे उनसे।"

हरीश ने कौशल का हाथ पकड लिया—"नहीं अभी कोई जरूरत नहीं। देखें खुद क्या कहते हैं।"

कौशल ने कहा—"तुम चलो कमरे मे, मैं दूध लेकर आता हूँ।" वह बाजार को गया।

हरीश ने कमरे मे जाकर भन्नन जी को उठाते हुए कहा—"क्यों पडित जी उठोगे नही ?"

"भाई मेरे तो प्रेम का बुखार चिपट गया।"

"प्रेम का बुखार ? प्रेम का बुखार कैसे चिपट गया ? किससे प्रेम करने गए आप रात को ?"—हरीश के मुंह से निकल ही तो पडा। इसके बाद ही उसे अपनी लापरवाही का पछतावा होने लगा।

भन्नन जी बोले—"तुम्हें हँसी सूझी है, यहाँ प्राणो पर बनी है।"

"देखूँ तो।" हरीश ने उनकी नाडी पर हाथ रखकर कहा—"रात बड़ी देर तक जागते रहे क्या ? उसी की खुमारी है।"

"रात कहाँ जागता रहा ? ग्यारह-बारह बजे सो गया था।"

"उठिए, मुँह-हाथ धोकर चाय पीजिए, सारी हरारत अभी ठीक हो जाएगी।"

भन्नन जी को उठना पडा। आज उनके मुख पर वह आलोक नहीं था। नीची-नीची आँखो मे वे अपना बिस्तर उठाने लगे।

हरीश कहने लगा—"आपकी पलग पर भी कब्जा कर लिया कौशल ने। अव्वल दरजे का खुदगरज़ है यह।"

"नही हरीश भाई, मैंने उससे पलग पर सो जाने को कहा।"

"मैं स्टोव जलाकर चाय रखता हूँ, कही जाना नही है क्या आपको ? दयाल भाई को पटा लीजिए, उन्हे कोई धार्मिक कहानी लिखकर दे दीजिए—वे सज्जन आदमी हैं।"

हरीश स्टोव जलाने लगा। कौशल दूध लेकर आ गया था।

भन्नन जी जब शौच से लौटकर गुसलखाने में मुँह-हाथ धोने गए तो हरीश और कौशल गुम-सुम होकर कुछ बातें कर रहे थे। पडित जी को आता देखकर वे सहसा चुप हो गए। उनके मन मे वहम बैठ गया। सोचने लगे—"ये जरूर मेरी ही चर्चा कर रहे है।"

इसके बाद चाय पी लेने पर परसी उस कमरे में आए। भन्नन जी ने उन्हे वहाँ आता हुआ कभी नही देखा था। उन्होंने इशारे से हरीश को बुलाया और दरवाज़े के बाहर लेजाकर कुछ देर तक बहुत मद स्वरों में बातचीत की। पडित जी के मन का भीतरी चोर बोल उठा—"ये तेरी ही रात की बातें कर रहे हैं। अब क्या होगा ? जो हुआ, वह हो गया होता। दबा-छिपा रह जाता। इस तरह ढिंढोरा पिट गया। कैसे कुछ हो सकेगा अब ?"

जब हरीश लौटकर भन्नन जी के पास आया, उसके मुख में एक

घनी छाया थी। उन्होने पूछा— "क्यो हरीश, क्यां बात है ? क्या कहा परसी बाबू ने ?"

"कुछ नही पडित जी, ऐसे ही।"

भन्नन जी के शक बढ गया। मुँह-हाथ धोने और चाय पीने से जो ताजगी आई थी उनके, वह गायब हो गई। वे पलग में अपना बिस्तर बिछाने लगे। कौशल अपने सेठ की मोटर धोने चला गया था और हरीश चूल्हे पर दाल चढा रहा था। करीम चाचा आ पहुँचे। हरीश की और उनकी कुछ देर गुन-गुनाकर कानो-कान बातें हुईं। भन्नन जी मुँह ढककर सुन रहे थे सब-कुछ, लेकिन वे शब्द उनकी समझ से बहुत दूर थे। मन मसोस कर रह गए वे। यही कल्पना करने लगे—"य दोनो अब मेरी ही बाते कर रहे है। एक कहानी-लेखक एक एक्ट्रेस के हाथ का चाँटा खा गया और उसने चूं तक नही की ! आश्चर्य की बात ! सब यही सोचते होगे जरूर उसकी भूल होगी। धिक्कार है, ऐसे जगत पर और उससे भी पहले मेरे ऊपर ! उस भयानक रात मे मैं आधे होश मे क्यो उसके द्वार पर गया ? मै लाख गया, उसने क्यो द्वार खोल दिए। हे भगवान् ! मैं तेरी शरण हूँ। इस गरीब की लाज रख !"

भन्नन जी के पास आकर करीम चाचा बोले—"क्यो पडित क्या बात है ?"

"चाचा जी, मुझे वही बीमारी हो गई जो प्रेम को हो गई थी।"—इस बार भन्नन जी ने होशियारी से शब्दो की जगह बनाई।

"किसी के दुश्मनो को भी न हो वह बीमारी। उठो, कुछ नही हुआ तुम्हे।"

"उठने में सिर झनझना रहा है।"

"कल रात ज्यादे पी गए होगे पडित। उसी की खुश्की होगी, अभी नए मुरीद हो। धीरे-धीरे ही बात बैठेगी। कुछ तुम उसे जानोगे, कुछ वह तुम्हारा मिजाज पहचानेगी। एक रास्ते से दूसरे रास्ते मे कूद जाने का यही खतरा है। भग पीने के आदी थे, किसने राय दी तुम्हें शराब

पीने की ? गलत राय दी। तुमसे कुछ छिपाता थोडे हूँ—मैं भी पीता हूँ और आजकल पीना कुछ फैशन भी है और उसका इस्तेमाल भी। लेकिन ढंग से पीता हूँ। वखत और खुराक दोनो को बाँधकर। मैं खुली तबीयत रखता हूँ, जो करता हूँ कहता भी हूँ उसे, छिपाने से मतलब ?"

"चाचा जी आप लोग क्या बात कर रहे थे ? हरीश के साथ अभी।"

"कोई खास बात नही।"—कुछ उलझकर करीम चाचा ने टूटे लफ्जो में कहा।

"फिर भी ?"—पडित जी ने मुँह खोलकर पूछा।

"यही दुआ-सलाम ·· हाँ याद आया, यही तुम्हारे देर तक सो रहने का सबब दरयाफ्त किया।"

"नही चाचा जी।"

"पूछ लो हरीश को बुलाकर।"

हरीश ने सब-कुछ सुन लिया था। वह खुद ही वहाँ पर आकर बोला—"हाँ, यही तुम्हारी तबीयत का हाल पूछ रहे थे।"

"और परसी बाबू ने क्या कहा तुमसे ?"—पडित जी ने फिर पूछा।

"लेकिन मैं मना लूंगा उन्हे।"—हरीश ने जवाब दिया।

अब तो भन्नन जी को पक्का विश्वास हो गया उनकी रात की बात खुल गई। वह और भी नगी हो जाएगी, इस डर से भन्नन जी और आगे कुछ न बोले। फिर मुँह ढककर सो गए और कराहने लगे। करीम चाचा ने कहा—"हरीश, चलो अस्पताल ले चलें इन्हे।"

हरीश ने नाक-भौंह मरोडकर कुछ चुप इशारा दिया। फिर बोला—"झूठे ही बहम बढाकर कुछ नही होता। सोने दे इन्हे। आराम कर लेने से ठीक हो जाएगी तबीयत।"

दोनों फिर खाना बनाने की मेज पर चले गए। भन्नन जी के कानो में फिर उनकी गुनगुनाहट गूँज रही थी, जब कि वे दोनो चुप भी थे।

रोटी बनाकर हरीश पंडित जी के पास गया। कौशल भी आ पहुँचा था। हरीश ने पूछा—"क्यों पडित जी गरम-गरम भोजन कर

लीजिए।"

"नही आप लोग खा ले। मै कुछ न खाऊँगा इस समय।"

ऐसा ही किया गया। कौशल खा-पीकर अपनी नौकरी पर चला गया। करीम चाचा ने बेनू साहब के लिए चाय बनाई, वे आ गए थे। उन्हे चाय पिलाकर एक गिलास में चाय लेकर वे भन्नन जी के पास पहुँचे—"लो पडित, थोडी सी चाय पी लो। घबराओ नही, हम लोग तुम्हारे साथ है, तुम स्टोरी-रायटर होकर बड़ा कमजोर दिल रखते हो।"

"चाचा जी, आप महान् व्यक्ति है।" भन्नन जी बिस्तर पर उठ बैठे—"आपका स्वभाव और आपका निस्वार्थ स्नेह कभी भूला नही जा सकता।"

"बेनू बाबू चले गए, मैं भी जाता हूँ घर पर कुछ काम है। एक बात करो। काँटे को काँटा ही निकालता है। नशे के जहर को नशा ही मारता है। मेरी समझ मे तुम थोडी सी पी लो। है कुछ ? नही तो मै ला देता हूँ कही से। तकल्लुफ करने की जरूरत नही है।" भन्नन जी के माथे पर हाथ रखकर करीम चाचा ने कहा—"बुखार बिल्कुल नही है तुम्हारे।"

"आप जाइए चाचा जी, मै अब ठीक हो जाऊँगा।"

करीम चाचा चले गए। कुछ नीद आ जाने से भन्नन जी की रात की खुश्की दूर हो गई थी। अब उन्हे भूख भी लग गई थी। इधर-उधर देखकर उठे वे। चाचा जी की तजवीज पर दिल जमा उनका। बाहर जाकर देखा कोई नही था। भीतर आए। खाने-पीने को कुछ रख दिया है या नही ? देखा कुछ भी बचा नही था। ज़ल्दी से एक चीनी के प्याले में कुछ शराब ढाली। भूख सताने लगी थी, कुछ था नही, अंडो की याद आई। डॉक्टरो ने प्रेम को बता रखे थे, पडित जी ने सोचा, उनकी दवा हो गई। दो अडे तोड कर प्याले में डाले और पी गए। छिलके एक कागज की पुड़िया मे बाँध कर कूडे के कनस्तर में डाल दिए, प्याला धो-कर यथास्थान रख दिया और बोतल कबाड़ के बीच मे। अपने फिर

बिस्तर के भीतर।

कुछ देर में हरीश ने आकर पूछा—"क्यो पंडित जी, कैसी है तबीयत ?"

"पहले से ठीक है। हरीश बाबू, परसी बाबू ने क्या कहा मुझे बता दो सही-सही, मुझे बडी बेचैनी है।"

"हम भी कुछ कम नही। उनसे किसी ने जाकर यह कह दिया कि प्रेम के बडी खतरनाक बीमारी थी, और वही बीमारी आपको लग गई है। उन्होने आपको सोया देख लिया है। वे कहते है आपको कही दूसरी जगह चला जाना चाहिए वे हम सबसे भी यहाँ से जाने को कह रहे हैं।"

"अच्छा, यह बात है।" वह उठकर खडे हो गए। उन्होने बिस्तर तहकर लिया—"जरा-सी रात की खुमारी से सो गया था, उनसे कह देना कोई बीमारी नही है उनके।"

"मैंने ऐसा कहा, बड़ी खुशामद की, वे नही मान रहे हैं।"

"क्या होगा फिर ?"

"कही ढूढेंगे मकान और क्या ?"

"अच्छा मैं भी दयाल भाई के स्टूडियो में जाता हूँ शायद वे वहाँ कोई जगह दे दें।"

"लेकिन आपने कुछ खाया नही है। आपके हिस्से की रोटियाँ हमने करीम चाचा को खिला दी। आपने वैसा कहा उस वक्त।"

"बम्बई में खाने की क्या चिन्ता है, खालूंगा किसी होटल मे।"—भन्नन जी पतलून डाटकर चल दिए। नशे ने उनके उत्साह बढा दिया था।

न्यू स्टूडियो पहुँचने पर भन्नन जी की दयाल भाई से भेंट हुई, वे बोले—"मैं आपके लिए बहुत बढिया कहानी लिख रहा हूँ। जरा मेरे रहने की अड़चन हो गई है, अपने स्टूडियो मे कही भर एक कमरा दे दीजिए।"

"पंडित जी, जगह की तो बड़ी किल्लत है बम्बई में, इसके लिए तो

आप हमें माफ कीजिए। हाँ, स्टोरी के लिए आप हमारे डायरेक्टर से बात कर लें।"

"सेठ जी, मैं तो बड़ी आशा से आपके पास आया हूँ।"

"क्या करूँ मैं लाचार हूँ।"

"मैंने सुना था, आप किसी से ना ही नहीं करते।"

"अब हाँ भी नहीं कर सकता, दुनिया से बहुत डरने लगा हूँ। अब बडी भीड इस इडस्ट्री के भीतर हो गई है। तुम जाओ उधर उस इमारत में दो मजिले पर हमारे डायरेक्टर अपना मेक-अप कर रहे हैं। आज शूटिंग है और उनका भी एक पार्ट है।"—सेठ जी मोटर में बैठकर चल दिए।

भन्नन जी को दूसरा मार्ग ही नहीं था। ऊपर जाकर उन्होंने डायरेक्टर से नमस्ते की—"मुझे सेठ जी ने आपके पास भेजा है। मैं स्टोरी-रायटर हूँ। उन्होंने मुझसे कोई पौराणिक कहानी लिखनें के लिए कहा था।"

डायरेक्टर ने केवल सिर हिलाया। वही भन्नन जी की जान-पहचान का मेक-अप-मैन स्पिरिट गम से उनकी ठोडी पर दाढी के बाल चिपका रहा था। भन्नन जी ने देखा उसके हाथ बराबर कांप रहे थे और वह उस दिन कह रहा था—"जब मैं पीता था तो मेरे हाथ कांपते थे, अब मैंने पीना छोड़ दिया है, बड़ी भयानक चीज है यह सस्ती शराब।"

डायरेक्टर ने भन्नन जी के बैठने की कोई परवा नहीं की। वहाँ पर कोई कुरसी भी नहीं थी कि वे स्वयम् बैठ जाते। बडी देर के बाद डायरेक्टर बोला—लेकिन स्टोरी-रायटर जी, कहानी तो हम छाँट चुके, अब इस समय कुछ नहीं चाहिए।"

बडी निराशा के साथ पंडित जी बोले—"उसके बाद भी तो आप कोई कहानी लेंगे।"

"भाई, अभी छै-सात महीने तो इसी में लग जाएँगे, उसके बाद आना। बडी रुखाई से डायरेक्टर ने कहा और घूमनेवाली कुरसी पर घूम कर उसने अपना मुँह फिरा लिया। मेक-अप-मैन उसके दूसरी तरफ बाल

चिपकाने लगा। उसका हाथ काँप रहा था और उसी तरह भन्नन जी के पैर भी काँपने लगे। यह अपमान वे सह न सके और धीरे-धीरे उतरकर चल दिए। न पतलून ही उनके काम आई, न शराब की उमग ही। एक अँधेरा-सा उनकी आँखो में छा गया और बडे वैराग्य को लेकर वे डेरे में लौट आए।

मार्ग मे सबकी ओर दृष्टि करने पर यही समझने लगे, वे सबके-सब उन्ही की बातें कर रहे हैं। मन मे उनके फिर यही भावना जाग उठी कि बुखार चढने लगा। जीवन में ऐसी निराशा उन्होने कभी अनुभव नही की थी। भोजन के लिए न्यू स्टूडियो जाते समय रुचि थी, लेकिन लौटते समय तिरोहित हो गई। गिरते-पडते घर पहुँचे तो हरीश ने उन के हाथ में एक पीला लिफाफा रखते हुए कहा—"पडित जी, यह तार आया है आपके नाम। मैं तो इसे लेकर खुद न्यू स्टूडियो आने का विचार कर रहा था।"

तार खोला उन्होने। उसमें लिखा था—"भग्गो सख्त बीमार है, फौरन् चले आओ—गोपाल।" खडे न रह सके भन्नन जी। फर्श पर बैठ गए दोनों हाथों से माथा पकड कर।

हरीश पर जब यह सत्य प्रकट हुआ तो वह बोला—"आफतें एक साथ आती हैं पडित जी, लेकिन साहस से उनपर काबू पाया जा सकता है। क्या सोचते हो?"

"एक ही राह है, जिस शक्ति से बम्बई ने खीचा था उसी से अब यह धक्का देकर दूर फेंक रही है, फौरन् ही घर चल देना चाहता हूँ, लेकिन—पैसा नही है।"

"घर से मँगा लो तार भेजकर।"—हरीश ने कहा।

यही किया गया। भन्नन जी उसी समय फिर बुखार का बहाना कर सो गए। उन्होंने हरीश से कहा—"भाई, मुझे कुछ लिखने-पढ़ने की ताकत नहीं है। ये पैसे हैं, किसी से तार लिखवाकर भेज दो मेरे घर को।"

पता लिखवा दिया उन्होंने। मजमून लिखाया—"फौरन् ही तार से

पचास रुपए भेज दो—भानुदेव।" हरीश जाकर उसी समय तार भिजवा आया। भन्नन जी बड़ी व्याकुलता से तार के मनीआर्डर की प्रतीक्षा करने लगे।

हरीश कही बाहर चला गया था और भन्नन जी अपने विचारो के साथ उस कमरे मे अकेले ही थे। फिर रात का वह भयानक अपमान उनके हृदय में जाग उठा। वह बृहदाकार होकर एक दानव की तरह उनके सामने खडा हो गया।

उन्होने मन-ही-मन उससे प्रश्न किया—"तू मेरे किस पाप का फल है ?"

अपमान का वह दानव हँसकर बोला—'तेरा कोई पाप नही है।"

"तू मेरा झूठा अहकार है, आँखो मे धूल झोककर तू मुझसे सत्य को छिपा रहा है। मेरे प्राणो मे बडी गहरी चोट लगी है। कहानीकार की रेखाओ पर नृत्य करनेवाली नटी अपने सर्जक की गाल मे थपड मार दे, इससे अधिक दर्प की बात और क्या हो सकती है ? मै उसके दर्प को चूर्ण कर दूँगा।"

अपमान ने उतर दिया—"कैसे ? तू एक परदेसी है, तेरी यहाँ कोई स्थिति नही, तेरी बात का कोई विश्वास नही करेगा। वह एक सुन्दरी है—सबकी परिचित और सबके बीच में यश पाई हुई। किसकी जीत होगी ?"

"मेरी तरफ सत्य है।"

"मेरे मस्तिष्क में शराब का नशा था। वह क्या सत्य है, संसार के सभी महजब उसकी अवहेलना करते है।"

भन्नन जी के भीतर उनकी अतरात्मा बोल उठी—"जो मनुष्य अपनी पराजय के लिए दूसरे को कारण समझता है, उसकी कभी विजय नही हो सकती। उस नटी का क्या अपराध है ? तुमने झूठी आवाज देकर उसे बहका दिया। तुमने फिर उसके सामने जाकर झूठ बोली। उसका क्या अपराध है ?"

भन्नन जी ने निश्चय किया —"यह अपराध शराब का ही है, उसी ने ही मुझे पथभ्रष्ट कर दिया, उसी ने मेरे विवेक पर छाया डालकर मुझे भ्रमित कर दिया।"

वे तुरन्त ही कबाडखाने से उस बोतल को निकाल लाए। खिडकी के प्रकाश के विरुद्ध खडाकर उन्होने बोतल मे उसकी रेखा को देखा—"यही है वह सर्पिणी, इसी ने मुझे मदहोश कर मेरा अपमान कराया। अब मैं इसका सिर कुचल कर ही रहूँगा।"

शराब बोली—'क्या मेरा सिर कुचल कर ही रहोगे ? इस एक को तोड़ देने से क्या होगा ? मैं रक्तबीज हूँ। मेरी एक-एक बूंद से सौ-सौ बोतले उपज जाती है।"

"चुप चांडाली !"—भन्नन जी ने आवेश में आकर उस बोतल को फर्श पर पटक दिया। वह कई टुकडो में टूट गई और शराब भूमि पर बह गई। सारा कमरा उसकी बू से महक उठा।

फिर तुरन्त ही पछतावे के स्वर मे उन्होने कहा—"यह क्या कर दिया मैने ? इस बोतल को तोड देने से क्या हो गया ? मुझे अपने मन पर अधिकार करना चाहिए। इसको पीने के लिए जो लालसा है उसे तोडना चाहिए।"

शराब बोली—"अब कही तुमने सही बात। शराब का क्या कसूर है ? उसका जो गुण है वह दिखावेगी ही। वह मदहोश करेगी, वह उन्मत्त करेगी। पीनेवाले के भीतर जो विवेक है वह उसे क्यो नही काम में लाता ?"

भन्नन जी ने जल्दी-जल्दी एक-एक कर काँच के टुकडे बीनकर कूडे-दान में डाल दिए और कमरा पानी से धो दिया। फिर उन्होने अपने से प्रश्न किया—"तूने क्यों पी शराब ?"

उन्होंने कहा—"भग क्यो पीता है तू ?"

"कैसा बेहूदा प्रश्न करते हो तुम। भग पीता है, बरसो से पीता चला आया हूँ इसलिए पीता हूँ। तुम यह भी पूछोगे, रोटी क्यो खाता है ?"

"रोटी जीवन के लिए खाई जाती है।"

"तो भग जीवन मे रग देने के लिए।"

"यह झूठा रग है, भग एक नशा है। शराब की तरह वह भी त्याज्य है।"

"नही वह सात्विक नशा है, उससे सरस्वती जाग उठती है। उससे एकाग्रता प्राप्त होती है जो साहित्य और कला का मूल आधार है।"

भन्नन जी का विवेक बीच में पडकर बोला—"नशे सब एक ही से हैं, सब ही मेरे ऊपर आवरण डाल देते हैं। नशे को सात्विक कहना अपने को धोका देना है।"

भन्नन जी को बुखार-सा चढता जान पडा। सुबह से कुछ खाया भी नही था। वे बिस्तर पर पड गए और विचार करने लगे—"कला मन पर अधिकार करने से जागनी है। नशा नि सन्देह मन का मैल है। मेरा साहित्य रहे या जाए, मुझे इसी घडी नशे के त्याग की प्रतिज्ञा करनी चाहिए।"

तमाखू हाथ जोडता हुआ उनके सामने आया—"हे देव, अपनी प्रतिज्ञा में मेरा नाम मत लिखना। मैं और मेरा साथी चूना हम दोनों गरीब आदमी हैं, हमें न बिसारना। छोडना ही है तो सिगरेट्-बीड़ी छोड़ देना उनके साथ दियासलाई का भी खर्च है।" भन्नन जी ने उसे आश्वासन दे दिया।

भग की देवी सामने आई—"फिर मैंने क्या कसूर किया है? आदि देव भगवान् सदाशिव ने मुझे शरण दे रखी है। तुम्हारी चिरंसगिनी हूँ मैं। देखो, सोच-समझकर करना प्रतिज्ञा।"

भन्नन जी ने कोई प्रतिज्ञा नही की। हरीश आ पहुँचा—"क्यो पंडित जी क्या हाल है?"

"बुखार आ गया।"

"मनीआर्डर तो नही आया?"

"नही।"

हरीश ने उनके माथे पर हाथ रखकर कहा—"न खाने से पित्त चढ गया है। भूख नही लग रही है क्या ?"

"कुछ-कुछ लग रही है।"

हरीश चाय बनाने लगा। कुछ देर मे कौशल भी आ पहुँचा। वस्तु-स्थिति का पूरा पता लगने पर उसने उदास होकर कहा—"पडित जी आपको यह सिर्फ एक वहम हो गया है। कोई बीमारी नही है आपके। मेरी समझ में कम-से-कम एक कहानी तो दे जाइए किसी को।"

"अब कुछ नही हो सकता। आज तो नही, कल जरूर आ जाएगा मनीआर्डर।"

हरीश कहने लगा—"किसी की इच्छा के विरुद्ध रोकना ठीक बात नही है। मेरी समझ मे जल्दी से रोटी पका लो, पडित जी भूखे हैं।"

चाय के बाद पडित जी ने रोटी खाई। हरीश ने पूछा—"पडित जी परसी बाबू के आने का समय हो गया। वे आपको सोया हुआ देखेंगे तो आपसे ज्यादे वहम उनको हो जाएगा। तबीयत कुछ ठीक तो हुई है आपकी ?"

"हाँ।"—भन्नन जी बिस्तर छोडकर कुरसी मे बैठ गए। हरीश ने उनका बिस्तर लपेटकर रख दिया।

सचमुच में कुछ देर में परसी बाबू आ पहुँचे कमरे में और फिर हरीश को अपने साथ बाहर बुला ले गए दरवाजे के पास। हरीश ने कहा—"पडित जी की तबीयत तो ठीक है। रात जागने से कुछ हरारत हो गई थी।"

"लेकिन मैंने सुना है ये ठीक आदमी नही। कल रात शराब के नशे में ये इधर मिस सरिता के कमरे में घुम गए और न-जाने क्या अंड-बंड बकने लगे। उसके नौकरो ने धक्का मारकर इन्हे बाहर निकाला।"

"मैने तो नही सुना।"—हरीश बोला।

"तुम पूछो उनसे।"—परसी ने कहा।

"जाने दीजिए साहब, कल को वे खुद ही जा रहे हैं।"

"पूछो तो सही । मैं भी तो जान लूं किसी ने मुझसे झूठी बात तो नही कह दी ।"

हरीश ने कहा—"जाने दीजिए ।"

परसी बाबू अच्छे आदमी थे, चुपचाप चले गए । हरीश जब भन्नन जी के पास गया तो उन्होने पूछा—"क्या कह रहे थे ?"

"वही कल वाली बात । अच्छा हुआ पडित जी आप बिस्तर में पडे नही थे ।"

कौशल कहने लगा—"तो पडित जी कल को जाना पक्का हो गया ?"

हरीश बोला—"रुपयो के हाथ बात है ।"

भन्नन जी ने कहा—"रुपए जरूर आवेगे ।"

कौशल को कुछ याद आई—"पडित जी आपकी पतलून ?"

"नही कौशल मैने पतलून के प्रयोग को असफल पाया ।"

"वह दरजी के यहाँ बन गई होगी ।"

"मै न जाऊँगा उसे लाने ।"

"उतना कपडा, मै जाकर ले आऊँ ?"—कौशल ने पूछा ।

"नही मै दो रुपए और सिलाई के देकर उसे नही लाना चाहता ।"

"उसे मुझे दे दीजिए, सिलाई मे खुद दे दूंगा ।"

भन्नन जी राजी हो गए । कौशल उसी समय दरजी के यहाँ से पतलून ले आया ।

रात किसी प्रकार कट गई । भन्नन जी को बुखार का कोई वहम नही जागा । दूसरे दिन फिर वही तार के मनीआर्डर की प्रतीक्षा आरंभ हो गई । एक-एक क्षण अब भन्नन जी को बबई में रहना भयानक हो गया । नाना प्रकार की कल्पना करने लगे वे—"और कोई दूसरा जेवर बेचना पडा होगा उसे । या वह स्वयम् ही न आ रही हो ?"

वे इसी सोच-विचार में पडे थे कि मनीआर्डर आ पहुँचा । किसी तरह इज्जत बचाकर जा सकूँगा इस विचार से भन्नन जी खुश हो गए ।

करीम चाचा ने पूछा—"अब कब लौटेंगे आप ?"

"देखिए चाचा जी अगर अच्छा हो गया तो।"

हरीश ने पूछा—"कुछ खरीदेंगे भी ?"

"कुछ नहीं।"

शाम की गाडी से बहुत पहले ही भन्नन जी स्टेशन पहुँच गए। हरीश, कौशल और करीम चाचा उन्हें पहुँचाने गए थे। विदा होते समय उनकी आँखें अश्रुपूर्ण थीं।

इक्कीस

पड़ोस के कुछ लडकों ने भन्नन जी को स्टेशन से आते हुए देखा तो दौडकर उनके घर आकर उन्होंने भग्गो जी को यह सुसमाचार सुनाकर अपनी मिठाई पक्की करा ली।

भन्नन जी बडे संकोच और पछतावे के भारी कदमो से चले जा रहे थे अपने घर को। वे सोच रहे थे मन में—"स्टेशन और मेरे घर के बीच का यह मार्ग दूर अनत तक चला गया होता और मैं दिन-रात इस पर चलता ही रहता! कितनी उमंगें लेकर मैं गया था, कैसे लौटा हूँ? अब भग्गो को क्या जवाब दूंगा, देखा जाएगा।"

मार्ग में परशुराम मास्टर मिले। बहुत बूढ़े हो गए हैं अब। लेकिन गंगा नहाने रोज जाते हैं। भन्नन जी के पुराने मास्टर थे। भन्नन जी ने उन्हें हाथ जोडे और कहा—"मुझे नही पहचाना आपने ?"

"क्यों नही पहचाना ? भानुदेव—लेकिन तुम तो बबई गए थे। क्या-क्या कर आए ?"

अनखाकर बोली—"आकर भी पूरे घंटे लगा दिए तुमने आने मे ? नदू और सभू घंटा-भर हो गया, तभी मुझसे कह गए थे तुम आ गए। कुली कहाँ है ?"

"कुली कही नही।"

"सामान ?"

"कुछ नहीं लाया, बस यही कबल और थैला ! दो-चार किताबें, इसके लिए कौन कुली करने की जरूरत थी ?"

"अरे तुम बबई से आ रहे हो ? मै क्या कहूँगी पास-पडौसवालो से। छोटे-छोटे बच्चे उनके, किसी के लिए खेल-खिलौने भी नही लाए। अरे तुम बबई से आ रहे हो ? कैसे कोई इस बात का विश्वास करेगा ?"

"अभी मेरा काम वहा पूरा कहाँ हुआ ? तुमने बीच ही में तार भेज-कर मुझे बुला क्यो लिया ?"

"ट्रक कहाँ है ?"

"वही रखा है। तुम्हारी तबीयत कैसी है ?"

"ठीक है। मैं कहती हूँ वहाँ जाने की अब जरूरत क्या है ?"

"वाह ! जरूरत कैसे नही है ? अधूरा काम वहाँ छोड आया हूँ, वहाँ वाले कहेगे भाग गया बीच ही में और यहाँ वाले बदनाम करेंगे बंबई तक जाकर कुछ नही कर सका।"

"कुछ कमाया-धमाया भी ?"

"आधे ही काम मे कौन कुछ दे देता ? तुमने तो बडी जल्दी मचाई। भग्गो, धोका देकर मुझे बुला लिया यह ठीक नही किया। तुम कुछ दिन और धीरज रख लेती।"

"चार महीने धीरज रखते-रखते हो गए उतने क्या कम है ? तुम्हें तो शरम भी नही आती, मुझे यहाँ अकेली छोडकर वहाँ बबई की सैर करने लगे। वहाँ से एक पैसा नही भेजा तुमने। मैं किस-किस के मुँह मे कपड़ा ठूँस देती ? कोई कहता तुम लडकर गए, कोई कहता भागकर। किसी ने कहा तुमने वहाँ शादी कर ली, कोई कहने लगा तुम बीमार पड़

गए। तभी तो मैने अपनी सोने की बालियाँ बेचकर तुम्हारे आने का खर्च भेजा।"

"लोगो की बातो मे पडकर बडा बुरा किया तुमने।"

"ऐसी क्या शकल हो गई तुम्हारी ? तुम्हे खाने को नही मिला क्या ?"

"शक्ल क्या हो गई ? तुम्हारी फिकर से ऐसा हो गया।"

"मेरी कुछ फिकर न करो, मैं ठीक हूँ, नहा-धो लो। मैं खाने को बनाती हूँ।"

भन्नन जी झूठ-मूठ ही पत्नी पर रोब जमा रहे थे। बबई मे पत्नी के उस तार के मनीआर्डर को भगवान् की भेजी हुई एक सहायता समझी, लेकिन अब बंबई छोडकर आ जाने पर फिर उसका आकर्षण बढ गया और वे फिर वहाँ अपना सघर्ष जारी रखने की सोचने लगे।

कुछ दिन बाद यह आकाक्षा और भी घनीभूत हो गई। गोपाल भन्नन जी से बडी आशा लगाए बैठा था। उनके इस तरह बबई से खाली हाथ लौट आने का उसे सबसे बडा दुख हुआ। भन्नन जी ने उनके इस प्रकार वापस आ जाने का दोषी गोपाल को भी ठहराया। अगर वह उस तरह उन्हें झूठा तार न भिजवाता तो वे हरगिज न आते।

गोपाल बहुत शर्मिदा होकर बोला—"मैंने बहुत समझाया था दीदी जी को वे मानी ही नहीं। उनका दिन-रात का रोना नही देखा गया मुझसे। आपने घर को कभी एक पैसा खर्च का नही भेजा। इससे दीदी जी ने यह अनुमान लगाया आप वहाँ बेकार ही बैठे है।"

"बेकार ही बैठा था, अच्छा सोचा। गोपाल तुमने क्यो उन्हे इस तरह सोचने में मदद दी। बिना कमाई किए ही मैं वहाँ चार महीने तक रह गया! बंबई का खर्च! ताज्जुब है, तुमने बताया नही उन्हे।"

"क्यो नही ? मैंने कहा। तो वे बोली, आप वहाँ फिजूलखर्ची करने लग गए।"

"फिजूलखर्ची करने को क्या मैं नादान छोकरा था कोई। गोपाल,

मै तो तमाम चीजे बबई जाकर छोड आया हूँ।"

गोपाल नही समझा, बोला—"ट्रक के सिवा और क्या ? तो उनके यहाँ लाने का क्या इतजाम होगा ?"

"ट्रक और उसके सिवा यह क्या कहते हो ? मैं कई वाहयात लतें वहाँ छोड आया। यही भग, तमाखू, चाय सब-कुछ। मैंने वहाँ यह तैजरबा किया, ये चीजे हमारी उन्नति की राह में बहुत बडी बाधाएँ है।"

"हाँ पडित जी, लेकिन मैने तो सुना है, साहित्य और कला की साधना मे कुछ ऐसी चीजें जरूरी है।"

"तुमने सुना है, मै तो देख भी आया हूँ, प्राय सभी को मैने किसी-न-किसी रूपमें इन लतों का शिकार ही पाया लेकिन गोपाल, मेरा ऐसा विश्वास वहाँ जाकर हो गया—ऐसी गदी लतोवाला साहित्यिक किसी स्वच्छ और सुन्दर-सत्य साहित्य या कला की सृष्टि नही कर सकता। किसी भी साधक की कला उसके चरित्र का ही प्रतिबिब है। तमाम लते मनुष्य की परवशता की साक्षी है। बंधन में पडा हुआ कोई प्रगति नही कर सकता। नशे की बेहोशी में हम सिर्फ भ्रम का अनुसरण करते है।"

"आपने चाय तो नही छोडी होगी ?"

"वह भी। कोई बधन नही रखा।"

गोपाल बोला—"यह तो बडी मुश्किल कर दी आपने। अब आप मेरे इस रेस्तोराँ की तरफ कोई ध्यान न देगे।"

"नही गोपाल, तुम्हारे भीतर जो मनुष्यता है, वह सब दिन मुझे तुम्हारी तरफ खीचती ही रहेगी।"

"यह आपकी कृपा है। बबई में क्या-क्या किया आपने ?"

पडित जी बोले—"करने को वहाँ बहुत है गोपाल। उतनी ही बडी भीड़ है। बात बनानेवाले, दिखावावाले, जान-पहचान-रिश्तेदारीवाले, पैसेवाले—बाजी मार ले जाते है और असली कलाकार रह जाते हैं। लेकिन हमेशा यही बात न रहेगी। कला की असलियत अवश्य ही प्रकाश

में आएगी, उसका अकुर इन स्वार्थवादियों की पक्षपात की शिलाओ को तोडकर बाहर निकल आएगा।"

"किसी को सुनाई आपने अपनी कहानी ?"

"वहाँ कहानी सुनने का अवकाश ही किसे है ?"

"अच्छा, फिर किस चीज के लिए है अवकाश ?"

'बडी सस्ती भावुकता के लिए।"

"वह कैसी ?"

"रूप और सिंगार की, रस और रसना की, विलास-लोलुपता, केवल सतह पर ही रह जानेवाले सगीत और दृश्य-कला की। समय का अभाव उनका बहाना है। मैं कहता हूँ अधिक देर तक वे एकाग्र हो नही सकते।"

"कोई कहानी लिखी आपने ?"

"सच कहूँगा गोपाल, तुमसे। वास्तविकता तो ऐसी है मैंने कोई कहानी नही लिखी। मै कई प्रकार के प्रलोभनो में पड गया वहाँ। सब पाखड-ही-पाखड। अपने चरित्र की कमजोरी थोडे से शब्दों में कह दी मैंने। और विस्तार से सुनना चाहोगे, तो वह भी कह दूँगा।"

गोपाल संकोच में पडकर बोला—"नही पडित जी, और क्या जरूरत है ?"

"बहुत बडी पराज्य पाई मैंने बंबई में। खूब अच्छी तरह मेरा अहंकार वहाँ पददलित हुआ। वहाँ कुछ न लिख सका मैं, यही नही जो कुछ मेरा लिखा था, उस पर भी मेरा जो कुछ अभिमान था वह सब मिट्टी में मिल गया।"

"नही, ऐसी बात नही है। आपकी बहुत सी किताबें स्थायी साहित्य की संपत्ति है।"

"झूठी बात ! गोपाल एक अक्षर भी तुम्हारी बात का सही नही है। देखो खुशामद बहुत बडी चीज है। यह खुशामद करनेवाला और जिसकी खुशामद की जाती है—इन दोनों को ही पतित करनेवाली है।

गोपाल, साहित्यकार का बहुत भारी उत्तरदायित्व है, जबतक वह इन व्यसनों में पडा रहेगा, वह उन्नति नही कर सकता।"

गोपाल बडे अचरज मे पडित जी को देखने लगा।

"शायद मेरे व्यसन शब्द पर तुम्हे कोई आपत्ति हो गई है। हाँ, यह व्यसन है। मैं इसे आत्मा का रोग मानता हूँ। जबतक साहित्यिक के हर प्रकार की पवित्रता न जागेगी उसे दर्शन प्राप्त न होगा।"

"दर्शन कैसा ?"

"कल्पना का और कैसा ? इसपर अधिक बात करने का अधिकारी नही समझता मैं अपने को क्योकि कुछ प्राप्त होने पर ही मनुष्य किसी को कुछ दे सकता है। गोपाल, था तो मेरे पास कुछ नही, फिर भी जो भी खाली डिब्बे थे, उन सबको मैं बंबई के महासमुद्र में समाधि दे आया हूँ।"

गोपाल मन मे सोचने लगा—"इन्हें बबई में कोई भारी चोट पहुँची है।"

"सब अच्छा ही होने वाला है। मेरे मानस में क्षितिज का विस्तार हुआ है, मुझे अपने पोलेपन का विश्वास हो गया, मुझे अपनी दुर्बलता दिखाई दे गई। गोपाल यह बोध छोटी सप्राप्ति नही है। यह बंबई जाकर ही मुझे मिली। साहित्य एक अतर-प्रकाश है, मैं उसे एक दिन प्राप्त करूंगा।"

"बबई जाने का विचार है फिर ?"

"अभी नही, वहाँ की भीड और वहाँ की कशमकश में बुद्धि की स्थिरता नही है साधारण मनुष्यो के लिए। यही कुछ चेष्टा करूँगा। अब मुझे तुम आज्ञा दो मैं राम बाबू के पास जाऊँगा।"

"कौन राम बाबू ?"

"तुम नही जानते उन्हे। साहित्य और कला के बडे पारदर्शी विद्वान् है।"

"कौन-कौन-सी किताबें लिखी है उन्होने ?"

"किताबें तो कोई नही लिखी है। वे एक दार्शनिक हैं। किताबें लिखने के इतने पक्षपाती नही हैं। वे कहते हैं दुनिया मे इतनी किताबो का ढेर है। मैं भी क्यो दो-चार किताबें लिखकर उसकी भीड़ बढ़ादूँ। वे बडे अध्ययनशील हैं। मुझे बबई जाने की पहली राय उन्होंने ही दी थी। बबई की अपनी इस पराजय का समाचार मुझे उन्हें देना ही चाहिए।"

गोपाल बोला—"चाय न सही, मैं आप के लिए एक गिलास दूध का बना देता हूँ।"

"नही गोपाल, तुम्हारा चाय का धदा है, उसके लिए कम पड जाएगा।"—भन्नन जी उसे हाथ जोडकर विदा हो गए।

राम बाबू श्री सपन्न व्यक्ति है। गाँव हैं उनके। शहर में अपना मकान है उनका। एक बँगला भी है उसे किराए पर उठाते हैं। खाने-पीने की कोई चिंता नही है। पढे-लिखे हैं, भारत और विदेश की भी कई भाषाएँ जानते हैं। कभी नौकरी की कोई आवश्यकता नही समझी। गाँव के असामी और किराएदारो की बकझक के बाद जो भी समय मिलता है उसे अध्ययन मे ही बिताते हैं।

थोडी-बहुत प्राकृतिक चिकित्सा मे भी दिलचस्पी रखते हैं। गाँववाले ही नही, पास-पड़ौस के बहुत से लोग उनके इलाज में आस्था रखते हैं। कभी किसी से कोई पैसा नही लेते। गरीब लोगो को तो पथ्य और भोजन के लिए भी अपनी गाँठ से देते रहते हैं।

इसके अतिरिक्त हर एक को, वह माँगे या नही, उचित सलाह देने का उन्हें बड़ा शौक है। उनकी इसी वृत्ति पर भन्नन जी को बम्बई जाने का मार्ग दिखाई पड़ा था।

रामबाबू छत पर आरामकुर्सी पर बैठे थे। उनका एक पैर कुर्सी के तख्ते पर विश्राम पा रहा था। बगल में फर्शी रखी हुई थी और उसकी रबर की नली उनके हाथ में। पुस्तक की गहराई मे प्रविष्ट जान पडते थे वे, क्योकि नली उसी प्रकार हाथ मे होकर रह गई थी। नौकर

ने जाकर खबर दी—"पंडित भानुदेव जी आए है।"

रामबाबू वही से चिल्लाए—"पडित जी ! आइए, आइए। आप के आने की खबर तो सुनी थी।"

नौकर ने उनके लिए एक कुर्सी रख दी। भन्नन जी ने ऊपर आकर उन्हे अभिवादन किया और कुर्सी पर बैठ गए। नौकर हुक्का ताजाकर रख गया। रामबाबू ने किताब का पुस्तक-चिन्ह खिसकाकर आगे को रख दिया—"हाँ पंडित जी, क्या-क्या कर आए बम्बई ? आप तो जल्दी ही लौट आए ?"

"कुछ नही कर सका ! जो कुछ किया धरा था, उस पर भी पानी फिर गया !"

"मैंने आपकी लिखी क़िताबें तो पढी नही है। आप जानते ही है, मुझे उपन्यास पढने का जरा भी शौक नही है। लेकिन असफलता कोई दुख की बात नही है, उसी पर तो अन्त में सफलता खडी होती है।"

"हाँ यही विश्वास मेरा भी है।"

"तो ठीक है, जब इस विश्वास को ठेस पहुँच जाती है, तब फिर मनुष्य का सब-कुछ समाप्त हो जाता है। असफलता, असफलता और फिर असफलता ! असफलताओं की आवृत्ति ही मनुष्य को सच्चा प्रकाश देती है। मनुष्य के भीतर अनन्त शक्तियो का भंडार है। लो तमाखू पियो।"

"नही श्रीमान जी।"—हाथ जोड़ते हुए भन्नन जी बोले।

"आप तो पीते थे ?"

"मैने छोड दी।"

"भंग भी तो पीते थे आप ?"—हँसकर रामबाबू ने पूछा।

"हाँ, वह भी छोड दी।"

"क्यो ?"

"वह ठीक बात नहीं है। अंधविश्वास के ऊपर कला नही पनपती, मैं समझता हूँ नशा कलाकार का सबसे बडा अंधविश्वास है।"

"बहुत दिनों से आप भंग पीते आए। एकाएक उसे छोड़ देने की

क्या सूझी ? मेरा ख्याल है नशे का उपयोग एक अंधविश्वास है तो उसकी घृणा दूसरा अंधविश्वास ।"

"श्रीमान आप यह क्या कहते है ? मै साहित्य की साधना के लिए पूरी शक्ति से चेष्टावान हूँ। आप क्यो मुझे बहका रहे हैं ?"

"साधना मे चेष्टा क्या है ? सहजता होनी चाहिए। चेष्टा दिमाग की एक उलझन है। जब तक दिमाग मे ये तरह-तरह की उलझनें रहेंगी तुम्हारे मन मे चित्र प्रकट न होगा।"

भन्नन जी ने रामबाबू के हाथ जोडकर कहा—"श्रीमान, आपने जो यह आखिरी वाक्य कहा मै इसे समझा तो नही हूँ, लेकिन कुछ-कुछ इसके निकट तक पहुँचा हूँ। क्या है यह चित्र ?"

"समझा मै भी कुछ नहीं हूँ। कुछ पढी हुई बातें तुमसे कह देता हूँ। हम हरएक की बातें नही समझ सकते। मेरी एक बात पर तुम्हारे विश्वास बढा है। इसलिए जरूर तुमसे वह आगे को कह देनी पडी। अगर तुम्हारे हृदय मे उस स्वर की झकार न मिलती तो वह बात तुम्हारे सामने नही खुलती। सुनो एक दार्शनिक कहता है, जब वह कोई पुस्तक लिखना चाहता है तो बीस-तीस पृष्ठ लिखने तक उसको बडा संकोच और बडी झंझट जान पडती है। इसके बाद ऐसा जान पडता है, मानो वह पुस्तक कही लिखी हुई रखी है और वह केवल उसे देख देखकर उसकी नकल करता जा रहा है। यही उस मन के चित्र की व्याख्या है।"

"कुछ न समझकर की आपकी बात समझा हूँ।"

"मन में कोई जटिलता पैदा न करो तभी सहजगति प्राप्त हो जाएगी। मनोविज्ञान ने चेतन और उपचेतन नामक जो मन के स्तर बनाए हैं इनमें यह उपचेतना बडी रहस्यमयी है। मेरी समझ में इसका जागरण ही कला का जागरण है। यह स्वप्न शक्ति है। मन के अंधकार में अंकित चित्र ही तो स्वप्न है। पडित जी हम समझते है हम आँख खोलकर बाहर देखते है। आँख के भीतर अगर चित्र न होते तो स्वप्न कहाँ से आते ?"

भन्नन जी चुपचाप सिर हिलाने लगे ।

"स्वार्थ हमारा बहुत बडा शत्रु है । कला की साधना बिल्कुल धार्मिक साधना के ही समकक्ष है । दोनो ही ध्यान-योग से सम्बद्ध हैं । कला मूर्ति पूजा है इसलिए उसका दर्जा निराकार साधना से छोटा है ।"

"मैं भी यही समझने लगा हूँ । आम तौर से कला विषय-वासना की वस्तु बना ली गई है ।"

"स्वार्थ की भावना से ही हमारे भय की भावना जाग उठती है । सारे जगत के कल्याण की भावना जिसमें है, उसके कोई भय नही जागता । जिसके भय नही उसका कोई मार्ग अवरुद्ध नही । चारो दिशाएँ उसकी प्रगति के लिए मुक्त है ।"

"आपने मेरी आँखे खोल दी है । सबसे बडा हमारा शत्रु स्वार्थ है । लोभ और क्रोध भी इसी के कारण उपजते हैं । अब आप मुझे मार्ग बताइए मैं क्या करूँ गुरुदेव ।"

"पडित जी, कितना बडा दायित्व आपने मेरे ऊपर रख दिया । मेरा अहंकार बढा दिया । विचार की एक लहर मुझे प्राप्त हो गई थी । वह टूट गई, अब शायद मै ठीक-ठीक बोल न सकूँगा ।"

"नही, ऐसा न कहिए । मै आपकी शरण हूँ ।"

"मै कुछ भी नही जानता, क्या बताऊँ तुम्हे ।"

"वे स्वप्न के चित्र कैसे हाथ लगें ?"

"मस्तिष्क की सारी जटिलता निकाल दो, हृदय में सारी सृष्टि के प्रेम की भावना रखो—तब अनायास ही तुम्हें सहजगति प्राप्त हो जाएगी ।"

"आपने मेरी तमाम शकाएँ नष्ट कर दी । बम्बई भेजकर आपने मेरी दुर्बलताओं को दिखा दिया और यहाँ मेरे स्वरूप का ज्ञान करा दिया । मैं सदैव ही आप का ऋणी रहूँगा ।"

भन्नन जी रामबाबू से विदा होकर घर को गए ।

बाईस

जिस प्रकार चुम्बक के दोनों ध्रुवों के बीच में एक तार के घूमने से बिजली की अटूट धारा प्रवाहित हो जाती है, ऐसे ही भन्नन जी हाथ में लेखनी लेकर बैठ गए बाहर-भीतर के दो ध्रुवों पर चलायमान साँस ही वह चुम्बक थी। विचार की बिजली अपनी अखंड धारा में उन्हें प्राप्त हो जाएगी, इस चैतन्यता को लेकर वे लिखने बैठे। सोचते ही रह गए कई दिन तक। कुछ न लिख सके।

मन में काँटे की तरह गडा हुआ वह सबसे भयानक जीवन का अपमान था। वह एक एक्ट्रेस के हाथ का थप्पड़! उसी के चारों ओर वे साँस के दोनों ध्रुव घूम रहे थे। उस अपमान ने उनकी एकाग्रता तो जरूर साध दी थी। अब उस अपमान को भुला देना ही प्रश्न था।

लेकिन वह अपमान भूला कैसे जाए! भन्नन जी ने सोचा—"इसे मैंने अपने मन में संचित कर रख दिया है। अगर वह लोगों पर प्रकट कर दिया जाएगा तो भूला जाएगा अपने-आप।"

अब उसे प्रकट कैसे किया जाए ? वे सबसे पहले जाकर राम बाबू से कह आने की सोचने लगे। इतने ही मे भग्गो जी आ पहुँची। उन पर भन्नन जी का ध्यान चला, सोचने लगे—"सबसे पहले इन्ही से क्यो न कहा जाय ? केवल एक इनसे कह देने से ही सम्भव है सर्वत्र यह बात फैल जाए।"

भग्गो जी आकर बोली—"मै कहती हूँ, आखिर अब तुमने क्या सोचा है ? थोडा-बहुत अपना दिन-भर काम करते थे, ठीक था। बम्बई की चुपडी पूरी की आशा मे हाथ की रूखी आधी भी गँवा बैठे हो।"

भन्नन जी ने प्रीतिपूर्वक उनकी तरफ देखकर कहा—"भग्गो जी, यह तो तुम्हारा भय है, निरन्तर इसका काला रूप चिंतन मे रखने से यह सामने प्रकट हो जाता है। नही तो जो मनुष्य दिन भर काम करता रहेगा, उसे कभी दाने-कपडे के लिए भीखना नहीं पडेगा।"

"क्या दिन भर कामकर रहे हो तुम ? केवल कागज-कलम सामने रखे बैठे रहते हो ? कब तक मेरे गहने बेचकर खाए जाएँगे ?"

"जब तक चिंता को न छोडोगी।"

"यही सीखकर आए हो बम्बई से, सब कुछ गँवा आए वहाँ धरम-करम कुछ भी बाकी नही रखा। मै कहती हूँ, सुबह-शाम कुछ देर भगवान का भजन करते थे, वह भी सब चौपट हो गया।"

"यह जो दिन भर लिखने के विचार मे रहता हूँ इसे तुम क्यों नही सध्या-पूजा मानती हो। वह सध्या-पूजा केवल एक पाखड था। नाम उसका भगवान् का स्मरण था, पर उस समय याद कुछ दूसरी बातें आती थी। साहित्य और कला की साधना बिलकुल एक धार्मिक चीज है।"

"राम ! राम ! सबके हाथ का खा आए ? कपड़े पहनेकर।"—भग्गो ने बडी घृणा का मुँह बनाकर कहा।

"तुम खाना खाने की बात कहती हो वह तो कोई बात नहीं है। मैं तो उसके हाथ का चपत खा आया।"

"किसके हाथ का ?"—तमककर भग्गो बोली।

"वह आत्मा का अपमान, भूल जाने के लिए ही तुमसे कह रहा हूँ।"

"मैं पूछती हूँ किसने लगाया तुम्हारे चाँटा ?"

"एक एक्ट्रेस ने।"

"कोई बदतमीजी की होगी ?"

"हाँ, शराब के नशे में।"

भग्गो चिल्ला उठी—"तुमने शराब पी ?"

"क्यो इतने ताज्जुब मे क्यो हो गई ? भग तो रोज ही पीता था। वह क्या नशा नही है ? उसे धार्मिकता क्यो समझती हो ?"

भग्गो का मुख तमतमा उठा—"किस-किसके सामने मारा ? गोपाल का दोस्त भी था ?"

"नही वे कोई न थे। इसी से तो वह अपमान हृदयबेधी हो गया। तुमसे इस लिए कह दिया कभी हमारे बीच में कलह हो जाने पर अगर तुम मुहल्ले की एक स्त्री से भी कह दोगी तो यह बात सारे नगर में फैल जाएगी और मेरे हृदय का भार कम हो जाएगा।"

पत्नी ने बडी दया की दृष्टि से उन्हे देखा—"अब तुम भग इसी लिए नहीं पीते क्या ? उस पाप के प्रायश्चित्त के लिए ?"

भन्नन जी ने कोई जवाब नही दिया। ऐसा जरूर जान पडा जैसे उनके मस्तिष्क मे कोई गहरी गडी हुई कील ढीली पड गई थी। उन्होने सोचा—"क्यो न यह कहानी लिखी जाए ? इससे और यह हृदय का बोझ बाहर खुल पड़ेगा। कोरी कल्पना मे इतना उभार और इतने रग नही आ सकते जितने एक देखी-सुनी, अनुभव में आई हुई घटना को लिखने में।"

भन्नन जी ने अपने अहकार को दलित कर दिया। निश्चय, आरम्भ और उद्योग तिरोहित हो गए, लेखनी चल पडी। वे एक वाक्य लिखते दूसरा वाक्य अपने-आप बिना प्रयास ही उनकी आँखो के आगे चमक उठता।

सरिता के चाँटे को जब भन्नन जी ने अपनी पत्नी के सामने प्रति-

ष्ठा दे दी, नगरवासियों के आगे उसके खुल जाने में भी उन्हे कोई लज्जा नही रही और संसार की आँखों के लिए भी उस घटना को अक्षरबद्ध कर देने मे जरा भी हिचकिचाहट न रही तो विचार-मण्डल में कुछ नई लहरें प्रवाहित होने लगी।

× × ×

सरिता की मोटर फाटक के भीतर घुसी, हरीश उसके दर्शन के लिए अपने ऑफिस के दरवाजे से हटकर उसकी सीढियो के पास आ गया।

चारो ओर उसके वस्त्र और अग में बसी हुई सुगन्ध बात में फैल चली। रूप के मद में अस्थिर पैर उसने नृत्य की भगिमा पर अपनी सीढी पर रखे और उछलती हुई सीढियो पर चढने लगी—हरीश ने बड़े अदब और कायदे से उसे हाथ जोड़े।

'आपकी कृपा होनी चाहिए सेवकों पर।"

सरिता फिर हँसी। हँसकर बडे नखरे से सिर में एक प्रकम्पन दिया और मुख की तरफ आए हुए केश-जाल को पीछे डाल दिया।

"सुना है आपने किसी नई पिक्चर का कन्ट्राक्ट किया है।"—हरीश ने पूछा।

"नही तो।"—हवा से उड़कर फिर मुँह पर आ गई अलकों को उसने इस बार हाथ से पीछे को कर दिया।

"फिर क्या बात-चीत चल रही है?"

हरीश उसका मतलब समझकर बोला—"सुना है बहुत अच्छे ऑफर आपको मिल रहे हैं।"

"सिर्फ पैसा ही तो कोई चीज नही है। कलाकार के कला की प्यास बडी होती है। जबतक अपने मन का साथी न मिले, कला नही उभरती।"

फिर चुप रहा गया हरीश।

सरिता बोली—"आजकल तुम्हारे वे स्टोरी-रायटर पंडित जी नही दिखाई दे रहे हैं।"

"वे अपने घर चले गए।"

'क्यो ?"

"उनकी [redacted]ली बीमार हो गई थी, तार आया था। क्या कुछ काम था उनसे ?"

"हाँ, मैं उनसे एक स्टोरी लिखवाना चाहती हूँ। वह बिचारे बडे सीधे आदमी जान पडे मुझे।"

हरीश ने मन में वह घटना याद कर सोचा—"क्यो नही, चुपचाप तुम्हारे चाँटे को सह गए मुँह से चूँ तक न की।"

सरिता बोली—"तुम उन्हे चिट्ठी लिखते हो ? उनका पता मालूम है?"

"हाँ, पता मालूम है।"

"उनके लिए लिख देना सरिता तुम्हे याद कर रही है।"—कहती हुई सरिता ऊपर चली गई।

सरिता ने समझा था, एक प्रसिद्ध एक्ट्रेस का किसी को यह लिख देना कि याद कर रही है। कौन इस पर भागा हुआ नही चला आएगा।

हरीश को भन्नन जी का पता ज्ञात नही था लेकिन गोपाल उसका मित्र था। उसने यह बात गोपाल के लिए लिख दी।

भग्गो ने बम्बई से लौट आने पर भन्नन जी को बिल्कुल परिवर्तित पाया। उनके स्वभाव में बडी सौम्यता प्रकट हो गई। प्राय. हर समय लिखने ही के काम मे व्यस्त रहने लगे। खाने-पीने के बडे शौकीन थे वे पहले, वह रस-लालसा जाती रही अब उनके। जो मिल जाता, उसी में

तृप्ति अनुभव करने लगे।

पेट के लिए कुछ करना ही था। फिर अपनी पुरानी वृत्ति सम्भाली और उपन्यास लिखने शुरू किए। खाने-पीने की चिन्ता से मुक्त होकर उन्होंने अपनी चरितात्मक कहानी पर विशेष ध्यान दिया।

भग्गो बडी दयनीय दृष्टि से उन्हे देखने लगी। एक दिन बोली—"बम्बई मे आखिर तुमने कुछ तो किया होगा इतने महीने बिताकर?"

"हाँ भग्गो, किया तो बहुत कुछ। लेकिन—"

"फिर जाकर उस काम को पूरा करने की इच्छा नही होती? अगर ऐसा है, तो रुपयो की कोई चिन्ता न करो मैं कही से उधार माँगकर ला सकती हूँ सौ-पचास रुपए। तुम्हारे लिए कोई जेवर और भी बेच दिया जा सकता है।"

"लिखने का काम यहाँ भी हो सकता है, यहाँ लिख रहा हूँ।"

"वहाँ जाने की जरूरत पड जाए तो कोई सकोच मत करना।"

शाम को गोपाल आकर बोला—"कहाँ हैं पडित जी ?"

"राम बाबू के यहाँ गए थे। उन्हे अपना लेख सुनाने, बैठो आते होगे।"

"मैं होटल छोड आया हूँ, कोई नही है वहाँ।"

"कोई जरूरी काम था क्या ?"

इतने मे पडित जी आ पहुँचे। गोपाल ने जेब से हरीश का पत्र निकालकर पढ़ा—"सरिता जी चाहती है पडित जी उनसे मिलने यहाँ चले आएँ। वे उनसे एक कहानी लेने का विचार कर रही हैं। मैं समझता हूँ यह एक सुनहरा अवसर है इसे हरगिज नही खोना चाहिए।"

भन्नन जी क्षीण हँसी के साथ बोले—"कुछ अपमान शायद और बाकी रह गए हैं।"

"गोली मारो इस चुडैल को।"

"नही, नही ऐसा न कहो। इन्होने मुझे बडा सही मार्ग दिखाया है। गोपाल खुशामदियो की झूठी तारीफ से हमारा पतन हुआ है लेकिन इस अपमान ने ठोकरो से भरे मार्ग को प्रकाशित कर दिया। मेरे मानस मे सोई हुई प्रतिमा को इसी ने जगा दिया। मैं तो इनके लिए बड़ी शुद्ध भावना रखता हूँ।"

भग्गो बोली—"तुम बडी शुद्ध भावना रखते हो, मैं होती तो उस मुँहझौसी की चुटिया पकडकर नाक रगड देती जमीन पर।"

"घृणा से घृणा बढती है। अगर मैं भी उनसे वही घृणा रखता तो हरगिज़ ऐसा पत्र नही आता। मैंने उनके लिए बड़ी आदर की दृष्टि रखी है। इसी का यह प्रतिफल है उनकी आत्मा में मेरे लिए पश्चाताप उत्पन्न हुआ है और वे इस तरह मुझे मनाना चाहती हैं।"

'हैं! तुम जाओगे। नही, मैं नही जाने दूँगी तुम्हे।"—भग्गो बोली।

"दीदी, उसका बडा प्रभाव है। जब उसके मन मे पछतावा हुआ है तो तुम्हे पडित जी को रोकना उचित नही है। मैं समझता हूँ यह मौका छोडने लायक नही है। क्यो पडित जी!"

"अभी तो कहानी लिख रहा हूँ।"

भग्गो बोली उनका हाथ पकडकर—"नही, मैं नही जाने दूंगी तुम्हें उसके पास।"

भन्नन जी हँसकर बोले—"अभी कौन जा रहा है?"

गोपाल बोला—"दीदी जी, सोच-समझकर इस बात का फैसला करना ठीक होगा। पडित जी आप समझदार हैं। आपको पता मालूम ही है, आप स्वयम् चिट्ठी लिख देंगे तो ठीक रहेगा। मैं फिर रात को आपसे मिलूँगा होटल बद कर घर को लौटते समय।" गोपाल चला गया।

हरीश के पास कुछ दिन बाद भन्नन जी का पत्र पहुँचा। उसमें लिखा था—"मिस सरिता जी ने जो अवसर मुझे दिया है उसके लिए मैं उनका आभारी हूँ। कहानी लिख रहा हूँ। यहाँ का वातावरण उसके

लिखने में उपयुक्त है। बबई की भीड और शोर-गुल मे मुझे कुछ नही सूझता।"

हरीश ने सरिता के पास जाकर जब यह पत्र सुनाया तो वह कहने लगी—"हाँ, ठीक लिखते हैं तुम्हारे यहाँ उस कमरे मे लिखने-पढने का कोई सुभीता नही है। हरीश, हमारे यहाँ दफ्तर में उनके लिखने के लिए क्या बुरी जगह है ?"

हरीश मन में सोचने लगा—"पडित जी के भाग्य का सितारा उदय होनेवाला जान पडता है।" वह बोला—"वह तो बढिया जगह है।"

"खाने को तुम्हारे साथ खा लेंगे या किसी होटल में इतजाम हो जाएगा। लिख दो वे आ जाएँ यहाँ। अब क्या दिक्कत है उन्हे ?"

"कोई नही।"

"अब उन्हे आ जाना चाहिए फौरन्।"

"मैं तो समझता हूँ वे आ जाएँगे।'

"हरीश, यहाँ कहानी लिखनेवालो की कमी नही है। एक नोटिस देने पर सैकडो कहानी-लेखक हजारो कहानियो का बोझ सिर पर लेकर मेरे दरवाजे पर भीड लगा दें। लेकिन मैं चाहती हूँ मैं उन्हे कुछ काम दूँ। मैंने उन्हें यहाँ आते-जाते देखा है। उनके ईमानदार और मेहनती होने का मेरा यकीन है। यही सब बातें तुम लिख दो उनके लिए।"

"लिख दूँगा अभी।"

यथासमय हरीश की चिट्ठी इस बार सीधे भन्नन जी के पास पहुँची। भग्गो बोली—"इतने का तो इतजाम कर दिया लेकिन आने जाने के खर्च का नाम नही ले रही है, बडी चालाक औरत जान पडती है।"

"आने-जाने का खर्च बडी आसान वस्तु है भग्गो। वहाँ तो सबसे बडा प्रश्न रहने का स्थान है।"

"तो आने जाने का खर्च मैं देती हूँ।"

"तुम भी आज मेरे वहाँ जाने के पक्ष में हो गई हो।"

"गोपाल भैया कहता है, जरूर जाना चाहिए। अब तो कहानी तैयार

हो गई है न ?"

"कहानी तो तैयार हो गई भग्गो, लेकिन मेरी इच्छा बिलकुल नही है वहाँ जाने की।"

"क्यो ? क्यो ?"

"साहित्य का दूसरा ही दृष्टिकोण मुझे प्राप्त हो गया है और इस झूठी प्रसिद्धि में आने की लालसा बिलकुल नही रही मेरे।"

"प्रसिद्धि न सही, हमे गुजर के लिए तो कुछ चाहिए ही।"

"गुजर के लिए भगवान् दे ही रहे हैं। वह सब तुम्हारा लालच है। उसे दूर करो। हरीश ने लिखा है, प्रेम मर गया। वह मेरा दोस्त, उस का बुखार मेरे भी कही चिपट जाता तो ?"

अम्मे भन्नन जी की बातो को सुनकर चुप रह गई। इसी समय तार का चपरासी आ पहुँचा, वह एक सौ रुपए का एक तार का मनीआर्डर ले आया उनके नाम। उसमें लिखा था—"फ़ौरन बबई चले आओ यह राह खर्च भेज रही हूँ। तुम्हारे रहने का भी इतजाम मेरे साथ ही है।—सरिता।"

भन्नन जी ने तार के मनीआर्डर मे लिख दिया—"लेने से इन्कार है।" भग्गो भीतर चली गई थी। वह जब वापस आई तो बोली—"अब तो खर्च भी आ गया, जाना ही पडेगा।"

"मनीआर्डर तो लौटा दिया मैंने।"

"बहुत भारी गलती की।"

"नही भग्गो, मेरे जाने का कुछ काम नही। हाँ, कहानी भेज देता हूँ डाक से।"

भन्नन जी ने बडा विनम्र पत्र लिखा सरिता को—"आपने मुझे बबई आने के लिए सभी सहयोग दिए है। मै इसके लिए आपका अत्यत कृतज्ञ हूँ। मैं आपकी सेवा के लिए यहाँ सदैव ही तैयार रहूँगा। मुझे बबई आने की जरा भी इच्छा नही है, आशा है आप मुझे इसके लिए क्षमा करेगी। आपने उस रात को मेरे चाँटा मारकर मेरी आँखे खोल

दी इसके लिए मैं हमेशा के लिए आपका ऋणी हूँ।"

सरिता ने उस घटना को याद कर अपने मन में कहा—"यह मनुष्य बडा अजीब जान पडता है। मैंने उस रात को बडा जुल्म किया, वह चोट मैंने उसके नही अपने मारी है। मेरे दिल में उसका बडा गहरा घाव हो गया। वह आसानी से भर न सकेगा।"

सरिता ने हरीश को बुलाकर कहा—"तुम्हारे पडित जी बडे जिद्दी जान पडते है। उन्होने तार का मनीआर्डर लौटा दिया।"

हरीश के मुँह से निकल पडा—"वे शायद उस बेइज्जती को नही भूले है।"

सरिता ने पूछा—"कौनसी बेइज्जती ?"

हरीश चुप खडा-खड़ा सिर खुजाने लगा।

"हरीश, कौनसी बेइज्जती ?"

"उस रात को जब आपने उनके चाँटा मारा।"

"नही, उसे वे भूल चुके हैं। यह देखो उनकी चिट्ठी है।" सरिता ने हरीश को चिट्ठी पढा दी।

"कहानी भेजी है ?"

"हाँ, कहानी भज दी है, मैंने पढी है मुझे पसद है। मैं उसे निकलवाने की कोशिश करूँगी।"

"क्या नाम है उसका ?"

"तारो के सपने।"